सुबोध काव्य-माला

(२)

सम्पादक

रामलोचनशरण बिहारी

९८२०

निर्माल्य

रचयिता—कविरत्न मोहनलाल महतो गयावाल

यदि आप विश्वकवि श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर की 'गीतांजलि' के ढंग की मौलिक कविता पुस्तक देखना चाहते हैं तो इसे एक बार अवश्य पढ़िये। इसके शब्द शब्द से आध्यात्मिक तल्लीनता टपकती है।

हिन्दी के सुप्रसिद्ध समालोचक पं० जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी इसकी भूमिका में लिखते हैं—

'श्री गयाधाम के गौरव, गयावाल वंशावतंस, ललित कला कुशल, 'वियोगी' पंडित श्री मोहनलाल महतो के लिये लम्बी चौड़ी भूमिका की आवश्यकता नहीं, क्योंकि शब्दचित्रों की विचित्रता के कारण वह स्वयं प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं। महतोजी की महत्त की सत्ता यों ही जम गई है और उनकी प्रतिभा का परिचय अ... पत्र पत्रिकाओं के द्वारा प्रायः सबको मिल चुका है। इसलिये अब कहना केवल यही है कि इस नवीन 'निर्माल्य' के निरीक्षण ... सुरसिकों को सन्ताप हुए बिना न रहेगा। निरवद्य पद्य रचना चातुर्य और माधुर्य के अतिरिक्त सुन्दर सूझ, कमनीय कल्पना, भव्य भाव तथा नूतनत्व के निदर्शन का दर्शन स्थान स्थान पर हो जाता है। सचमुच यह संग्रह सुन्दर और सराहना के योग्य हुआ है।

लगभग १४० पृष्ठ। दो चित्र। मोटे कागज पर सुन्दर छपाई पक्की जिल्द। मूल्य केवल १)

पुस्तक भंडार, लहेरियासराय और पटना।

प्रकाशक

पुस्तक-भंडार, लहेरियासराय

प्रथम संस्करण पौष १९८२ वि०

मूल्य २)

द्वितीय संस्करण, वैशाख १९८८ वि०

मुद्रक—हनुमान प्रसाद, विद्यापति प्रेस, लहेरियासराय

समर्पण

हिन्दी के उन सफल समालोचकों के कुशल करों में

जो अपने फतवे को अकाट्य और अलंघनीय साबित करने के लिए
'नवरत्न' में दम रख घुमेड़ सकते हैं,
जो 'देव' को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिये 'बिहारी' को,
एवं बिहारी को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिये
कितने अन्य कवियों की
कीर्त्ति पर
सफाई के साथ पर्दा डाल सकते हैं,
जो किसी विशेष कवि के श्रद्धालु समर्थकों को
नीचा दिखाने के लिये
दास को आकाश पर चढ़ा सकते हैं
तथा
जो केशव की कविता में तुलसी की कविता से
अधिक काव्य गुण पाते हैं—

अभिनव जयदेव

मैथिल कोकिल

विद्यापति की पदावली

का

यह संक्षिप्त संकलन
उसके नौसिखे संकलयिता द्वारा

सादर, सविनय और सभय समर्पित

हमारी सर्व-प्रशंसित पुस्तक-मालायें

राष्ट्रभाषा हिन्दी के सभी विभागों को उत्तमोत्तम ग्रन्थ रत्नों से पूर्ण करने के लिये हमने निम्नलिखित पुस्तक मालायें निकालना आरम्भ किया है।

आपका कर्त्तव्य

है कि हमारी इन मालाओं को अपना कर राष्ट्रभाषा की अधिकाधिक सेवा करने को हमें उत्साहित करें। आपके सुभीते के लिय हमने यह प्रबन्ध किया है कि जो महाशय ॥) फीस भेजकर हमारे स्थायी ग्राहक हो जायँगे, उन्हें

सभी मालाओं की पुस्तकें पौने मूल्य में

ही मिलेंगी। हमें पूरा विश्वास है, कि आप यह मौका न चूकेंगे।

हमारी सर्वांगसुन्दर मालायें—

१ सुबोध काव्य माला
२ सुन्दर साहित्य माला
३ बाल मनोरंजन-माला
४ महिला मनोरंजन माला
५ नवयुवक हृदय हार
६ सरल पद्य-माला
७ चारु चरित माला

पुस्तक भंडार, लहेरियासराय पटना

मैथिल कोकिल



कोकिल की कलकटता कितनी मधुर, कितनी सरस और कितनी हृदय-ग्राहिणी होती है, इसका परिचय इसीमें मिलता है कि जब संस्कृत के सहृदय विद्वानों को कविकुल-गुरु महर्षि वाल्मीकि की वंदना के लिये जिह्वा खोलनी पड़ी तो उन्होंने यही कहा—

कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम्।
आरुह्य कविता शाखां वन्दे वाल्मीकि-कोकिलम्॥

इस एक श्लोक ही में जो समस्त गुण आदिकवि की रचनाओं मे हैं, उनका व्यापक निरूपण है, थोड़े में शब्दों मे ही बहुत कुछ कह दिया गया है। इसी प्रकार भारती के वरपुत्र विद्यापति की लोकोत्तर रचनाओं का परिचय देने, उनके माधुर्य, प्रसाद, सरसता और मनोमुग्धकारिता की व्याख्या करने के लिये उनको 'मैथिल कोकिल' कह देना ही पर्याप्त है। आप मैथिलीभाषा-राकारजनी के राकेश और कविताकामिनी के कमनीयकान्त हैं। आपकी कोकिल-काकली-कलित मधुमयता, कोमल-कान्त पदावली, भावुक-हृदय-विमोहिनी भावुकता, और नव नव भावोन्मेषिनी प्रतिभा देखकर चित्त विमुग्ध हो जाता है। आपके इन्हीं गुणों की आकर्षिणी शक्ति का यह प्रभाव है, कि केवल मैथिलीभाषा

को ही आपका गर्व नहीं है, वगभाषा और हिन्दीभाषा भाषी भी आपको अपनाने मे अपना गौरव समझते हैं, और आज भी हृदय से आपका अभिनन्दन करते हैं। तीन-तीन प्रान्तों मे समान भाव से समादृत होने का गुण यदि किसी कविता मे है, तो आपकी ही कविता मे है, अन्य किसीकी कविता को आज तक यह महत्व नहीं प्राप्त हुआ। खेद है, ऐसी अपूर्व रचना का समुचित प्रचार अब तक प्रत्येक प्रान्त मे नहीं हुआ। इसी उद्देश की पूर्ति के लिये यह सग्रह तैयार किया गया है। सग्रह-कर्त्ता ने उनकी उत्तमोत्तम रचना-कुसुमावली में से सरस-स-सरस सुमनों के सग्रह करने मे जिस मधुप-वृत्ति का परिचय दिया है, उसकी भूयसी प्रशसा की जा सकती है। पाद-टिप्पणियाँ तो सोने मे सुगन्ध हैं। यदि आप लोगों ने इसका समुचित समादर किया, तो अतीव सुन्दर आकार-प्रकार मे उक्त कविपुगव की अधिकाश रचना आप लोगों के कर-कमलों मे अर्पित की जावेगी। उस समय मैं एक वृहत् भूमिका द्वारा इस महान् कवि की रचनाओं पर समुचित प्रकाश डालने की चेष्टा करूँगा। आज इन कतिपय पक्तियों को लिखकर ही सतोष ग्रहण करता हूँ।

हिन्दू विश्व विद्यालय
काशी

अयोध्यासिंह उपाध्याय
'हरिऔध'

द्वितीय-संस्करण

हिन्दी भाषा के प्रेमियों ने जिस प्रकार विद्यापति की पदावली के इस सचित्र सटीक-सुन्दर सकलन के प्रथम संस्करण को अप नाया है उसका अनुभव कर मैं नितान्त सुखी हू । आज इस सकलन का दूसरा सस्करण प्रकाशित होने जा रहा है । इस उपलक्ष्य में सहृदय प्रकाशक महोदय तथा सकलयिताजी को मैं बधाई देता हू ।

प्रकाशकजी के अनुरोध से बाध्य होकर सशोधन करने की दृष्टि मे मैंने इसकी पुनरावृत्ति की । मुख्यत यह श्रीयुत नगेन्द्र नाथ गुप्त के सकलन पर अवलम्बित है । जब तक उस सकलन की परीक्षा प्राचीन हस्तलिखित ग्रथो के सहारे न की जायगी तब तक मूल पदों पर कलम लगाना अनुचित होगा । पर इसके लिये जितना अवकाश चाहिये वह मुझे नहीं मिल सका । इस संकलन की बड़ी माँग है अतएव अधिक दिनों तक इसे अप्रका शित रखना भी उचित नहीं है । मूल पदों के पाठ को मैंने ज्यों का त्यों रहने दिया है क्योंकि इसमे शुद्ध पाठ अब तक पाठको को देखने का सौभाग्य नहीं हुआ है और व इसमे अभ्यस्त-स्रा हो गये हैं । बिना प्रमाण के इसमें यदि हेरफेर की जाय तो कैसे ? हाँ, कई स्थानों में मुझे स देह उत्पन्न हुए थे पर उनका निराकरण तब तक नहीं हो सकेगा जब तक हस्तलिखित प्राचीन पुस्तकों को मैं न देखू गा ।

टीका में मैंने जहाँ तहाँ कुछ हेरफेर की है । समकालीन साहित्य के अभाव के कारण विद्यापति की पदावली का अर्थ लगाना सब स्थानों में सर्वथा विवाद शून्य नहीं रह सकता । लोग समझते

होंग कि मैथिल इन मैथिली पदों को अच्छी तरह समझते होंग। यद्यपि साधारणतया यह ठीक है, पर सम्पूर्णतया नहीं। आधुनिक मैथिली विद्यापति के काल की मैथिली नहीं है। दोनों में बहुत अन्तर हो गया है। कहीं कहीं तो ऐसा मालूम पड़ता है कि इस महाकवि ने अपने अनूठे भावों को संगीत बद्ध करने के लिये अनूठे शब्दों का निर्माण किया है। ऐसी अवस्था में जितनी टीकाएं प्रकाशित हुई हैं और होंगी उनके सम्बन्ध में समालोचना की गुंजाइश है और रहेगी। इन बातों को दृष्टि में रखते हुए मैंने प्रथम संस्करण में की टीका का संशोधन उन स्थानों में किया है जहाँ भाषा का यथार्थ भाव व्यक्त करने के लिये वैसा करना मुझे नितान्त आवश्यक प्रतीत हुआ। यह मानना होगा कि इस प्रकार के गुटके संस्करण में टीका के लिये यथेष्ट स्थान मिलना असम्भव है। यदि अपने काम से मुझे कुछ भी संतोष है तो इसीलिये कि इससे अधिक संशोधन मैं इस संस्करण में नहीं कर सकता था।

मैं तो एक ऐसे संस्करण की प्रतीक्षा कर रहा हूँ जिसमें पदों के पाठ निर्विवाद हों और टीका विस्तृत समालोचनात्मक और प्रामाणिक। देखूँ, यह मधुर स्वप्न कब तक चरितार्थ होता है। तब तक के लिये सहृदय पाठकों से मेरा अनुरोध है कि ऐसे अधूरे प्रयत्नों से संतोष करें। यदि इससे उनकी तुष्टि न हो तो शिष्ट समालोचना द्वारा तथ्य निरूपण करके ही वे अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हों।

श्रीगङ्गानन्द सिंह

धन्यवाद

इस पुस्तक के पदों के सकलन में मुझे नगेन्द्रनाथ गुप्त द्वारा सम्पादित और जस्टिस सारदाचरण मित्र द्वारा प्रकाशित बँगला 'विद्यापतिर पदावली' से अधिक सहायता मिली है, अत इन सज्जनो का मैं अत्यन्त अनुगृहीत हूँ। 'विद्यापति का परिचय' लिखने में, उक्त पुस्तक, 'मैथिल कोकिल विद्यापति', हिस्ट्री ऑफ तिरहुत एव 'मिथिला-दर्पण' से सहायता मिली है, अत इनके लेखक भी मेरे धन्यवाद के पात्र हैं। हिन्दू विश्वविद्यालय के अध्यापन एव कविता रचना से अपना अमूल्य समय बचाकर इस छोटे से सग्रह के लिये एक छोटी-किन्तु चोखी-भूमिका लिख देने के लिये प० अयोध्यासिंह उपाध्यायजी का मैं चिरऋणी हूँ। सुहृद्वर बाबू शिवपूजन सहाय, श्रद्धेय प० जनार्दन झा श्री जगदीश्वर ओझा 'मैथिली' सम्पादक बाबू उदितनारायण लालदास, मित्र रामनाथ झा 'सुमन' प्रिय 'विकल' आदि ने इस सग्रह को उपयोगी बनाने मे मेरी सहायता की है, इनके प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। सबसे अधिक धन्यवाद के पात्र हैं हिन्दी पुस्तक भण्डार के प्राण बाबू रामलोचन शरणजी, जिनके उत्साह-दान से ही यह पुस्तक लिखी गई है और जिन्होंने इसे सुलभ और सुन्दर बनाने में कुछ भी उठा नहीं रक्खा है।

—श्री बेनीपुरी

विमाता

लेखक—श्रीयुत अवधनारायण

बड़े हर्ष की बात है कि 'विमाता' हिन्दी-साहित्य के मौलिक उपन्यासों में स्थान पा गई। इसके ऐसा हृदयग्राही प्लाट हिन्दी के बहुत ही कम उपन्यासों को नसीब हुआ है। हजारों कापियाँ थोड़े ही समय में बिक जाना इसकी उपयोगिता का सार्टिफिकेट है। 'सरस्वती' ने जब इसकी प्रशंसा की है, तब अधिक लिखना व्यर्थ है। लेखक ने समाज के चरित्रों का जीता जागता खाका सामने ला रक्खा है। पढ़ते जाइये और सामाजिक चरित्रों पर विचार कर देखिये कि सचमुच भारतवर्ष में यह यथार्थ घटता है कि नहीं। पुत्र के रहते हुए भी, केवल अपनी पाशविक तृष्णा को शांत करने के लिये दूसरी शादी करने से कैसे कैसे अनर्थ होते हैं, किस प्रकार पुत्र का जीवन बर्बाद होता है और घर नरक कुंड बन जाता है, इसका करुण रसात्मक वर्णन पढ़कर आँसू बहने लगते हैं।

सरल मुहावरेदार भाषा पृष्ठ संख्या ३०८, पक्की जिल्द २)

विषय-सूची

विद्यापति का परिचय

विद्यापति का परिचय



भारतीय प्राचीन महापुरुषों का जीवन वृत्त लिखना कठिन है। भारत में इतिहास वा जीवनी लिखने की वैसी प्रथा नहीं थी। अतएव, अपने प्राचीन पुरुषों की जीवनी लिखने में हमें विशेषत किवदन्तियों या परम्परा से चली आती हुई जनश्रुतियों का आधार लेना पड़ता है। यदि किसी महापुरुष की चर्चा प्रसगवश किसी पुस्तक में आ गई हो, तो वह हमारे लिये एक बहुमूल्य ऐतिहासिक सामग्री हो जाती है। ताम्रपत्र या सिक्के भी इतिहास सकलन में बहुत सहायता करते हैं। यहाँ एक बात और ध्यान में रखने की है। जो राजा हो गये हैं, जिन्होंने राजवश में जन्म लिया था या जिन्होंने किसी राजा का आश्रय लिया था, प्राचीन पुस्तकों में प्राय उन्हींकी अधिक चर्चा है—सिक्के और ताम्रपत्र हम उन्हींके इतिहास सकलन में सहायक होते हैं। जिनका जन्म साधारण घराने में हुआ था, जिन्होंने किसी राजा का आश्रय नहीं लिया था, उनके जीवन वृत्त लिखने में तो विशेषत किंवदन्तियाँ ही सहायक होती हैं। सूर और तुलसी इतने बड़े कवि हो गये हैं, किन्तु इनके विषय में जो कुछ हम जानकारी रखते हैं, वह केवल किंदन्तियों के ही आधार पर। जन श्रुति या किंवदन्ती सर्वथा अमूलक नहीं हुआ करती। उसमें बहुत कुछ ऐतिहासिक तथ्य रहते हैं—हाँ, हम यह स्वीकार करेंगे, कि उसमें ऐतिहासिक तथ्यों पर बहुत-कुछ परदा पड़ा हुआ रहता है।

विद्यापति इस विषय में सूर या तुलसी से अधिक सौभाग्यशाली हैं। इनका जन्म सूर-तुलसी के लगभग दो सौ वर्ष पूर्व होने

पर भी इनके जीवनी-लेखक को बहुत कुछ ऐतिहासिक सामग्रियाँ मिलती हैं। उसका खास कारण यह है, कि ये एक राजवंश के आश्रित थे। उस राजवंश के इतिहास के साथ इनका इतिहास भी सम्मिलित है। कई प्राचीन पुस्तकों में प्रसंग क्रम से इनकी चर्चा आ गई है। एक ताम्रपत्र भी इनके सम्बन्ध में मिला है।

विद्यापति का निवास-स्थान

बहुत दिनों तक विद्यापति के जन्मस्थान के विषय में विवाद चला आ रहा था, किन्तु अब उस विवाद का अन्त हो गया। अब यह बात निश्चित हो गई है कि विद्यापति बंगाली नहीं, मैथिल थे। उनका जन्म दरभंगे जिले के बेनीपट्टी थाने के अन्तर्गत 'बिसपी' गाँव में हुआ था। दरभंगे से जो रेलगाड़ी उत्तर पश्चिम की ओर जाती है, उसका तीसरा स्टेशन कमतौल है। कमतौल से लगभग चार मील पर यह गाँव है। विद्यापति के पूर्वज बहुत दिनों से यहीं वास करते थे—इस गाँव का पहला नाम गढ़ बिसपी था। विद्यापति को यह गाँव उनके आश्रय दाता राजा शिवसिंह की ओर से उपहारस्वरूप मिला था। इस दान का ताम्रपत्र भी प्राप्त हुआ है। उस ताम्रपत्र का कुछ अंश यहाँ दिया जाता है—

स्वस्ति श्री गजरथपुरात् समस्त प्रक्रिया विराजमान श्रीमद्रामेश्वरीवरलब्धप्रसाद भवानीभवभक्तिभावनापरायण रूपनारायण महाराजाधिराज श्रीमच्छिवसिंह देवपादास्समरविजयिनो जरैल तप्पायां बिस्पी ग्राम वास्तव्य सकल लोकान् भूकर्षकांश्च समादिशन्ति। ज्ञातमस्तु भवताम्। ग्रामोऽयमस्माभि सप्रक्रियाभिनवजयदेव महाराजपण्डित ठक्कुर श्रीविद्यापतिभ्य शासनीकृत्य प्रदत्तोऽतोऽयमेतेषां वचनकरी भूकर्षणादिकम्मकरिष्यथेति॥ ल० सं० २९३ श्रावण सुदि ७ गुरौ।

विद्यापति के वंशधर बहुत दिनों तक इसी गाँव में बसते रहे। किन्तु अभी, चार पुश्त पहले, वे इस गाँव को छोड़कर इसी जिले के सौराठ नामक गाँव में बस गये हैं। अँगरेजी राज्य के पहले तक वे लोग इस गाँव का उपभोग लाखिराज के रूप में करते थे। किन्तु अँगरेजी सरकार द्वारा सर्वे होने के समय इस गाँव का स्वत्व इनके वंशधरों से छीन लिया गया। उस समय विद्यापति के वंशधरों ने अपना स्वत्व सिद्ध करने के लिये उपर्युक्त ताम्रपत्र पेश किया था। इस ताम्रपत्र को लेकर कुछ दिनों तक खूब विवाद चला। ग्रिअरसन साहब इसे जाली बताते रहे। किन्तु महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री तथा अन्य बंगीय अनुसंधान कर्त्ताओं ने इस दान पत्र को प्रामाणिक माना है। बिसपी गाँव विद्यापति को शिवसिंह ने अवश्य दिया था। विद्यापति के प्रसिद्ध विद्वेषी पंडित केशव मिश्र इसी दान की ओर लक्ष्य कर "अति लुब्ध नगर याचक" नाम से इनका उपहास किया करते थे।

इन्हें बंगदेशीय सिद्ध करने के लिये जो कोशिश हुई थी उस विषय में भी कुछ जान लेना अप्रासंगिक न होगा। बात यों है, कि विद्यापति की अधिकांश रचनाएँ शृंगार-रस से ओत प्रोत हैं। भारतीय शृंगारी कवियों के प्रधान उपास्य देव हैं—राधाकृष्ण। संस्कृत और भाषा का शृंगार साहित्य राधा-कृष्ण की केलि-क्रीड़ाओं से भरा पड़ा है। विद्यापति ने भी अपने पदों में राधा कृष्ण की लीलाओं का वर्णन किया है और खूब किया है। इस विषय के ऐसे मधुर और कोमल पद भाषा-साहित्य में कहीं अन्यत्र मिलना कठिन है। जिस समय बंगाल में चैतन्य महाप्रभु का आविर्भाव हुआ, उस समय इस कवि-कोकिल की काकली मिथिला की गली-गली को रसप्लावित कर बंगाल के श्यामल व्योम मंडल को

गूँज रही थी। चैतन्यदेव के कानों में भी इसकी मधुर ध्वनि पड़ी। सुनते ही वे मन्त्र मुग्ध हो गये। वे ढूँढ-ढूँढकर विद्यापति के पद गाने लगे। विद्यापति के अलौकिक पदों को गाते-गाते, प्रेमावेश में, वे मूर्छित हो जाते थे! (चैतन्यदेव भारत के अवतारी पुरुषों में हैं—ऐसा सौभाग्य प्राप्त करना विद्यापति के लिये कितने गौरव की बात है!) अब क्या था, चैतन्यदेव की शिष्य परम्परा में विद्यापति के पद गाने की प्रथा अनुदिन बढ़ती गई। यही नहीं, विद्यापति के ही अनुकरण पर कृष्णदास, नरोत्तमदास, गोविन्ददास*, ज्ञानदास श्री निवास, नरहरिदास आदि बंगीय कवियों ने कविताओं का बनाना प्रारम्भ किया। बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त लिखते हैं— 'विद्यापतिर जे रूप अनुकरण हइआछिल, बोध हय कोन देशे कौन कविर तद्रूप हय नाइ। ताहाँरई भाषा भाँगिया चूरिया, गढ़िया गठियो, रस-रस, छन्दोबन्ध,ठामभंगी, शब्द, उत्प्रेक्षा, उपमा, ताँहारइ पदावली हइते लइया लोकमनो मोहन वैष्णव काव्यसमूह सृजित हइल।" त्रैलोक्यनाथ भट्टाचार्य एम० ए० बी० ए० एल० ने जो लिखा था उसका भाव देखिये—"विद्यापति और चंडीदास की अतुलनीय प्रतिभा से समस्त बंग-साहित्य उज्ज्वल और सजीव हुआ है। वैष्णव गोविन्ददास और ज्ञानदास से लेकर हिन्दू बंकिमचन्द्र और ब्राह्म रवीन्द्रनाथ ठाकुर तक सब ही उन लोगों की आभा से आलोकित हैं, और उन लोगों का अनुकरण करके कविता रचना में व्यस्त पाये जाते हैं।"

फल यह हुआ कि विद्यापति बंगालियों के रगरग में प्रवेश कर गये। सैकड़ों वर्षों तक लगातार बंगालियों द्वारा गाये जाने के कारण विद्यापति के बंगदेशीय पदों का रूप भी ठेठ बँगला हो

* कहा जाता है कि ये भी मैथिल ही थे—लेखक।

गया। अब तो बगाली लोग यह एकबार ही भूल गये कि विद्यापति बगाली नहीं, मैथिल थे। बगाली अपनी कुशाग्र बुद्धि के लिये प्रसिद्ध हैं उन लोगों ने विद्यापति का निवास-स्थान भी बगाल ही में ढूँढ निकाला। यही नहीं, शिवसिंह नामक एक बगाली राजा भी कहीं से टपक पड़े—रानी लखिमा देवी भी मिल गई। यों सब प्रकार से सिद्ध हो गया कि विद्यापति ठेठ बगाली थे। यही कारण है कि बंगला १२८२ साल में स्वर्गीय राजकृष्ण मुखोपाध्याय ने जब पहले पहल 'बङ्गदर्शन' नामक पत्र में यह प्रकाशित किया कि विद्यापति बगाली नहीं, मैथिल थे, और इसके प्रमाण में उन्होंने उपर्युक्त ताम्रपत्र आदि पेश किये, तो समूचे बंगाल म कोलाहल मच गया। विद्यापति पर वे लोग इतने फिदा थे कि उन्हें अन्यदेशीय सिद्ध होना वे सुनना नहीं चाहते थे। उस समय एक प्रसिद्ध बगला-लेखक ने यह अन्दाज लगाया था कि विद्यापति बगाली ही थे, पहले बगाली लोग मिथिला मे विद्याध्ययन को जाते थे सम्भव है विद्यापति वहाँ से विद्याध्ययन को गये हा ओर वहाँ अपनी प्रतिभा से राजा शिवसिंह को प्रसन्न कर गाँव प्राप्त किया हो और बस गय हो। किन्तु ये सब गपोड़े बाजियां अब गलत साबित हो चुकी हैं। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री, जस्टिस सारदा चरन मित्र, बाबु नगेन्द्रनाथ गुप्त सभी बगीय विद्वानों ने यह कबूल कर लिया है कि ये मिथिला-निवासी थे और इन्होंने मैथिली भाषा में कविता की है। हमें धन्यवाद देना चाहिये श्रीयुत ग्रिअरसन साहब को, जिन्होंने सबसे पहले विद्यापति का बिहारी होना सिद्ध किया था।

विद्यापति का समय

प्राचीन कवियों की तरह विद्यापति के जन्म और मृत्यु के

समय भी निश्चित नहीं है। किंवदन्ती तथा स्फुट पदों के आधार पर ही इसकी विवेचना करना सम्प्रति सम्भव है। पता लगता तो केवल इसीका है कि लक्ष्मणाब्द २९३ या शाकाब्द १३२४ में देवसिंह मरे थ, उसी साल शिवसिंह राजगद्दी पर बैठे थे, और, राजगद्दी पर बैठने के छ महीने के अन्दर उन्होंने विद्यापति को बिसपी गांव उपहार में दिया था। बिसपी गांव के ताम्रपत्र की प्रतिलिपि दी जा चुकी है, शिवसिंह के पिता देवसिंह की मृत्यु के विषय में विद्यापति का एक पद यों है—

अनल[3] रन्ध्र[9] कर[2] लक्खन नरवइ सक समुद्द[4] कर[2] अगिनि ससी[1]।
चैत कारि छठि जेठा मिलिओ वार बेहप्पय जाहु लसी॥
देवसिंह जू पुहुमि छड्डिअ अद्धासन सुरराअ सरू। इत्यादि।

बाबू ब्रजनन्दन सहाय ने 'मैथिल कोकिल विद्यापति' ग्रंथ में लिखा है कि बिसपी गांव प्राप्त करने के समय विद्यापति की अवस्था केवल बीस वर्ष की थी। इसके पहले विद्यापति ने 'कीर्तिलता' नाम की पुस्तक लिखी थी। सहायजी ने उसे १६ की अवस्था में लिखी हुई बताते हैं। सहायजी का यह कथन अनुमान विरुद्ध तथा ऐतिहासिक प्रमाणों से असत्य सिद्ध होता है। सबसे प्रधान कारण तो यह है कि शिवसिंह गद्दी पर बैठने के तीन वर्ष के बाद ही मुसल्मानों से युद्ध करते हुए पराजित होकर किसी अज्ञात स्थान में चले गये, जहां से वे पुनः नहीं लौटे—सम्भवतः वे उसी युद्ध में मारे गये। इतिहास से यह * सिद्ध है, और स्वयं सहायजी ने भी इसे स्वीकार किया है। इससे तो यही सिद्ध होता है कि कुल तेईस वर्ष की अवस्था तक ही विद्यापति और

* 'मिथिला-दर्पण' के रचयिता ने देवसिंह के बाद शिवसिंह का ४६ वर्षों तक राज्य करने की बात लिखी है। किन्तु मिथिला-दर्पण' का काल-निर्णय नितान्त अशुद्ध जान पड़ता है। यहां तक कि उसमें दी हुई राजाओं की वंशावली भी अशुद्ध है।—लेखक।

शिवसिंह की संगति रही। विद्यापति के अधिकांश पदों में शिवसिंह का नाम है। क्या यह कभी सम्भव हो सकता है कि केवल तीन-चार वर्षों के अन्दर ही इतने पद लिखे गये हों ? अनुमान की बात जाने दीजिये। इतिहास भी इनके विरुद्ध है। सहायजी ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि विद्यापति बचपन में अपने पिता गणपति ठाकुर के साथ राजा गणेश्वर के दरबार में आते जाते थे। नैपाल-दरबार के पुस्तकालय में विद्यापति-रचित 'कीर्ति लता' की पूरी पुस्तक महामहोपाध्याय प० हरप्रसाद शास्त्रीजी ने देखी थी और उसकी नकल भी इन्होंने करा ली थी। उस कीर्ति लता में लिखा हुआ है कि २५२ लक्ष्मणाब्द में राजा गणेश्वर की मृत्यु हुई थी। अत राजा गणेश्वर की मृत्यु के पहले तो विद्यापति का जन्म अवश्य हो गया होगा वे ऐसी अवस्था के जरर रहे होंगे कि दरबार में अपने पिता के साथ जा सकें। २९२ लक्ष्मणाब्द में यदि विद्यापति केवल २० वर्ष के थे तो २५२ लक्ष्मणाब्द में व राजा गणेश्वर के दरबार में कैसे आ जा सकते थे—उस समय तो उनका जन्म भी न हुआ होगा !

बात यो है कि बाबू व्रजनन्दन सहायजी को बाबू अयोध्या प्रसाद खत्री लिखित मिथिला-राज्य की वंशावली ने धोखा दिया है। बाबू अयोध्या प्रसाद खत्री के कथनानुसार शिवसिंह के पिता देवसिंह की मृत्यु १४४६ ईस्वी में हुई थी, जो लक्ष्मणाब्द २४७ होता है *। सहायजी ने स्वयं इसका खडन किया है। क्योंकि

* लक्ष्मणाब्द और ईसवी सन् के तारतम्य में भिन्न भिन्न ऐतिहासिकों के भिन्न भिन्न मत हैं। सहायजी ने शिवसिंह के राज्यारोहण काल २९३ ल० स० को १४०० ई० माना है, हिस्ट्री आफ तिरहुत के रचयिता ने इसे १४१२ ई० लिखा है, और मेरे हिसाब से यह १४०२ ई० पड़ता है।—लेखक।

विद्यापति के कथनानुसार लक्ष्मणाब्द २९३ में देवसिंह की मृत्यु हुई थी। या अयोध्या प्रसादजी ने सहायजी की गणनानुसार ४६ वर्ष की भूल की है। किन्तु एक जगह खत्रीजी के समय को गलत मान कर भी दूसरी जगह सहायजी ने उसे प्रामाणिक मान लिया है। दुर्गाभक्ति तरंगिणी नामक पुस्तक विद्यापति ने राजा नरसिंहदेव के समय में लिखना शुरू किया था, और उनके बाद के राजा धीरसिंह के समय में समाप्त किया था। नरसिंह देव का समय खत्रीजो ने १४७० ई० लिखा है। सहायजी ने इस समय को प्रामाणिक मान लिया है। जब १४७० ई० के बाद तक विद्यापति के जीवित रहने की बात स्वीकार कर ली गई, तब उनके जन्म साल को आगे बढ़ाना सहायजी के लिये जरूरी था। किन्तु सोचना तो यह था कि जिस प्रकार देवसिंह की मृत्यु के विषय में खत्रीजी ने ४६ वर्ष की भूल की है वही ४६ वर्ष की भूल यहाँ भी की होगी। खत्रीजी की यह भूल भी इतिहास सिद्ध है। स्वयं सहायजी ने अपनी पुस्तक के २० पृष्ठ में लिखा है कि नरसिंहदेव के पुत्र धीर सिंह के राजत्वकाल में 'सेतुबंध' नामक प्राकृत ग्रंथ की 'सेतुदर्पणी' नामक टीका लिखी गई थी। जिस के अनुसार ३२१ लक्ष्मणाब्द में धीरसिंह सिंहासन पर विराजमान बतलाये गये हैं। ३२१ लक्ष्मणाब्द १४२८ ई० में पड़ता है *। सोचने की बात है कि जब पुत्र १४२८ ई० में राजगद्दी पर बैठा था तो उसका पिता १४७० में कैसे राजा हुआ? बस साफ प्रकट है कि खत्रीजी ने यहां भी ४६ वर्ष की गलती की है। १४७० में ४६ घटा देने पर १४२४ ई० में नरसिंहदेव का राजा होना सिद्ध होता है। नरसिंहदेव ने, सहायजी के ही कथनानुसार,

* सहायजी की गणना के अनुसार—लेखक

एक ही वर्ष तक राज किया था। सम्भव है १४२५ में वे मर गये हों और १४२८ में उनका पुत्र धीरसिंह राजगद्दी पर विराजमान रहे हों। 'सेतुदर्पिणी' से भी यही पता चलता है। इसी ४६ वर्ष के फेर में पड़कर जहाँ महाशयजी न केवल २० वर्ष की अवस्था में शिवसिंह और विद्यापति की भेंट कराकर तीन ही वर्षों में उनका चिरवियोग कराया, वहाँ विद्यापति की शताधिक वर्ष की अवस्था का भी भ्रम उन्हें हो गया था—जिसका औचित्य प्रमाणित करने के लिये आपने जमीन आस्मान का कुलाबा मिलाया है, निजी और सार्वजनिक सब प्रमाणों को पेश किया है।

महाशयजी को एक और तिथि ने भी धोखा दिया है। आपने २३ पृष्ठ में लिखा है कि ३४९ लक्ष्मणाब्द में इनके अपने हाथ से भागवत पोथी की नकल करना सिद्ध होता है। यह गलत है। नगेन्द्रनाथ गुप्त ने मैथिल कविवर चन्दा झा के साथ स्वयं तरौनी जाकर उस पुस्तक को देखा था। उस पुस्तक के अंत में लिखा है—"शुभमस्तु सर्वाधगता ल० स० ३०९ श्रावण सुदि १५ कुजे रजाबनौली ग्रामे श्री विद्यापतिलिपिरियमिति।" इस ३०९ को ही महाशयजी ने भ्रमवश ३४९ मान लिया है।

अब यथार्थ बात सुनिये। यह इतिहास और जनश्रुति दोनों पर अवलम्बित है और आपको युक्तियुक्त भी मालूम पड़ेगी।

एशियाटिक सोसाइटी में एक प्राचीन हस्तलिखित पोथी है जो १३२२ शाकाब्द (= २९० लक्ष्मणाब्द) की लिखी हुई है। वह पोथी शिवसिंह की राजधानी गजरथपुर में विद्यापति की प्रेरणा से लिखी गई थी। दो ब्राह्मणों ने इसे लिखा था। उसमें विद्यापति को 'सप्रक्रिय सदुपाध्याय ठक्कुर श्री विद्यापति' ऐसा लिखा है और शिवसिंह का नाम महाराजा की उपाधि से युक्त है। इससे दो

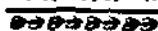
बातों का पता चलता है। एक यह कि शिवसिंह अपने पिता के जीवनकाल में ही महाराजा कहलाते थे। [मालूम होता है, वृद्ध पिता ने अपना शासन भार पुत्र को ही सौंप दिया था और जनता शिवसिंह को ही अपना अधिपति मानती थी।] दूसरी बात इस पोथी से यह प्रगट होती है कि शिवसिंह के सिंहासनारोहण के पहले से ही विद्यापति दरबार में रहते थे। देवसिंह के नाम से विद्यापति ने कुछ पद भी बनाये हैं।

हाँ, तो यह सिद्ध है कि पिता की मृत्यु के पहले से ही शिवसिंह राज्य शासन करते थे। मिथिला में यह जनश्रुति है कि शिवसिंह पचास वर्ष की अवस्था में राजगद्दी पर बैठे थे और विद्यापति उनसे दो वर्ष बड़े थे। अतः शिवसिंह के राज्यारोहण के समय विद्यापति की अवस्था ५२ वर्ष की थी। यदि इस जनश्रुति को तथ्यपूर्ण मान लिया जाय तो प्रायः हम सत्य के निकट पहुँच सकेंगे। क्योंकि विद्यापति को उपर्युक्त ताम्रपत्र में 'अभिनव जयदेव' लिखा गया है। उस समय तक विद्यापति की कीर्ति चारों ओर फैल गई रही होगी। उनकी कविता के माधुर्य पर मुग्ध होकर लोग उन्हें 'अभिनव जयदेव' कहने लगे थे। विद्यापति की कविता राजा के अन्तःपुर से लेकर गरीबों की झोपड़ी तक में गूँज रही थी। राजसिंहासन पर बैठने के समय शिवसिंह अपने प्यारे सहचर विद्यापति को कैसे भूल सकते थे। जिनकी कविता सुधा को पानकर वे मस्त बने थे, जिनकी कविता उन्हें और उनकी सहधर्मिणी 'लखिमा' को अमर कर चुकी थी, उसे वे कैसे कुछ पुरस्कार न देते। अतः राजगद्दी पर बैठने के कुछ ही दिनों के बाद उन्होंने विद्यापति को बिसपी गाँव प्रदान किया। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, बिसपी गाँव २९३ लक्ष्मणाब्द में विद्यापति को दिया गया था, उस समय

उनकी अवस्था लगभग ५२ वर्ष की होगी। अतः उनका जन्म २४१ लक्ष्मणाब्द में या सवत् १४०७ विक्रमीय में होना सम्भव है (=सन् १३५० ई०)। इस कथन की परिपुष्टता पूर्वोक्त राजा गणेश्वरसिंह के दरबार में विद्यापति के आने जाने वाली बात से भी होती है। 'कीर्ति-लता' के अनुसार राजा गणेश्वर २५२ लक्ष्मणाब्द में परलोकगामी हुए थे। उस समय विद्यापति १०—११ वर्ष के रहे होंगे। तभी तो उनके पिता उन्हें राज दरबार में ले जाते थे।

विद्यापति का वंश

विद्यापति मैथिल ब्राह्मण थे। इनका मूल बिसइवार और आसद ठाकुर था। मैथिलों में पञ्जी प्रथा का प्रचलन है। जितने मैथिल ब्राह्मण और कर्णकायस्थ हैं, सभी के नाम, पुश्त दरपुश्त, एक पोथी में लिखी हुई है। इस पोथी को 'पञ्जी' कहते हैं। पञ्जी से पता चलता है कि गढ़बिसपी में कर्मादित्य त्रिपाठी नामक ब्राह्मण रहते थे। आप राजमंत्री थे। ये महाशय विद्यापति के वंश के आदिपुरुष विष्णुशर्मा ठाकुर के पोते थे। कर्मादित्य के बाद इनके खान दान में जितने महापुरुषों ने जन्म लिया, सभी तत्कालीन मिथिला के राजा के दरबार में उच्च पदों पर काम करते रहे। कोई राजमंत्री थे, कोई राजपंडित। किसीको महामहत्तक की उपाधि प्राप्त हुई तो किसीको सान्धिविग्र हीक की। इनका खानदान अपनी विद्वत्ता और बुद्धिमत्ता के सम्मुख उस समय मिथिला में जोड़ नहीं रखता था। इनके खानदान में कितने ही लेखक और कवि भी हो गये हैं। कर्मादित्य के पोते वीरेश्वर ठाकुर ने, जो ओइनिवार वंशीय राजा कामेश्वर सिंह एवं उनके पुत्र



हरिसिंह देव के * राजमंत्री भी थे, "छान्दोग्य दशपद्धति" की रचना की थी। अभी तक इसी पुस्तक के अनुसार बिहार में दश कर्म किये जाते हैं। इनके सोदर भाई धीरेश्वर, जो विद्यापति के निज प्रपितामह थे, 'महावार्तिकनैबन्धिक'' नाम से प्रख्यात थे। वीरेश्वर के पुत्र चण्डेश्वर ने 'कृत्य चिंतामणि तथा 'विवादरत्नाकर 'राजनीति रत्नाकर आदि सप्त रत्नाकरों की रचना की थी। राज नीति रत्नाकर एक बहुत ही बहुमूल्य ग्रन्थ है। प्राचीन भारतीय राजनीति पर इससे बहुत कुछ प्रकाश डाला जा सकता है। आप उपर्युक्त हरिसिंह देव के मंत्री एवं महामहत्तक सान्धिविग्रहिक थे। विद्यापति के पिता पण्डित गणपति ठाकुर भी राजमंत्री थे। आपने गंगाभक्ति तरङ्गिणी नाम की एक पुस्तक की रचना की थी।

यों देखा जाता है कि विद्यापति का खानदान ही सरस्वती का अपूर्व कृपापात्र रहा है। जिस प्रकार उनके पूर्वजों ने राज्यकर्म में अपनी अपूर्व चातुरी दिखलाई थी, उसी प्रकार सरस्वती सेवा में भी वे लोग पीछे नहीं रहे हैं। ऐसे प्रतिभावान् कुल में उत्पन्न होकर विद्यापति ने जो कुछ काव्य कुशलता दिखलाई है, वह स्वाभाविक ही है।

विद्यापति का प्रारम्भिक जीवन

विद्यापति के पिता का नाम था पण्डित गणपति ठाकुर। गणपति ठाकुर राजा गणेश्वर के सभापण्डित थे। इनकी माता का नाम था हांसिनी देवी। वह पिता धन्य है, जिन्हें ऐसा पुत्ररत्न

* हरिसिंहदेव शिवसिंह से बहुत पहले प्रसिद्ध सिमरौंव ग' के अधिपति थे। इन्होंने नैपाल को जीता था।—लेखक

प्राप्त हुआ था, वह माता भी धन्य है, जिन्होंने ऐसे पुरुषरत्न को अपने गर्भ में धारण किया था। बिसपी गाँव की प्रत्येक कण पुण्यमय और धन्य है, जहाँ ऐसे कविकोकिल ने अपना जीवन व्यतीत किया था। कहा जाता है, गणपति ठाकुर ने कपिलेश्वर महादेव की आराधना कर के विद्यापति ऐसा पुत्र रत्न प्राप्त किया था।

विद्यापति ने सुप्रसिद्ध हरिमिश्र से विद्याध्ययन किया था और उनके भतीजे सुख्यात पक्षधर मिश्र इनके सहपाठी थे। विद्यापति अपने पिता के साथ राजा गणेश्वर के दरबार में बचपन से ही आया जाया करते थे। गणेश्वर के बाद कीर्त्तिसिंह राजा हुए। विद्यापति राजा कीर्त्तिसिंह के दरबार में आने जाने लगे। प्रारम्भ से ही इनमें प्रतिभा की झलक दीख पड़ती थी। राजा कीर्त्तिसिंह के दरबार में मालूम होता है, ये कुछ अधिक काल तक रहे होंगे। क्योंकि इन्हीं राजा कीर्त्तिसिंह के नाम पर इन्होंने अपना पहला ग्रंथ 'कीर्त्तिलता' का निर्माण किया था। यह पूरी पुस्तक नैपाल के राज पुस्तकालय में है। मिथिला में इस ग्रन्थ का केवल फुटकर अंश मिलता है। 'कीर्त्तिलता' कवि के तरुण वयस की रचना है। इस ग्रंथ की भाषा संस्कृत, प्राकृत मिश्रित मैथिली है। कवि ने इस भाषा का नामकरण 'अवहट्ट' भाषा किया है। 'कीर्त्तिलता' के प्रथम पल्लव में कवि ने स्वयं कहा है—

देसिल बअना सब जन मिट्ठा।
ते तैसन जम्पओ अवहट्ठा॥

'देशी भाषा सभी को मीठी लगती है, यही जानकर अवहट्ठ भाषा में इसकी मैंने रचना की है। किन्तु इस पुस्तक की रचना के समय, मालूम होता है, कवि अपनी काव्य कुशलता के लिये

बहुत प्रसिद्ध हो गये थे। उनकी भाषा पर सभी मुग्ध थे। उनका प्रतिद्वंद्वी उसी अवस्था में कोई नहीं था। वे अभिमान के साथ उस पुस्तक में लिखते हैं—

बालचन्द विज्जावइ भाषा।
दुहु नहिं लग्गइ दुज्जन हासा॥
ओ परमेसर हर सिर सोहइ
इ निच्चय नायर मन मोहइ॥
—कीर्त्ति लता, प्रथम पल्लव।

बाल चन्द्रमा और विद्यापति की भाषा—इन दोनो पर दुष्टों की हँसी लग नहीं सकती। वह (बालचन्द्रमा) देवता के रूप में शिव के सिर पर सोहता है और यह (विद्यापति की भाषा) निश्चय पूर्वक नागरों का—सुचतुर भाषाविज्ञों का—मन मोहती है। इस पद के एक-एक शब्द से कवि का अभिमान टपकता है। जयदेव के समान इन्हें भी अपनी भाषा पर नाज था। बात भी ठीक है। हम दावे के साथ कह सकते हैं कि भाषा की मिठास और कोमलता की दृष्टि से तो इन कवि का कोई भी प्रतिद्वंद्वी हिन्दी साहित्य में नहीं है।

कीर्त्ति सिंह के बाद शिवसिंह के पिता देवसिंह राजा हुए। देवसिंह के समय में राज्यशासन का भार शिवसिंह के ही हाथ में था। उसी अवसर पर विद्यापति और शिवसिंह में घनिष्ठता हुई। तब से विद्यापति शिवसिंह के अन्तिम समय तक उन्हींके पास रहे।

विद्वत्ता, संस्कृत-रचनायें

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, इन्होंने सुप्रसिद्ध विद्वान् हरिमिश्र से विद्याध्ययन किया था। इनका खानदान ही सरस्वती

की कृपापात्र रहीं हैं। इनके पिता गणपति ठाकुर स्वयं कवि थे। अतएव, इसमें सन्देह नहीं कि संस्कृत साहित्य का विद्यापति ने पूरी तरह से अनुशीलन किया था। इसका प्रमाण इनकी लिखी हुई संस्कृत की अनेकानेक पोथियाँ हैं। यहाँ पर यदि हम इनके लिखे हुए संस्कृत ग्रंथों का कुछ परिचय दे दें, तो असामयिक नहीं होगा। उनसे हम इनकी विद्वत्ता का कुछ अन्दाज लगा सकेंगे।

विद्यापति की प्रथम रचना कीर्त्ति लता है। इसके विषय में कुछ चर्चा हो चुकी है। दूसरी पोथी 'भू परिक्रमा' है। यह पोथी राजा देवसिंह की आज्ञा से लिखी गई थी। इसमें नैतिक कहानियां हैं। इसीका वृहद् रूप 'पुरुष-परीक्षा' है। इनकी तीसरी पोथी है—'पुरुष परीक्षा'। यह पोथी, मालूम होता है, उस समय की रचना है जब इनके मस्तिष्क का पूरा विकाश हो चुका था। यह राजा शिवसिंह की आज्ञा से उन्हींके राजत्वकाल में लिखी गई थी। इसमें कथाओं के ढंग से धार्मिक एवं राजनीतिक उपयोगी विषयों का वर्णन है। राजनीतिक और धार्मिक विषयों में भी कवि ने शृङ्गार रस को विस्मरण नहीं किया है। कवि ने शृङ्गार-रस के परदे में राजनीति और धर्म की शिक्षा दी है। इस पुस्तक का बहुत मान है। १८३० ईस्वी में इसका अँगरेजी में अनुवाद हुआ था। यह अनुवाद लार्डबिशप टर्नर के परामर्श से राजा कालीकृष्ण बहादुर ने किया था। फोर्ट विलियम कालेज में पहले यह पाठ्य पुस्तक की तरह पढ़ाई जाती थी। उक्त कालेज के बङ्गभाषा के अध्यापक हरप्रसाद राय ने १८१५ ई० में इसका भाषानुवाद किया था।

इनकी चौथी पुस्तक 'कीर्त्ति पताका' है। इसमें मैथिली

२

भाषा में लिखी गई प्रेम कवितायें हैं। पाँचवी 'लिखनावली' है, जिसमें संस्कृत में पत्रव्यवहार करने की रीति वर्णित है। लिखनावली रजाबनौली के अधिपति पुरादित्य के लिये २९९ लक्ष्मणाब्द में लिखी गई थी। इसी रजाबनौली में विद्यापति ने ३०९ लक्ष्मणाब्द में अपने हाथ से भागवत लिखकर समाप्त की थी। छठी पुस्तक 'शैव-सर्वस्व सार' है। यह पुस्तक शिवसिंह की मृत्यु के बहुत दिनों के बाद रानी विश्वासदेवी के समय में लिखी गई थी। इस पुस्तक में भवसिंह से लेकर विश्वासदेवी तक के समय के राजाओं की कीर्त्ति कथा है, एवं शिव की पूजा की विधि लिखी हुई है। सातवीं पुस्तक 'गंगा-वाक्यावलि' है, जो विश्वास-देवी के ही लिये लिखी गई थी। आठवीं पुस्तक है 'दान वाक्या-वलि'। यह राजा नरसिंह देव की स्त्री धीरमति को समर्पित की गई है। नवीं पुस्तक 'दुर्गाभक्ति तरंगिणी' दुर्गा पूजा के प्रमाण और प्रयोग पर लिखी गई है। इसका निर्माण नरसिंह देव के कहने से हुआ था। धीरसिंह के समय में यह पूरी हुई थी। इसमें धीरसिंह के भाई भैरवसिंह और चन्द्रसिंह का भी नाम आया है। इसके अतिरिक्त विभाग सार (स्मृति ग्रंथ) वर्षकृत्य और गया पत्तन नामक संस्कृत पुस्तकें भी आपकी ही लिखी हैं। अब तक मिथिला में खोज का काम कुछ नहीं हुआ है। सम्भव है, इनकी लिखी और भी संस्कृत पुस्तकें हों, जो अभी तक छिपी पड़ी होंगी, क्योंकि विद्यापति दीर्घजीवी पुरुष थे। किन्तु, केवल इन्हीं पुस्तकों के देखने से ही विद्यापति के प्रगाढ़ पाण्डित्य का परिचय मिलता है। हिन्दी के लिये तो यह नितान्त गौरव की बात है कि उसका एक प्रथम श्रेणी का कवि संस्कृत साहित्य में भी अपना खास स्थान रखता है।

विद्यापति की उपाधियाँ

हिन्दी में आजकल यह प्रथा विशेष रूप से पाई जाती है कि प्रत्येक कवि अपना एक-न एक उपनाम रखता है। हिन्दीवालों ने यह प्रथा विशेषत उर्दूवालों से ली है, ऐसा कहा जाता है। किन्तु प्राचीन हिन्दी कवियों में भी उपनाम देखे जाते हैं। हां, आजकल के उपनाम और उस समय के उपनाम में एक गहरा भेद है। किसी राजा या प्रसिद्ध व्यक्ति द्वारा, उनकी काव्य कुशलता देखकर उसीके अनुसार प्रदान की हुई उपाधियाँ ही, उस समय कवियों के उपनाम होते थे। आजकल जिसके जी में जो आता है, अपना उपनाम धर लेता है। प्राचीन कवियों म 'विहारी भूषण' आदि उपनाम जो देखे जाते हैं, वे सब राज प्रदत्त उपाधियाँ हैं।

विद्यापति को भी कई उपाधियाँ प्राप्त हुई थीं। 'अभिनव जयदेव' की उपाधि तो सब प्रसिद्ध है। बिस्पी गाँव का जो ताम्रपत्र है, उसमें भी विद्यापति को 'अभिनव जयदेव' कहा गया है। मालूम होता है यह उपाधि स्वयं शिवसिंह ने दी थी। विद्यापति इस उपाधि के सर्वथा योग्य भी थे। जिस प्रकार संस्कृत साहित्य में मधुर शृङ्गार वर्णन में जयदेव की जोड़ नहीं है, उसी प्रकार, इस विषय में विद्यापति भी भाषा-साहित्य मे अपनी जोड़ नहीं रखते? इस उपनाम से इन्होंने कुछ कवितायें भी की हैं। एक पद यों है—

सुकवि नव जयदेव भनिश्र रे।
देवसिंह नरेन्द नन्दन
सेतु नरनइ कुल निकन्दन

सिंह सम सिवसिंह राया
सकल गुनक निधान गनिअ रे ॥

इनकी दूसरी उपाधि 'कविशेखर' है। कविशेखरनाम से भी इनकी बहुत सी रचनाएँ हैं। न मालूम यह उपाधि किसने दी थी। किसी ग्राम के दानपत्र में यह उपाधि नहीं है। कविकण्ठहार, कविरञ्जन इन दो नामों से भी अधिक कवितायें हैं। दशाव धान और पचानन की उपाधियाँ भी इनकी कही जाती हैं। कुछ कवितायें चम्पति या विद्यापति चम्पद् नाम से भी हैं। 'दशावधान' नाम से कुछ कवितायें भी हैं। यह उपाधि, कहा जाता है, दिल्ली श्वर ने दी थी।

विद्यापति का सम्प्रदाय

अभी तक यह विषय भी सदसद्द रहा है। इनकी कवितायें विशेषत राधाकृष्ण विषयक हैं। अत लोगों की धारणा है कि ये वैष्णव रहे होंगे। बंगाल में भी पहले यही धारणा थी। बाबू ब्रजनन्दन सहाय ने अपने समर्पणपत्र में इन्हें 'वैष्णव कवि चूडामणि' लिखा है। किन्तु जनश्रुति और प्रमाण इसके विरुद्ध है। बात यों है कि विद्यापति शृङ्गारिक कवि थे। शृङ्गार के आराध्य देव श्रीकृष्णजी ठहरे। अत शृङ्गारिक वर्णन म राधा कृष्ण के विलास ही वर्णन किये जाते हैं—सभी भारतीय शृङ्गारिक कवियों ने इसी युगल मूर्त्ति को लक्ष्य कर शृगारिक रचनाये की हैं। किन्तु इसीसे किसी कवि को वैष्णव मान लेना ठीक नहीं। विद्यापति के पिता गणपति ठाकुर शैव थे। आपने शिव की उपासना के बाद ही यह पुत्ररत्न प्राप्त किया था। ऐसी अवस्था में विद्यापति का शैव होना बहुत सम्भव है। जनश्रुति भी ऐसी ही है। यही नहीं, विद्यापति का एक पद यों है—

आन चान गन हरि कमलासन
सब परिहरि हम देवा।
भक्त वछल प्रभु बान महेसर
जानि कएलि तुअ सेवा॥

'कोई चन्द्र की पूजा करते हैं। कोई विष्णु की पूजा करते हैं। किन्तु मैंने सबको छोड़ दिया। हे बाण महेश्वर, भक्तवत्सल जानकर मैंने तुम्हारी ही सेवा की।' ये बाण महेश्वर कौन हैं? विद्यापति के गाँव बिसपी से उत्तर भेड़वा नामक एक गाँव में बाणेश्वर महादेव हैं। प्रवाद है कि विद्यापति उसी महादेव की उपासना करते थे। यही नहीं, विद्यापति के बनाये हुए अनेकानेक शिवगीत या नचारियाँ हैं जो मिथिला में उनकी पदावली से भी अधिक प्रसिद्ध हैं। मिथिला में उनकी पदावली तो विशेषत स्त्रियों में प्रचलित है—विशेषत स्त्रियाँ ही उनके पद गाती हैं। पुरुषों में तो नचारियाँ ही प्रसिद्ध हैं। झुंड के झुंड कोकिलकंठी रमणियाँ जिस प्रकार तीर्थस्थानों को जाती हुई विद्यापति के मधुर पद गाती झूमती जाती हैं, उसी प्रकार तीर्थयात्री पुरुषों के झुंड प्रेम से नचारियाँ गाते हैं।

कहते हैं, स्वयं महादेव इनकी भक्ति पर मुग्ध थे। एक दिन एक अपरिचित आदमी इनके निकट आया और इनसे नौकरी करने की अनुमति माँगी। विद्यापति ने उसे रख लिया। उसका नाम 'उगना' था—कोई कोई 'उदना' भी कहते हैं। यह स्वयं महादेवजी थे। 'उगना' इनके यहाँ रहने लगा। वह सदा इनकी फरमाबरदारी में रहता। एक दिन 'उगना' के साथ विद्यापति कहीं जा रहे थे। रास्ते में इन्हें प्यास लगी। उगना से कहा। उगना चल पड़ा। थोड़ी ही देर में वह एक लोटा पानी लेकर लौटा। विद्यापति

जे मोर कहता उगना उदेस।
ताहि देवओ कर कँगना वेस॥
नन्दन वन में भेटल महेस।
गोरि मन हरखित मेटल कलेस॥
विद्यापति भन उगना सों काज।
नहि हित कर मोर त्रिभुवन राज॥

इस तरह के कई पद हैं। यद्यपि इस नास्तिकवाद के वैज्ञानिक युग में इस कथा पर लोगों को विश्वास न होगा, किन्तु ऐसी घटनाओं से प्राचीन भारतीय इतिहास भरा-पड़ा है।

इन सब बातों से यही सिद्ध होता है कि विद्यापति वैष्णव नहीं, वरन् शैव थे। हाँ, यह बात निस्सन्देह सत्य है कि वे आज कल के शैवों की तरह विष्णु द्रोही नहीं थे। वे शिव और विष्णु को एक ही रूप की दो कलायें मानते थे। आपका यह पद है—

भल हरि भल हर भल तुअ कला।
खन पित वसन खनहि वघछला।-इत्यादि

साथ ही साथ देवियों (खास कर दुर्गा) की स्तुति जिस प्रकार इन्होंने की है उससे लोगों के मन में जरा भी सन्देह इनके शाक्त होने के विषय में नहीं रह सकता है। इनकी आलोचना करने पर ऐसा ही विश्वास दृढ़ होता है कि आधुनिक मैथिलों की तरह ये शिव, विष्णु तथा चंडी तीनों को मानते थे, पर किसी एक विशेष सम्प्रदाय के अनुयायी नहीं थे। यदि आप आज मैथिलों के सिर का चन्दन देखेंगे तो बात स्पष्ट हो जायगी। वे एक ही साथ भस्म भी धारण करते, श्रीखण्ड

चन्दन भी और सिन्दूर की बिन्दु । उपयुक्त तीनो देवताओं की ये तीनों निशानियाँ हैं । वह तीनो को समान आदर की दृष्टि से देखता है पर किसी एक सम्प्रदाय का नहीं है ।

विद्यापति के आश्रयदाता शिवसिंह

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, विद्यापति के प्रधान आश्रय दाता राजा शिवसिंह हैं । इन्हींकी छत्रछाया में रहकर विद्यापति ने अपने अधिकाश पदो की रचना की थी । जिस प्रकार शिवसिंह ने प्रचुर सम्पत्ति देकर इन्हें सासारिक झझटों से मुक्त कर दिया था, उसी प्रकार, बदले में विद्यापति ने उनका और उनकी धर्मपत्नी लखिमा देवी का नाम अपने पदो म देकर उन्हें अजर अमर बना दिया है । शिवसिंह का भौतिक दान तो थोड़े ही दिनों में विलीन हो गया, कि तु विद्यापति ने उन्हे जो यश का दान दिया वह अनन्त काल तक ससार में विद्यमान रहेगा ।

लोगो को स्वभावत यह उत्कठा होगी, कि ये शिवसिंह कौन थे ? मिथिला के नवीन युग के शासकों म सिमराँव और सुगाँव ये दो राजघराने अधिक प्रसिद्ध हैं । राजा शिवसिंह सुगाँव राजघराने म हुए थे । सुगाँव राजघराने के पहले सिमराँव राजघराने के लोग शासन करते थ । इनकी राजधानी सिमराँव गढ में थी—जो वर्त्तमान चम्पारण जिले में है । सिमराँव क राजा क्षत्रिय थ । इस राज्य के सस्थापक नान्यदेव थ । इसी राजकुल में सुप्रसिद्ध हरिसिंह देव हुए थ, जिन्होने नेपाल विजय किया था । हरिसिंह देव क मन्त्री विद्यापति के पूर्वज चण्डेश्वर थे और उनके राजपडित कामेश्वर ठाकुर ।

कहा जाता है कि एक समय हरिसिंह देव ने एक वृहद् यज्ञ
न किया था। किन्तु अन्य राजाओं द्वारा यज्ञभ्रष्ट कर दिया
, जिससे विरक्त होकर वे जंगल में चले गये। इसी समय
मर पाकर दिल्ली के बादशाह ने मिथिला पर चढ़ाई की।
थिला में उस समय अराजकता फैल रही थी। दिल्लीश्वर का
मनोरथ पूरा हुआ–मिथिला का शासन सब मुसलमानों के हाथ
आया। इस अवसर पर राजपंडित कामेश्वर ठाकुर ने बादशाह से
की। बादशाह* उनके गुण से अत्यन्त संतुष्ट हुए। उनके अरवी
र करने पर भी उन्हींको मिथिला प्रदेश का शासक नियुक्त
या। तभी से मिथिला का शासन ब्राह्मणों के हाथ में आया।
कामेश्वर ठाकुर ओयनवार ब्राह्मण थे। उनके पूर्वपुरुष प० ओयन
कुर ने किसी राजा से (सम्भवतः नान्यदेव से) 'ओयनी' नामक
न उपहार में पाया था। 'ओयनी' गाँव दरभङ्गा जिले में पूसा-
स्टेशन के निकट है। 'ओयनी' गाँव में बसने के कारण इस
को 'ओयनवार वंश' कहते हैं।

ओयनवार वंश के सबसे प्रथम राजा यही प० कामेश्वर हुए।
मेश्वर के बाद उनके पुत्र भोगेश्वर और उनके बाद उनके पुत्र
श्वर राजा हुए। गणेश्वर के दो बेटे थे–वीरसिंह देव और कीर्ति
ह। इन्हीं कीर्तिसिंह के दरबार में विद्यापति ने कीर्तिलता का
र्माण किया था। कीर्तिसिंह और उनके भाई वीरसिंह निःसन्तान
तब भोगेश्वर के भाई भवसिंह के बेटे देवसिंह राजा हुए।
राजा शिवसिंह महाराज देवसिंह के पुत्र थे। इनकी राजधानी

*उस समय गयासुद्दीन का राज्यकाल था — लेक।

गजरथपुर नामक नगर में बागमती के किनारे थी। विद्या
आश्रयदाता राजा शिवसिंह की राजधानी गजरथपुर में
यह गजरथपुर कहाँ है ? दरभंगे से ४-५ मील
दक्षिण कोने पर 'सिंहइसिहपुर' नामक एक गाँव है,
का कहना है उसीका दूसरा नाम गजरथपुर था। वहा
पता लगाने पर एक वृद्ध ब्राह्मण से मालूम हुआ कि यहीं शिव
की राजधानी थी। वृद्ध ने बतलाया कि इधर भी उस गढ़
खोदने से कभी कभी सोना चाँदी आदि द्रव्य मिलते थ। किन्तु
गढ़ का कहीं पता नहीं है—जहाँ पहले गढ़ था, वहाँ खेत लग
रहे हैं। शिवसिंह के प्रति विद्यापति की इतनी अनुरक्ति देख
मालूम होता है ये बड़े ही रसिक और काव्यमर्मज्ञ* पुरुष थ
विद्यापति के पदों में इनके नाम के साथ-साथ इनकी प्राणप्रिय
महारानी लखिमा देवी का भी नाम है। इस प्रकार रानी क
नाम पदों में देने से लोगों ने उल्टा सीधा बहुत कुछ अनुमान
किया है। किन्तु यथार्थ बात तो यह है कि विद्यापति ने जहाँ
कहीं किसी राजा का नाम दिया है, वहा साथ ही साथ साधारण
तथा उसकी स्त्री का नाम भी दिया है।

शिवसिंह और लखिमा देवी के नाम पदों में दान

*विद्यापति के ही समान अन्य कितने कवि भी शिवसिंह के द
बार में थे। उन्हीं में से एक थे उमापति, जो 'पारिजातहरण' औ
"रुक्मिणी परिणय' नामक भाषा-नाटकों के रचयिता कहे जाते
लोग पहले इन दोनों नाटकों के रचयिता विद्यापति को मानते थ
—लेख

विषय में मिथिला में एक प्रवाद है। वह यह है, कि विद्यापति जिन पदों का रचना करते थे वे सब राजा के अन्त पुर में गाये जाते थे। राजा रानी दोनों अंत पुर में एकत्र बैठते, उनके चारों ओर स्त्रियाँ आ बैठतीं उस समय केटो (चेरी) नाम की गायिकाओं की श्रेणी शिवसिंह और लखिमा देवी की भणिता युक्त विद्यापति के पद गाने लगतीं। 'केटी' स्त्रियाँ गानविद्या में निपुण होती थीं। वे महल में किसी काम के लिये नियुक्त की जातीं। विद्यापति के पदों में लखिमा के अतिरिक्त शिवसिंह की अन्य रानियों की भी नाम आये हैं। सम्भवत लखिमादेवी ही पटरानी रही हों, या इन्हींपर राजा की अधिक आसक्ति रही हो।

शिवसिंह जिस प्रकार कलाविद् थे, उसी प्रकार वीर योद्धा भी थे। उनको यह बात बहुत अखरती रही कि यवनों के अधीन हैं। पिता के जीवन में ही एक बार उन्होंने दिल्ली कर भेजना बन्द कर दिया, जिसपर मुसलमानी फौज मिथिला आई। दैव- दुर्विपाक से शिवसिंह कैद करके दिल्ली ले जाये गये। देवसिंह ने अधीनता स्वीकार कर अपना राज्य तो प्राप्त कर लिया किंतु पुत्रशोक से पीड़ित रहने लगे। इधर विद्यापति को भी शिवसिंह के बिना चैन कहाँ? लखिमा की दशा का क्या पूछना? विद्यापति अपनी जान पर खेलकर मित्रसिंह का उद्धार करने पर तुल गये। कविजी दिल्ली पहुँचे। वहाँ जाकर अपना परिचय दिया। सुलतान ने हुकुम दिया कि अगर शायर हो, तो कुछ करामात दिखाओ। विद्यापति ने कहा कि मैं अदृष्ट का हूबहू वर्णन कर सकता हूं। सुल्तान ने एक सद्यस्नाता सुन्दरी का वर्णन करने को कहा। विद्यापति गाने लगे—

कामिनी करए सनाने।
हेरितहि हृदय हनए पचबाने। आदि

सुलतानको इससे भी सतुष्टि नहीं हुई। विद्यापति एक काठ के सन्दूक में बद कि‍ये गये और वह सन्दूक कुएँ में लटका दिया गया। ऊपर एक सुन्दरी स्त्री आग फूँकती हुई खड़ी की गई। तब विद्यापति से कहा गया, कि ऊपर जो कुछ है उसका वर्णन करो। विद्यापति सदूक के अन्दर से गाने लगे—

सजनि निहुरि फुकु आगि।
तोहर कमल भमर मोर देखल
मदन ऊठल जागि।
जों तोंहे भामिनि भवन जएबह
एबह कोनह बेला।
जों ए संकट सौं जी बाँचत
होयत लोचन मेला॥

बादशाह अत्यन्त प्रसन्न हुआ। राजा सिवसिंह छोड़ दिये गये। तब विद्यापति ने निम्नलिखित पद कहा—

भन विद्यापति चाहथि जे निधि
करथि से से लीला।
राजा सिवसिंह बँधन मोचल
तखन सुकवि जीला॥

राजा सिवसिंह की दानशीलता की कहानियाँ अभी तक मिथिला में प्रचलित हैं। इन्होंने अपने पिता का तुलादान कराया था। कितने ही तालाब इन्होंने खुदवाये थे। प्राचीन कमला नदी

के किनारे लहेरा नामक गाँव में इन्होंने 'पोखरौव' नामक एक तालाब खुदवाया था। कहते हैं, इन्होंने अपना निवासस्थान भी बनवाया था। इसका भग्नावशेष अभी तक पाया जाता है। मधुबनी से दक्षिण पतौल नामक गाँव में इनका खुदवाया हुआ एक तालाब है, जिसके विषय में यह कहावत प्रसिद्ध है—

पोखरि रजोखरि और सब पोखरा
राजा शिवसिंह और सब छोकरा ॥

राजा शिवसिंह बहुत दिनों तक युवराज के रूप में कार्य करते थे, किन्तु प्रजा इन्हें ही अपना राजा समझती थी। देवसिंह तो केवल नाम मात्रक राजा थे। युवराजावस्था में ही ये महाराज कहे जाते थे, जैसा कि पहले वर्णन हो चुका है। ल० २९३ में देवसिंह की मृत्यु हुई। ठीक उसी समय दिल्लीश्वर ने भी मिथिला पर चढ़ाई कर दी। दिल्लीश्वर के साथ बंगाल के नवाब भी थे। शिवसिंह के लिये बड़े संकट का समय था। एक ओर पिता का श्राद्धादि कर्म, दूसरी ओर युद्ध का आयोजन। विद्यापति ने प्राकृत मिश्रित एक पद में शिवसिंह की इस विजय की चर्चा यों की है—

अनल रंध्र कर लक्खन नरवइ, सक समुद्द कर अगिनि ससी।
चैत कारि छठि जेठा मिलिओ वार बेहप्पय जाहु लसी॥
देवसिंह जू पुहमी छड्डिअ अद्धासन सुरराए सरू।
दुहु सुरतान नीदे अब सोअओ तपन हीन जग तिमिर भरू॥
देखहु ओ पृथिवी के राजा, पौरुस माझ पुन्न बलिओ।
सत बले गंगा मिलिअ कलेवर देवसिंह सुरपुर चलिओ॥
एकदिस सकल जवन बल चलिओ ओकादिस सेजमराएचरू

दूअओ दलटि मनोरथ पुरओ, गरुअ दाप सिवसिंघ करु
सुरतरु कुसुम घालि दिसि पूरिओ,दुन्दुभिसुन्दरसाद धरु
वीरे छत्त देखन को कारन सुरगन सते गगन भरु।
आरम्भिए अन्तेट्टि महामख राजसूअ असमेध जहाँ।
पंडित घर अचार वर बानिज जाचक काँ घर दान कहा।
विज्जावइ कविवर यह गावए मानव मन आनन्द भओ।
सिंहासन सिवसिंह वइट्ठो,उच्छवे वैरस विसरि गओ॥

शिवसिंह न राजगद्दी पर बैठते ही विद्यापति को बिसपी गाव उपहार में दे दिया। राज्यारोहण के तीन ही वर्ष बाद पुन यवन सेना मिथिला पर आ चढ़ी। पहली बार पराजित होने के कारण स्वभावत ही बादशाह ने बड़ी तैयारी की थी। शिवसिंह दूरदर्शी थे, भविष्य समझ गये ? किन्तु तो भी अधीनता स्वीकार करना उन्हें नापसन्द हुआ। आपने अपनी स्त्रियों को विद्यापति के साथ अपने मित्र राजा पुरादित्य के पास रजाबनौली (नेपाल तराई) भेज दिया। राजा शिवसिंह के मित्र राजा पुरादित्य के विषय में भी कुछ विशेष बात मालूम हुई हैं। आप द्रोणवार कुल के ब्राह्मण थे। आप बड़े ही प्रतापशाली थे और अपने बाहुबल से सप्तरी-परगना जीतकर उसमें अपना राज्य स्थापित किया था। विद्यापति अपनी लिखनावली में लिखते हैं—

जित्वा शत्रुकुलं तदीय वसुभिर्येनार्थिनस्तर्पिता
दोर्दण्डार्जित सप्तरी जनपदे राज्य स्थितिः कारिता।
सग्रामेऽर्जुन भूपतिर्विनिहतो बन्धोनृशसायितः।
तेनेय लिखनावली नृपपुरादित्येन निर्मापिता॥

शिवसिंह सेना के साथ बादशाह से जा भिड़े। शिवसिंह शाही सेना का व्यूह भेदकर बादशाह के निकट पहुँच गये और अपनी तलवार से उसका शिरस्त्राण उड़ाते हुए फिर बाहर निकल भागे। इनकी वीरता पर बादशाह मुग्ध हो गया। यवन-सेना इनके पीछे दौड़ी, तो उसने मना कर दिया। शिवसिंह वहां से नेपाल की ओर जगल में चले गये और फिर अपने राज्य में न लौटे। कोई कोई कहते हैं, वे मारे गये।

शिवसिंह की मृत्यु (अथवा पलायन) के बाद मालूम होता है विद्यापति बहुत दिना तक लखिमा देवी* के साथ रजावनौली में ही रहे। क्योंकि यहीं पर २९९ लक्ष्मणाब्द में यहाँ के राजा पुरादित्य के लिये आपने 'लिखनावली' लिखी। यही नहीं, ३०९ लक्ष्मणाब्द म आपने हस्तलिखित भागवत की पोथी भी यहीं समाप्त की। 'लिखनावली' के बाद आपने शिवसिंह के भाई पद्मसिंह की स्त्री विश्वास देवी के लिये दो ग्रन्थ लिखे। इन दोनों ग्रन्थों में समय नहीं दिये गये हैं। पद्मसिंह के उत्तराधिकारी हरिसिंह के लिये आपने 'विभागसागर' की रचना की थी। उनकी स्त्री धीरमती के लिये 'दान वाक्यावली' लिखी गई थी। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, इनकी अन्तिम रचना दुर्गा भक्ति तरंगिणी है। यह नर-

* लखिमा देवी की विद्वत्ता, चतुरता और प्रत्युत्पन्नमतित्व की अनेक जन श्रुतियाँ मिथिला में प्रचलित हैं। किसी किसी ऐतिहासिक के मत से इन्होंने शिव सिंह के बाद ६ वर्ष तक राज्य भी किया था। किन्तु स्वयं विद्यापति ने भी कहीं इसको ओर इशारा तक नहीं किया है। अत यह बात अप्रामाणिक मालूम होती है—लेखक।

सिंह देव के समय में प्रारम्भ की गई थी, धीर सिंह के राजत्वका में समाप्त हुई थी। धीरसिंह का समय, 'सेतुदर्पिणी' के अनु सार ३२१ लक्ष्मणाब्द है। अतएव, इस समय तक, अर्थात् सवत १४८९ वि० या १४३० † ई० तक इनका जीवित रहना सब प्रकार से सिद्ध है।

विद्यापति की मृत्यु

विद्यापति की मृत्यु कब हुई, इसमें भी विवाद है। जैसा कि लिखा जा चुका है, ३२१ लक्ष्मणाब्द तक उनका जीवित रहना सिद्ध होता है। धीरसिंह के बाद के किसी राजा के नाम से* लिखी गई इनकी कोई पुस्तक नहीं मिलती है, इससे अनुमान होता है, कि धीरसिंह के राजत्वकाल में ही या उसके थोड़े ही दिनों के बाद इनकी मृत्यु हो गई। विद्यापति का एक पद यों है—

सपन देखल हम सिवसिंघ भूप।
वतिस वरिस पर सामर रूप॥
बहुत देखल गुरुजन प्राचीन।
आव भेलहुँ हम आयु विहीन॥

† 'हिस्ट्री आफ तिरहुत' में ३२१ लक्ष्मणाब्द को १४३९ ई० लिखा है—लेखक।

* विद्यापति के एक पद में 'कंसदलन नारायण सुन्दर तसु रंगिनि पप हाइ' ऐसी भणिता है। मैंने भ्रमवश पहले इस 'कंसदलन नारायण' को कंस नारायण नामक मिथिला का राजा समझा था। एक तो नाम में भी भेद है, दूसरे राधा का वर्णन है, अतः वहाँ कृष्ण अर्थ है। कंस नारायण विद्यापति की मृत्यु के बहुत पश्चात् राजा हुए थे। लेखक

सिमटु सिमटु निअ लोचन नीर।
ककरहु काल न राखथि थीर॥
विद्यापति सुगतिक प्रस्ताव।
त्याग के करुना रसक सुभाव॥

इससे पता चलता है कि शिवसिंह की मृत्यु के बत्तीस वर्ष बाद विद्यापति ने उन्हें स्वप्न में देखा था। ऐसी प्राचीन धारणा है कि बहुत दिनों पर यदि अपना कोई मृत प्रेम पात्र मलिन वेष में दीख पड़े, तो मृत्यु निकट समझना चाहिये। यही भाव बड़े ही कारुणिक शब्दों में उपर्युक्त पद में वर्णन किया गया है। शिवसिंह २९६ लक्ष्मणाब्द में मरे थे, अतः ३२८ लक्ष्मणाब्द में विद्यापति ने यह स्वप्न देखा होगा, जो विक्रमीय संवत् १४९४ पड़ता है। यदि हम इस स्वप्न के तीन वर्ष के बाद विद्यापति की मृत्यु मान लें तो वे नब्बे वर्ष की अवस्था में संवत् १४९७ वि० में (या १४४० ईस्वी में) मरे थे। श्री नगेन्द्रनाथ गुप्त ने भी इसी समय को प्रामाणिक माना है।

उस समय विद्यापति बूढ़े हो चले थे। जन्मभर शृंगार रचना में व्यस्त रहने के कारण अन्तिम समय में संसार के प्रति उन्हें अत्यन्त उदासीनता हो गई थी। उन्हें अपना भविष्य अंधकारमय प्रतीत होता था—निराशा की काली घटा ने उनके हृदय-व्योम को आच्छादित कर लिया था। आप अत्यन्त करुण स्वर में गाते हैं—

तातल सैकत वारि बूँद सम, सुत मित रमनि समाज।
तोहें बिसरि मन ताहि समरपिनु अब मझु हब कोन काज॥

माधव, हम परिनाम निरासा।
तुहू जगतारन दीन दयामय अतए तोहर विसवासा॥
आध जनम हम नींद गमायनु जरा सिसु कत दिन गेला।
निधुवन रमनि रभसरँग मातनु तोहे भजव कओन वेला॥

आपने अपनी कविता रचना द्वारा प्रचुर सम्पत्ति प्राप्त की थी। वृद्धावस्था में आप इस धन को देख देखकर कहते हैं—

जतन जतेक धन पापे बटोरल मिलि मिलि परिजन खाए
मरनक बेरि हरि कोइ न पूछए करम संग चलि जाए
ए हरि वन्दों तुअ पद नाय।
तुअ पद परिहरि पाप पयोनिधि पारक कओन उपाय
जावत जनम नहिं तुअ पद सेविनु जुवती मतिमय मेलि
अमृत तजि किए हलाहल पीअनु सम्पद अपदहि मेलि।

विद्यापति अपनी उमर की ओर लक्ष्य कर कहते हैं—

वयस, कतहु चल गेला।
तोह सेवइत जनम बहल, तइओ न अपन भेला॥

वयस, तुम कहा चले गये। तुम्हें सेवत हुए अपना जन्म बिता दिया, किन्तु तुम अपने न हुए।

कहा जाता है, अपना मृत्यु समय निकट आया जान विद्यापति अपने घर के लोगों से बिदा लेकर गंगा सेवन को चले। गंगा-सेवन की प्रथा मिथिला में अद्यावधि प्रचुर रूप से प्रचलित है। गंगा यात्रा के अवसर पर आपने अपने पुत्र को बहुत कुछ उपदेश दिया। उनसे कहा—बेटा, प्रजारंजन करना, अतिथि सत्कार में कभी नहीं चूकना, दूसरे की स्त्री को माता के

तुल्य जानना। पश्चात् विद्यापति अपनी कुल देवी विश्वेश्वरी के निकट गये। देवी से आपने जाने की अनुमति मांगी—कहा, माँ, अब गंगा जा रहा हूँ। जन्म भर शिव की आराधना की। अब विदा दो। घर पर सभी को संतोष दे पालकी पर चढ़कर गंगा की ओर चले। राह में जब गंगा से कुछ दूर पर ही थे, तो आपने अपनी पालकी रखवा दी। एक अभिमानी भक्त की तरह कहा—मैं इतनी दूर से मैया के निकट आया, क्या मैया मेरे लिये दो कोस आगे नहीं बढ़ आयगी? रात बीती। दूसरे ही दिन लोग दृश्य देखकर अवाक् रह गये। गंगा अपनी धारा छोड़, दो कोस की दूरी पर पहुंच गई थी!! अभी तक उस स्थान पर गंगा की धारा टेढ़ी नजर आती है। उस स्थान का नाम 'मऊ बाजितपुर' है। यह मुजफ्फरपुर जिले में है। यहीं विद्यापति की मृत्यु हुई। इनकी चिता पर एक शिव मन्दिर की स्थापना की गई। यह शिव मन्दिर अभी तक विद्यमान है। विद्यापति की मृत्यु तिथि के विषय में एक पद प्रचलित है—

विद्यापतिक आयु अवसान।
कातिक धवल त्रयोदशि जान॥

इनके अनुसार विद्यापति की मृत्यु कार्तिक शुक्ला त्रयोदशी को हुई। यह तिथि प्रामाणिक समझ पड़ती है। कार्तिक महीने में गंगासेवन करने का हिन्दू शास्त्र के अनुसार बड़ा महत्व है। विद्यापति की मृत्यु गंगा तट पर हुई थी—जब कि वे गंगा-सेवन करने गये थे। अत, इस तिथि को अप्रमाणिक मानने का कोई कारण नहीं। तुलसीदास के विषय में भी ऐसा ही एक दोहा

प्रसिद्ध है। जब यह दोहा प्रामाणिक माना जाता है, तो कोई कारण नहीं, कि यह पद प्रामाणिक न माना जाय।

विद्यापति का हस्ताक्षर

हिन्दी म ऐसे बहुत ही कम सौभाग्यशाली प्राचीन कवि है जिनकी हस्त लिपि प्राप्त होती है। विशेषत विद्यापति ऐसे प्राचीन कवि की—जो चन्द को छोड़कर सभी प्रसिद्ध हिन्दी कवियों से पहले हुए थे—हस्तलिपि प्राप्त होना, तो हम लोगा के लिये बड़ा ही सौभाग्य का विषय है। विद्यापति के हाथ मे लिखी हुई उनकी निज रचना, पदावली या सस्कृत पोथियाँ, नहीं पाई जातीं। हाँ एक सटीक भागवत की पोथी विद्यापति के हाथ की लिखी हुई अवश्य पाई जाती है। यह पुस्तक दरभगा से बारह कोस तरौनी नामक गाँव म जयनारायण झा की विधवा पत्नी के पास सुरक्षित है। दरभगा जिले की पण्डितमडली का पूरा विश्वास है, और जनश्रुति से भी यह सिद्ध है कि यह पुस्तक विद्यापति के हाथ से लिखी गई थी। यह पुस्तक ताल पत्र पर लिखी हुई है। प्रत्येक पत्र की लम्बाई दो फुट और डेढ़ इच तथा चौड़ाई सवा दो इच के लगभग है। पत्र की सख्या ५७६ है। पत्र की दोनो ओर लिखावट है। प्रत्येक पृष्ठ म छ पक्तियाँ हैं। लिपि स्पष्ट, अक्षर की आकृति बड़ी, प्रत्येक अक्षर अलग अलग और स्पष्ट, विराम और विभाग का चिह्न सर्वत्र विद्यमान। लिखावट सुन्दर, कहीं भी एक अशुद्धि अथवा लिपि दोष नहीं। रोशनाई प्राय सर्वत्र स्पष्ट। अन्तिम पत्र

काष्ठ के वष्टन के घर्षण और बन्धन के कारण जीर्ण होगया है और लिखावट भी अस्पष्ट हो गई है। ग्रन्थ के शेष म लिखा है—

"शुभमस्तु सर्व्वार्थगता सख्या ल० सं० ३०६ श्रावणशुक्ल १५ कुजे रजाबनौली ग्रामे श्री विद्यापतिलिपिरियमिति।"

अन्तिम दो अक्षर 'मिति पत्राश से छिन्न हो गया है। 'रजाबनौली' गाँव दरभगे से प्राय १५ कोस उत्तर है। शिवसिह २९३ लक्ष्मणाब्द म राज्यासन पर बैठे थ। उनकी मृत्यु उसके तीसरे साल हुई थी। इस तरह उनकी मृत्यु के तेरह साल बाद की यह पोथी है। मालूम होता है, शिवसिह की मृत्यु के बाद विद्यापति का जी सासारिक कार्यों से उचट गया था-कम से कम शृङ्गारिक रचनाओं की ओर से। मित्र-वियोग पर ऐसा होना सम्भव भी है। उसी शोकावस्था में अपनी चित्त की शान्ति के लिये विद्यापति ने यह कष्टकर कार्य प्रारम्भ किया हो।

विद्यापति का परिवार

विद्यापति के बेटे का नाम हरपति था—विद्यापति रचित एक पद म इनका नाम आया है। विद्यापति को एक कन्या भी थी। मिथिला में यह प्रवाद है कि इनकी लड़की का नाम दुलही था। विद्यापति ने कितने पद ऐसे बनाये हैं, जिनमें पति गृह गमन के समय कन्या को उपदेश दिया गया है। उन पदो में दुलही शब्द आया है। कहते हैं, ये पद विद्यापति ने अपनी पुत्री को ही सम्बोधित कर लिखे थे। दुलही का अर्थ नववधू भी होता है। न मालूम क्या रहस्य है? मिथिला के एक वृद्ध ब्राह्मण के घर मे एक पद

प्राप्त हुआ है, जिससे सिद्ध होता है कि इनकी लड़की का नाम दुलही था। अन्तिम काल में विद्यापति कहते हैं—

दुलहि, तोहर कतए छथि माय।
कहुन श्रो श्रावथु एखन नहाय॥

'दुलही तुम्हारी, माँ कहा है, कहो न, वे इस समय स्नान कर आवें।

दरभंगा के वर्तमान राजघराने में नरपति ठाकुर नामक राजा हो गये हैं। उनके दरबार में लोचन नामक एक कवि थे। लोचन ने 'रागतरंगिणी' नामक एक पुस्तक का सकलन किया था। उसमें उसने विद्यापति के बहुत से पद रक्खे हैं। 'रागतरंगिणी' में एक कविता चन्द्रकला नामक एक रमणी की बनाई हुई पाई जाती है। लोचन ने इस कविता पर टिप्पणी की है—"इति श्री विद्यापतिपुत्रवध्वा"। इससे मालूम होता है, चन्द्रकला विद्यापति की पतोहू थी। यहाँ पर चन्द्रकला की उस कविता को उद्धृत करने का लोभ हम सवरण नहीं कर सकते—

स्निग्ध कुञ्चित कोमल कच गडमंडित कोमलम्।
श्रधर बिम्ब समान सुन्दर शरदचन्द्र निभाननम्॥
जय कम्बु कंठ विशाल लोचन सारमुज्वल सौरभम्।
बाहु वल्लि मृणाल पंकज हार शोभित ते शुभम्॥

शोभय सुन्दरि मम हृदयम्।
गदगद हास सुदति निपुणम्॥

उर पीन कठिन विशाल कोमल याति युग्म निरन्तरम्।
श्री फला कमला विचित्र विधातु निमल कुच वरम्॥

श्यामा सुवेषा निवलिरेखा जघन भार विलम्बिते।
मत्त गज-कर जघन युगवर गमन गति वरटा-जिते॥
सुललित म द गमन करई।
जनि पति संग वरटा भमई॥
अति रूप यौवन प्रथम सम्भव किं वृथा कथया प्रिये।
तेजह रूप विमोह परिहर शोक चिन्तित चिन्तये॥
उपयात मदन-व्याधि दु सह दहए पावक से वनम्।
पवन दिसे दिसे दहए पावक युग्मदारज सम्बरम्॥
श्यामा सवन्दिते।
अति समय गीत सुशोभिते॥
आत्म दान समान सुन्दरि धार वपति सिञ्चये।
सिञ्चह सुन्दरि मम हृदयम्।
अधर सुधा मधु पानमियम्॥
चन्द्र कवि जयदेव मुद्रित मान तज तोहें राजिके।
वचन मम धर कृष्णमनुसर किन्तु काम कला शुभे॥
चन्द्रकला हे वचन करसी।
मानिनि माधवमनुसरसी॥

विद्यापति और पक्षधर मिश्र

पक्षधर मिश्र मिथिला क प्रकाण्ड विद्वान् हो गये हैं। आप विद्यापति के सहपाठी थे। विद्यापति ने विसपी गाव में एक अतिथि शाला निर्माण कर रखी थी। प्रतिदिन भोजन के पश्चात् स्वयं विद्यापति अतिथिशाला में जाते और अतिथियों से वार्तालाप करते।

प्रवाद है कि एक दिन जब विद्यापति अतिथिशाला में गये तो सभी अतिथि इनकी अभ्यर्थना में खड़े हो गये। केवल कोने में एक अत्यन्त कृश पुरुष बैठा ही रहा। विद्यापति के पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि इन्होंने भोजन नहीं किया है। उस पुरुष की दुर्बलता और कृशता पर इनके मुख से सहसा निकल गया—

"प्राघूनो घुणवत् कोणे सूक्ष्मत्वान्नोपलक्षित।"

'घर के कोन में सूक्ष्म कीट (घुन) वत् अतिथि सूक्ष्मता के कारण नहीं दीख पड़े।'

बैठे हुए पुरुष ने तुरत उस श्लोक की पूर्ति करते हुए उत्तर दिया

"नहि स्थूलधिय पुस सूक्ष्मे दृष्टि प्रजायते॥"

'स्थूलबुद्धि पुरुष को सूक्ष्म पदार्थ नहीं दीख पड़ता। विद्यापति थोड़ी सुनते ही अपने सहपाठी को पहचान गये। उन्हें आदरपूर्वक अपने घर में ले गये। पक्षधर मिश्र सम्भवत विद्यापति से कुछ छोटे थे। उनके स्वहस्तलिखित एक विष्णुपुराण में ३५४ लक्ष्मणाब्द लिखा हुआ है।

विद्यापति के प्रति विद्वेष

बड़े लोगों के प्रति उनके समकालीन सदा द्वेष रखते आये हैं, यह बात सर्वत्र प्रसिद्ध है। विद्यापति के भी कुछ लोग विद्वेषी थे। विद्यापति शिवभक्त थे। शिव की पूजा करते समय, आराधना में, जिस प्रकार नचारी गाया करते, वे नाचने लगते थे। इसी कारण कुछ लोग उन्हें 'नटक' नाम से पुकारते थे। ... विद्यापति के एक और प्रसिद्ध विद्वेषी का पता है।

नका नाम है केशव मिश्र। इनका समय ४७२ लक्ष्मणाब्द है, थात् विद्यापति के लगभग सौ वर्ष पश्चात्। ये प्रसिद्ध शाक्त थे। द्वैत परिशिष्ट नामक स्वरचित ग्रन्थ में इन्होंने देवीभागवत को माणिक ग्रन्थ प्रतिपादित किया है। विद्यापति ने अपने हाथ से भागवत लिखा था, इसलिये ये उनसे चिढ़ से गये थे। केशव मिश्र विद्यापति को 'अविलुप्त नगरयाचक' नाम से उपहास रते थे। विद्यापति ने बिसपी गाँव उपहार रूप में ग्रहण किया था-सी लिये वे 'नगरयाचक' थे। द्वेष का कोई ठिकाना है! ये महा-य शिवसिंह के कुल की दौहित्र संतान थे। राजकुटुम्ब के पुरुष । अतएव ऐसी उद्दण्डता स्वाभाविक भी है!

—*—

पदावली

यद्यपि विद्यापति ने लगभग एक दर्जन संस्कृत ग्रन्थों का निर्माण किया था, तथापि उनकी प्रसिद्धि का खास कारण है उनकी पदावली। गाने योग्य छन्द 'पद' कहे जाते हैं। विद्यापति ने जितने छन्द बनाये, सभी संगीत के सुर-लय से बँधे हुए हैं। विद्यापति ने कविता में अपना आदर्श जयदेव को माना है—और इन्हें 'अभिनव जयदेव' कहते भी थे। अतः, जयदेव के ही समान व संगीत पूर्ण कोमल कान्त पदावली में श्रृंगारिक रचना करते थे। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, दरभंगे के वर्त्तमान अधिपति के पूर्वपुरुष नरपति ठाकुर के समय में 'लोचन' नामक एक कवि हो गये हैं। इन्होंने अपनी 'रागतरंगिणी' नामक पुस्तक में लिखा है कि सुमति नामक एक कलाविद् कायस्थ कत्थक के लड़के जयत को राजा शिवसिंह ने विद्यापति के निकट रख दिया था। विद्यापति पद तैयार करते थे, जयत उसका 'सुर' ठीक करता था—

सुमति सुतोदय जन्मा जयत शिवसिंहदेवेन।
पंडितवर कविशेखर विद्यापतये तु सन्न्यस्त॥

बिना संगीत का मर्म जाने संगीत की रचना नहीं की जा सकती। मालूम होता है, विद्यापति स्वयं भी गान विद्या में पारंगत थे। विद्यापति के पदों में कहीं-कहीं छन्दोभंग-सा दीख पड़ता है। सूरदास के पदों में यही बात पाई जाती है। किन्तु यथार्थतः ऐसी बात नहीं है। संगीत के सुरलय के अनुसार जो पद बनाये जाते हैं उनमें 'ध्वनि' का ही विचार किया जाता है, अक्षर और मात्रा का नहीं। इसीसे संगीत से अपरिचित व्यक्तियों को पदों में छन्दोभंग का आभास हो जाता है।

पदावली का रूप

विद्यापति ने कितने पद बनाये थे, इसका भी अभी तक पूरा पता नहीं चला है। श्री नगेन्द्रनाथ गुप्त ने ९४५ पदों का संग्रह प्रकाशित किया था। बाबू ब्रजनन्दन सहायजी का संग्रह इससे बहुत छोटा है, तथापि उसमें कुछ ऐसे पद हैं, जो नगेन्द्रनाथ गुप्त वाले संस्करण में नहीं हैं। सहायजी के नये पदों में नचारियों की प्रधानता है। किन्तु अभी तक विद्यापति के बहुत से अनूठे पद अप्रकाशित ही हैं। मिथिला की स्त्रियाँ जिन पदों को विवाह के अवसर पर गाती हैं उनका, तथा बहुत सी नचारियों का, अभी संकलन नहीं हुआ है।

पदावली के प्राचीन संस्करणों को देखने से पता चलता है, कि विद्यापति ने पदों की रचना विषय विभाग के अनुसार नहीं की थी। बिहारी के ही समान विद्यापति भी, जब उमंग में आते थे, रचना कर डालते थे। पीछे लोगों ने उन्हें अलग अलग विभाग कर सजा लिया।

पदावली की हस्तलिखित पोथियाँ

यों तो विद्यापति के अधिकांश पद लोगों को कंठस्थ ही हैं और उन्हींका संग्रह 'पदकल्पतरु' आदि बँगला के प्राचीन संग्रह ग्रंथों में है, किन्तु हाल में तीन प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथ मिले हैं, जिनसे विद्यापति के कितने नवीन पद प्राप्त हुए हैं, और पदावली की प्रामाणिकता का पूरा पता चला है।

उन ग्रंथों में सबसे प्राचीन और प्रामाणिक तालपत्र पर लिखी हुई एक पोथी है। यह पोथी श्री विद्यापति लिखित 'भागवत' के साथ तरौनी ग्राम के स्वर्गीय पंडित लोकनाथ झा के घर में सुरक्षित

पाई गई है। कहा जाता है कि विद्यापति के प्रपौत्र ने इसे
था। इस पोथी की लिखावट और उसके तालपत्र को देखने
मालूम होता है कि कम से-कम तीन सौ वर्षों का यह प्राचीन
लापरवाही से रखने के कारण यह पोथी जीर्ण शीर्ण हो गई
पहला और दूसरा पत्र गायब है। फिर नवाँ नहीं है। इसके
८१ से लेकर ९९ पत्र एकबार ही नहीं है। १०३ नम्बर का
भी गायब है। १३२ पत्र के बाद का कुछ भी अंश नहीं मिलता
सम्पूर्ण पोथी न होने के कारण यह पता नहीं चलता कि यह
लिखी गई, किसने इसे लिखा और कुल कितने पद इसमें थे
इस पोथी में लगभग ३५० पद बचे हुए हैं।

दूसरी पोथी नेपाल में पाई गई है महामहोपाध्याय हरप्रसाद
शास्त्री ने प्रथम प्रथम इसे नेपाल दरबार के पुस्तकालय में द
था। यह पोथी बहुत सुरक्षित है। किन्तु इस पोथी की भाषा
नेपाल तराई (मोरंग) की बोली की छाप स्पष्ट दीख पड़ती है
मालूम होता है इसे किसी मोरंग निवासी ने लोगों से सुनकर
लिखा था जिसमे ऐसी गलती हुई है। इस पोथी में लगभग ३०
पद हैं। तीसरी पोथी है रागतरंगिणी। इसकी चर्चा पहले
चुकी है। इसमें लोचन ने विद्यापति के बहुत से पद रक्खे है
प्रत्येक पद के राग का निर्णय भी किया है। छन्द के नियम
मात्राओं की संख्या भी दी है। रागतरंगिणी ढाई सौ वर्ष
प्राचीन पोथी है। लोचन ने लिखा है—अपभ्रंश भाषा की रचना
प्रथम प्रथम विद्यापति ने ही की।

पदावली की भाषा

पदावली की भाषा भी अब तक विवाद ग्रस्त रही है। बंगाली
विद्यापति को बँगला का प्रथम कवि या ब्रजभाषा का प्रवर्तक

ानते हैं। इसी लिये उन्होंने विद्यापति को बंगाली सिद्ध करने की
ी चेष्टा की थी। किन्तु अब तो यह सब प्रकार सिद्ध हो गया कि
द्यापति मैथिल थे। मैथिला की एक खास बोली है—उसे 'मैथिली'
हते हैं। विद्यापति भी मैथिल थे, अत मैथिल लोग इन्हें अपनी
बोली मैथिली का प्रथम कवि मानते हैं। यथार्थ में यही ठीक है।

किन्तु यह मैथिली बोली किस भाषा की शाखा है—बंग
भाषा की या हिन्दी भाषा की। बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त ने मैथिली
को बजबोली (या हिन्दी) की एक शाखा माना है। गुप्त जी
प्राचीन विद्या महार्णव' कहे जाते हैं। उनका निर्णय अधिक मूल्य
रखता है। हमारी राय भी गुप्तजी स मिलती है। मिथिला बंग
देश से सटी हुई है— विद्यापति का जन्म दरभंग में हुआ था, जो
द्वारबंग' या बंगाल का द्वार है—इसलिये मैथिली पर बंगभाषा
का प्रभाव जरूर पड़ा है। यदि हम कह सकें, तो कह सकते हैं कि
मैथिली का शरीर हिन्दी का है, और उसकी पोशाक बँगला की।
जिस प्रकार कोई हिन्दुस्तानी अँगरेजी पोशाक पहनकर अँगरेज
नहीं बन जा सकता, उसी प्रकार मैथिली हिन्दी को छोड़कर
बंगभाषा की नहीं हो सकती। हाँ, बंगभाषा के संसर्ग से इसमें
मिठास अवश्य आ गई है।

पदावली की भाषा आज कल की मैथिली से कुछ भिन्न है।
यह स्वाभाविक भी है। विद्यापति का हुए पाँच सौ वर्ष हुए। इन
पाँच सौ वर्षों में भाषा में अवश्य कुछ न कुछ परिवर्त्तन होना
सम्भव है। कुछ मैथिल महाशय विद्यापति के पदों की भाषा को
तोड़ फोड़कर आज कल की मैथिली बोली से मिलाने का अनुचित

प्रयत्न करते हैं। किन्तु क्या वे समझने की चेष्टा करेंगे, कि
करके वे विद्यापति की स्वर्गीय आत्मा को कितना कष्ट पहुँचा र

विद्यापति की भाषा का दुर्दशा भी खूब हुई है। बंगालि
उसे ठेठ बंगला रूप दे दिया है, मोरँग वालों ने मोरँग का
चढ़ाया है बाबू ब्रजनन्दन सहाय जी ने उसपर भोजपुरी की
की है और आज कल के मैथिल उसपर आधुनिक मैथिली
रौगन चढ़ा रहे हैं। भगवान विद्यापति की कोमलकान्त पद
की रक्षा करें।

पदावली की विशेपता

विद्यापति की पदावली अपना खास स्वरूप, अपना खास रा
रखती है। वह कहीं भी रहे, आप उसे कितने की कविताओं
छिपाकर रखिये वह स्वय चिल्ला उठेगी—मैं हिन्दीकोकिल
काकली हूं। जिस प्रकार हजारों पक्षियां के कलरव को चा
हुई, कोकिल की काकली, आकाश पाताल को रसप्लावित करत
अलग से अलग अपना स्वतंत्र अस्तित्व प्रकट करती है, उसी प्रका
विद्यापति की कविता भी अपना परिचय आप देती है। बंगाल के यशो
हर जिले में बसन्त राय नामक एक कवि हो गये हैं विद्यापति के प
का प्रचार देखकर आपने भी विद्यापति के नाम से कविता करन
प्रारम्भ कर दिया था। किन्तु वे अपनी कविताएं विद्यापति क
कविता में नहीं खपा सके। विद्यापति की भाषा उनकी खास अप
भाषा है, उनकी वर्णनप्रणाली उनकी खास वर्णनप्रणाली है, उनके
भाव स्वयं उनके हैं। उनकी पदावली पर 'खास' की मुहर ल
हुई है। बंगाल के सैकड़ों कवियों ने इनके अनुकरण पर कवि
ताएं कीं, किन्तु कोई भी इनकी छाया न छू सके।

विद्यापति एक अजीब कवि हो गये हैं। राजा की गगन चुम्बी अट्टालिका से लेकर गरीबा की टूटी हुई फूस की झोपड़ी तक में उनके गीतों का आदर है। भूतनाथ के मन्दिर और 'कोहबर घर' में इनके गीतों का समान रूप से सम्मान है। कोई मिथिला में जाकर तमाशा देखे। एक शिवपुजारी डमरू हाथ में लिये त्रिपुण्ड चढ़ाये, जिस प्रकार "कखन हरब दुख मोर हे भोलानाथ" गाते गाते तन्मय हो कर अपने आप को भूल जाता है, उसी प्रकार कलकंठी कामिनियाँ नववधू को कोहबर में ले जाती हुई "सुन्दरि चललिहुँ पहु घर ना, जाइतहि लागु परम डर ना" गाकर नव वरन्वधु के हृदयों को एक अव्यक्त आनन्द स्रोत में डुबो देती हैं। जिस प्रकार नवयुवक 'ससन-परस खसु अम्बर रे देखलि धनि देह' पढ़ता हुआ एक मधुर कल्पना से रोमांचित हो जाता है, उसी प्रकार एक वृद्ध 'तातल सैकत वारिबुन्द सम सुत मित रमनि समाज, तोहे बिसारि मन तोहि समरपिलु अब मझु हब कौन काज, माधव, हम परिनाम निरासा' गाता हुआ अपने नयनों से शत शत अश्रुबूँद गिराने लगता है। गियर्सन का यह कहना कितना सत्य है—

Even when the sun of Hindu religion is set, when belief and faith in Krishna, and in that medicine of 'disease of existence' the hymns of Krishna's love, is extinct, still the love borne for songs of Vidyapati in which he tells of Krishna & Radha will never diminished

डाक्टर ग्रियर्सन के कथन का प्रमाण बंगाल में जाकर देखिये।

सहस्र सहस्र हिन्दू आज तक विद्यापति के राधाकृष्ण विष
पदों का कीर्तन करते हुए अपने आपको विस्मरण कर देते हैं
एक जगह पुन आप लिखते हैं—

The glowing stanzas of Vidyapati are re
by the devout Hindu with a little of the ba
part of the human sensuousness as the songs
the Solmon by the Christian priests

विद्यापति की उपमाय अनूठी और अछूती हैं, उनकी उत्प्रेक्षा
कल्पना के उत्कृष्ट विकास के उदाहरण हैं, रूपक का इन्होंने
रूखा कर दिया है। स्वभावोक्ति से इनकी सारी रचनायें ओ
प्रोत हैं, श्रुत्यानुप्रास इनके पदों का स्वाभाविक आभूषण है, प्राय
काव्यगुण प्रसाद और माधुर्य इनके पद पद से टपकते हैं, प्रकृति
वर्णन में तो इन्होंने कमाल किया है—इनका वसंत और पाव
काल का वर्णन पढ़कर मन्त्र मुग्ध हो जाना पड़ता है। इनके वसंत
और पावस में मिथिला का खास छाप है। वसंत के समय
मिथिला की शश्यश्यामला मही जिस प्रकार अलंकृत और आभूषि
हो जाती है, वह दर्शनीय है। पावस में, हिमालय निकट होने
कारण, यहाँ बिजलियाँ बड़ी जोर से कड़कती हैं–प्राय कुलिशपात
होता है। विद्यापति ने इसका बड़ा ही अपूर्व वर्णन किया है।
विद्यापति का मिलन और विरह का वर्णन भी देखने योग्य है।
हिन्दी कवियों ने विरह के नाम पर, हाय-हाय का ही बवंडर उठाया
है—उनके विरह-वर्णन में, घनआनन्द आदि दो चार को छोड़कर
हृदय वेदना का सूक्ष्म विश्लेषण प्राय नहीं देखा जाता। विद्या

पति का विरह-वर्णन प्रेमिका के हृदय की तस्वीर है—उसमें वेदना है, व्याकुलता है, प्रियतम के प्रति तल्लीनता है। कोरी हाय हाय वहाँ है नहीं।

उपसंहार

'विद्यापति' नाम से हम एक समालोचनात्मक ग्रन्थ शीघ्र लिखने का विचार कर रहे हैं। उसमें विद्यापति की कविताओं की तुलनात्मक समालोचना रहेगी—विशेषत हिन्दी के सुप्रसिद्ध शृंगारिक कवियों की रचनाओं से विद्यापति की पदावली की तुलना की जायगी। इस समय हम अपनी यह तुच्छ सेवा राष्ट्र भाषा के प्रेमियों के निकट उपस्थित करते हुए विनम्र शब्दों में प्रार्थना करते हैं, कि जिस कविता की माधुरी पर मुग्ध होकर महाप्रभु चैतन्यदेव गाते-गाते मूर्च्छित हो जाते थे, जिस कविता की खूबियों पर विदेशी विद्वान् ग्रिअर्सन लोट पोट थे, जिस कविता के आधार पर मैथिली बोली आज कलकत्ता विश्वविद्यालय में यह स्थान प्राप्त कर सकी है, जिस स्थान की प्राप्ति के लिये, हिन्दी भाषी प्रान्तों के विश्वविद्यालय में ही, माँ हिन्दी तड़प रही है, हिन्दी के जयदेव, मैथिल-कोकिल विद्यापति की उस कविता को—उस कोमल-कान्त-पदावली को—आप उपेक्षा की दृष्टि से न देखिये। हिन्दी में क्या नहीं है—सूर्य हैं चन्द्र हैं, तारे हैं, एक नवीन 'नभ मण्डल' भी प्राप्त हुए हैं, किन्तु आपका काव्योद्यान आज कोकिल विहीन है—नहीं नहीं कोकिल है अवश्य, किन्तु आप अभी तक अनजाने उसे भूले हुए हैं। अहा हा! सुनिये, सुनिये, उस कोकिल की वह काकली! देखिये काव्य उद्यान का वसन्त प्रभात!!

विद्यापति की पदावली

(सटिप्पण)

वन्दना

(१)

नन्द क नन्दन कदम्ब क तर-तर
धिरे धिरे मुरलि वजाव।
समय सँकेत-निकेतन वइसल
वेरि वेरि वोलि पठाव ॥२॥
सामरि, तोरा लागि
अनुखन विकल मुरारि ॥३॥

१–नन्द क नन्दन=नन्द के बेटे, श्रीकृष्ण। तर=तले, नीचे। २–सँकेत निकेतन=मिलने का निर्दिष्ट स्थान। बइसल=बैठे हुए। वेरि वेरि=बार बार। (सकेत स्थान में बैठ कर मिलन का समय आया जान) बार बार बुला रहे हैं (वंशी में पुकार रहे हैं)— नामसमेतम् कृतसंकेतम् वादयते मृदुवेणुम्"—गीतगोविन्द। ३–सामरि=श्यामा, सुन्दरी,— शीते सुखोष्णसर्वांगी ग्रीष्मे च सुखशीतला। तप्तकाञ्चन-वर्णाभा सा स्त्री श्यामेति कथ्यते ॥" तोरा लागि=तुम्हारे वास्ते। अनुखन=प्रतिक्षण।

जमुना क तिर उपवन उद्वेगल
फिरि फिरि ततहि निहारि।
गोरस बेचए अवइत जाइत
जनि जनि पुछ वनमारि ॥५॥
तोंहे मतिमान, सुमति, मधुसूदन
वचन सुनह किछु मोरा।
भनइ विद्यापति सुन वरजौवति
वन्दह नन्द किसोरा ॥७॥

४–५ तिर=तट। उद्वेगल=उद्विग्न हुआ, व्याकुल। ततहि=उसी तरफ। जनि जनि=प्रत्येक स्त्री से (पुल्लिग जन स्त्री० जनि) यमुना के किनारे उपवन में (भ्रमण करते हुए) व्याकुल होकर पुन पुन उसी ओर (तुम्हारे आगमन पथ की ओर) देखते हैं और दूध दही बेचने को आने-जाने वाली प्रत्येक रमणी से वनमाली श्रीकृष्ण (तुम्हारे विषय में) पूछते हैं। ६–मतिमान=अनुरक्त। हे सुमति! मेरी कुछ बातें सुनो मधुसूदन तुमपर अनुरक्त हैं। ७–भनइ=कहते हैं। जौवति=युवती। वन्दह=वंदना करो।



ते सुकृती रस-सिद्ध कवि वंदनीय जग मांहि।
जिनके सुजस-सरीर कहँ जरा मरन भय नांहि॥"

(२)

(राधा की वन्दना)

देख देख राधा रुप अपार ।
अपुरुब के विहि आनि मिलाओल
खिति-तल लावनि सार ॥२॥
अगहि अग अनँग मुरछायत
हेरए पटए अथीर ।
मनमथ कोटि-मथन कर जे जन
से हेरि महि-मधि गीर ॥४॥
कत कत लखिमी चरन-तल नेओछए
रंगिनि हेरि विभोरि ।
करु अभिलाख मनहि पदपंकज
अहोनिसि कोर अगोरि ॥६॥

२-अपुरुब=अपूर्व । विहि=बिधि, ब्रह्मा । आनि मिलाओल=(भू पर) ला मिलाया रच दिखाया । खिति=छिति पृथ्वी । लावनि=लावण्य । ३-अनँग=कामदेव । हेरए=देखकर । अथीर=अस्थिर, चंचल । ४ मनमथ=कामदेव । मधि=में । जो करोड़ों कामदेव का (अपने सौंदर्य से) मथन करते हैं (वह श्रीकृष्ण भी) जिसे देखकर (मूर्च्छित हो पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं । ५-लखिमी=लक्ष्मी । नेओछए=न्यौछावर करते हैं । रंगिनी=सुन्दरी । बिभोरि=बेसुध होकर । ६-अहोनिसि=अहर्निश, दिन रात । कोर=गोद । अगोरि=(मैथिली) यत्न पूर्वक रखना । ६-मन में अभिलाषा होती है कि इस पद-कमल को रात दिन गोदी में अगोर कर रखे ।

(३)
(देवी-वंदना)

जय जय भैरवि असुर-भयाउनि
पसुपति भामिनि माया ।
सहज सुमति वर दिअओ गोसाउनि
अनुगति गति तुअ पाया ॥२॥
वासर-रैनि सवासन सोभित
चरन, चन्द्रमनि चूडा ।
कतओक दैत्य मारि मुँह मेलल,
कतओ उगिल कैल कूडा ॥४॥
सामर वरन, नयन अनुरंजित,
जलद जोग फुल कोका ।
कट कट विकट ओठ-पुट पाँडरि
लिधुर-फेन उठ फोका ॥६॥
घन घन घनए घुघुर कत वाजए,
हन हन कर तुअ काता ।
विद्यापति कवि तुअ पद सेवक,
पुत्र विसर जनि माता ॥८॥

२—दिअओ=दो । गोसाउनि=गोस्वामिनी । पाया=पैर । ३—बासर=दिन । रैनि=रात । सवासन=शवासन=मुर्दे पर आसन । चन्द्रमनि = चन्द्रकान्तमणि । चूड़ा = सिर । ४—कतओक = कितना ही । मेलल = रखा । कूड़ा कैल=चूर चूर कर दिया । अनुरंजित=रँगा हुआ लाल । जलद जोग फुल कोका=बादल में कमल फूले हों । पाँडरि=एक लाल फूल । फोका=बुद्बुद । ७ काता=कत्ता, कटार ।

वयःसन्धि

(४)

सैसव जौवन दुहु मिलि गेल।
स्रवन क पथ दुहु लोचन लेल ॥२॥
वचन क चातुरि लहु लहु हास।
धरनिये चाँद कयल परगास ॥४॥
मुकुर लई अब करई सिंगार।
सखि पूछइ कइसे सुरत विहार ॥६॥
निरजन उरज हेरइ कत बेरि।
हसइ से अपन पयोधर हेरि ॥८॥
पहिल बदरि-सम पुन नवरंग।
दिन दिन अनँग अगोरल अंग ॥१०॥
माधव पेखल अपुरुब बाला।
सैसव जौवन दुहु एक भेला ॥१२॥
विद्यापति कह तुहु अगेआनि।
दुहु एक जोग इह के कह सयानि ॥१४॥

१—सैसव=शिशुता, बचपन। जौबन=जवानी। २—दोनों आँखों ने कानों की राह पकड़ी=कटाक्ष करना प्रारम्भ किया। ३—लहु=लघु, मन्द। हास=हँसी। ४—परगास=प्रकाश। ५—मुकुर=आइना। ६—सुरत विहार=काम क्रीडा। ७—निरजन=एकान्त में। उरज=पयोधर=स्तन। हेरइ=देखती है। "स्मित किञ्चिद्वक्र सरलतरलो दृष्टिविभव। परिस्पन्दो वाचामपि नवविलासोक्तिसरस। गतीनामारम्भ किसलयितलीलापरिकर। स्पृशन्त्यास्तारुण्य किमिह न हि रम्य मृगदृश॥" ९—बदरि=बैर का फल। नवरंग=नारंगी, नीबू।

(६)

सैसव जौवन दरसन भेल ।
दुहु पथ हेरइत मनसिज गेल ॥२॥
मदन क भाव पहिल परचार ।
भिन जन देल भिन्न अधिकार ॥४॥
कटि क गौरव पाओल नितम्ब ।
एक क खीन अओक अवलम्ब ॥६॥
प्रगट हास अब गोपत भेल ।
उरज प्रगट अब तन्हिक लेल ॥८॥
चरन चपल गति लोचन पाव ।
लोचन क धैरज पदतल जाव ॥१०॥
नव कविसेखर कि कहइत पार ।
भिन भिन राज भिन्न बेवहार ॥१२॥

२—मनसिज=काम। दोनों को राह में देखते हुए कामदेव ने (बाला के शरीर में) गमन किया। ३—पहिल परचार=प्रथम प्रचारित हुआ। ४—कटि क=कमर का। गौरव=गुरुता। नितम्ब=चूतड़। ६—खीन=क्षीण, पतला। अओक=अन्य का=दूसरे का। ७, ८—गोपत=गुप्त। तन्हिक=उसका। प्रकट हँसी अब गुप्त हुई और उसकी प्रगल्भता अब कुचों ने ले ली। १०—धैरज=धीरता। 'काव्यप्रकाश' में कहा है—श्रोणीव धस्त्यजति तनुतां सेवते मध्यभागः। पद्भ्यां मुक्तास्तरलगतयः संश्रिता लोचनाभ्याम्॥ वक्षः प्राप्तं कुचसचिवतामद्वितीयन्तु वक्त्रं। तद्गात्राणां गुणविनिमयः कल्पितो यौवनेन। ११—नव कविसेखर=विद्यापति का उपनाम।

(७)

किछु किछु उतपति अकुर भेल।
चरन चपल-गति लोचन लेल ॥२॥
अब सब खन र आँचर हात।
लाजे सखिगन न पुछए बात ॥४॥
कि कहब माधव वयस क सधि।
हेरइत मनसिज मन रहु बधि ॥६॥
तइओ काम हृदय अनुपाम।
रोपल घट ऊचल कए ठाम ॥८॥
सुनइत रस कथा थापय चीत।
जइसे कुरंगिनी सुनए सँगीत ॥१०॥
सैसव जौवन उपजल वाद।
केओ न मानए जय अवसाद ॥१२॥
विद्यापति कौतुक बलिहारि।
सैसव से तनु छोडनहि पारि ॥१४॥

अकुर=कुचों के अँकुरे। ३ खन=क्षण। हात=हाथ। ५ ६ माधव! वय सधि (की बातें) क्या कहूँ, देखते ही कामदेव का मन भी बँध गया। ७ ८ तथापि (बन्दी होने पर भी) काम ने उस अनुपम हृदय पर घट स्थापित कर उस स्थान को ऊचा कर दिया। ९ थापय=स्थापित करती है। १०—कुरंगिनी=हरिणी। ११—उपजल वाद=होड़ मची। १२—केओ=कोई। अवसाद=पराजय। १४—शैशव को उसका शरीर छोड़ना ही पड़ेगा।

(८)

पहिल बदरि कुच पुन नवरंग ।
दिन दिन बाढ़य पिड़ए अनंग ॥ २ ॥
से पुन भए गेल बीजक पोर ।
अब कुच बाढ़ल सिरिफल जोर ॥४॥
माधव पेखल रमनि सधान ।
घाटहि भेटल करत सिनान ॥६॥
तनसुक सुवसन हिरदय लागि ।
जे पुरुष देखब तेकर भागि ॥८॥
उर हिल्लोलित चाँचर केस ।
चामर झाँपल कनक महेस ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुनह मुरारि ।
सुपुरुख विलसए से वरनारि ॥१२॥

१—बदरि=बैर (फल) । नअरंग=नारंगी । २—पिड़य=पीड़ा देता है । ३—बीजक पोर=बीजपूर बड़ा नीबू, जैसे बीज क्रमशः बढ़ने वाले पोर (वृक्ष की गुलाई और गाँठ) बनता है उसी तरह कुच भी दृढ़ और मोटा हो चले । ४-सिरिफल = श्रीफल, बेल । १-४ एक संस्कृत श्लोक है—
उद्भेद प्रतिपद्य बदरी भाव समेता क्रमात् । पुन्नागकृतिमाप्य पूगपदवीमा साद्य बिल्वश्रियम् ॥ लब्ध्वा ताल फलोपमां च ललितामामाद्य भूयोधुना । वचनत् ... कुम्भजम्भनमिमाव[illegible]या स्तनौ [illegible] ॥ ५—पेखल=देखा । सिनान= स्नान । तनसुख=एक प्रकार का महीन कपड़ा । हिल्लोलित=झूलता हुआ । चाँचर=चंचल । ९ १०—हृदय पर झाभरी में बने हुए बाल डोल रहे हैं मानो मानो के महादेव को चँवर से ढक दिया हो । १२—विलसए= विलास करे ।

(६)

खने खन नयन कोन अनुसरई।
खने खन बसन धूलि तनु भरई ॥२॥
खने खन दसन-छटा छुटहास।
खने खन अधर आगे गहु बास ॥४॥
चउँकि चलए खने खन चलु मन्द।
मनमथ पाठ पहिल अनुबन्ध ॥६॥
हिरदय मुकुल हेरि हेरि थोर।
खने आँचर दए खने होय भोर ॥८॥
बाला सैसब तारुन भेट।
लखए न पारिअ जेठ कनेठ ॥१०॥
विद्यापति कह सुन बर कान।
तरुनिम सैसव चिन्हइ न जान ॥१२॥

१—खने खन=क्षण क्षण। क्षण क्षण में आँख कोण अनुसरण करती है—कटाक्ष करती है। २—क्षण क्षण में अस्तव्य वस्त्र (अचल) (धूलि में गिरकर) शरीर को धूलि से भ है। ३—दसन=दाँत। हास=हँसी। ४—अधर=होंठ। बास=वस्त्र ६—अनुबन्ध=भूमिका। ७—हिरदय-मुकुल=हृदय की कली कुच। ८—भोर=भूल जाना। ९—१०—तारुन=तरुणाई जवानी। कनेठ=कनिष्ठ=छोटा। बाला के शरीर में बचपन और जवानी की भेंट हुई है—मुकाबला हुआ है। इन दोनों में कौन बड़ा और कौन छोटा (कौन निबल और कौन सबल) है, यह जान नहीं पड़ता। ११—कान=कान्ह कृष्ण। तरुनिम=जवानी।

(१०)

पीन पयोधर दुबरि गता ।
मेरु उपजल कनक-लता ॥२॥
ए कान्हु ए कान्हु तोरि दोहाई ।
अति अपूरुब देखलि साई ॥४॥
मुख मनोहर अधर रंगे ।
फूललि मधुरी कमल संगे ॥६॥
लोचन-जुगल भृंग अकारे ।
मधु क मातल उडए न पारे ॥८॥
भउँह क कथा पूछह जनू ।
मदन जोडल काजर-धनू ॥१०॥
भन विद्यापति दूति बचने ।
एत सुनि कान्हु कएल गमने ॥१२॥

१—२ पीन=पुष्ट । पयोधर=कुच । गता=गात शरीर । मेरु=सुमेरु पर्वत । दुबल शरीर में पुष्ट कुच हैं मानों सोने की लता (देह) में सुमेरु पर्वत (कुच) उत्पन्न हुआ हो । ४—अपूरुब=अपूर्व । साइ=उसे । ५—६ अधर=ओष्ठ । रंगे=रँगे हुए लाल । मधुरी=एक तरह का सुन्दर लाल फूल जो मिथिला मे विशेष होता है । सुन्दर मुख पर रंगीन (लाल) अधर है मानो कमल के फूल के साथ मधुरी फूली हो । ७—८ भृंग=भौंरा । मधु क मातल=मधु पीकर मस्त बना (उस मुख कमल में) दोनों लोचन भौंरे के समान हैं जो (मुख-कमल का) मधु पीकर मस्त होनेसे उड़ नहीं सकते ।

लोल कपोल ललित मनि-कुंडल
अधर बिम्ब अध जाई।
भौंह भ्रमर, नासापुट सुन्दर
से देखि कीर लजाइ ॥८॥
भनइ विद्यापति से वर नागरि
आन न पावए कोइ।
कंसदलन नारायन सुन्दर
तसु रंगिनी पए होइ ॥१०॥

(मुक्ता की) माला उरझी हुई है मानों, सुमेरु पर्वत पर चन्द्रमा को छोड़ कर (क्योंकि केश रूपी अंधकार भी है।) सब तारे मिलकर उगे हों। ७—लोल=चंचल। कपोल=गाल। अधर=ओष्ठ। बिम्ब=बिम्बफल (लाल होता है) अध=अध नीचे। अधरबिम्ब अध जाई=ओष्ठ की लालिमा देख बिम्बफल नीचे जाता है—हीन मालूम होता है। ८—भ्रमर=भौंरा। भौंह भ्रमर=भौंह भ्रमर के समान, काला है। नासापुट=नाक। कीर=सुग्गा। १०—कंसदलन नारायण=(१) मिथिला के राजा (२) श्रीकृष्ण। तसु=उसका। रंगिनी=स्त्री।

"इश्क को दिल में दे जगह 'अकबर'
इल्म से शायरी नहीं आती।"

(१२)

माधव, की कहव सुन्दरि रूपे ।
कनेक जतन निहि आनि समारल
देखल नयन सरूपे ॥२॥
पल्लव राज चरन जुग सोभित
गति गजराज क भाने
कनक कदलि पर सिंह समारल
तापर मेरु समाने ॥४॥
मेरु उपर दुइ कमल फुलायल
नाल विना रुचि पाई ।
मनि-मय हार धार वहु सुरसरि
तओ नहि कमल सुखाई ॥६॥

(नोट—'अद्भुद एक अनूपम बाग'' शीर्षक सूरदास ई
एक प्रसिद्ध पद्य है । साहित्य-समार में उसकी बड़ी प्रशंसा है
है । सूरदास से डेढ़-सौ वर्ष पहले रची गई यह कविता पढ़कर, पाठ
विद्यापति की प्रतिभा का अन्दाजा लगावें !)

१—की=क्या । २—निहि=विधि ब्रह्मा । सरूपे=सत्य प्रत्यक्ष ।
३—पल्लवराज=कमल । ४—कनक-कदलि=सोने के केले के
खम्भ (जाँघ की उपमा) । सिंह=(कटि की उपमा) । मेरु=पहा
(उभड़ी हुई छाती) । ५—दुइ-कमल=दो कमल (दो
कुच) । नाल=डंटी । रुचि=शोभा । ६—(कुचों पर) मणि-मय
रूपी गंगा की धारा बह रही है तो भी—उसके प्रखर सन्ता
भी—(दोनों कुच रूपी) कमल नहीं मुरझाते (कैसा आश्चर्य है !)

अधर बिम्ब सन, दसन दाडिम बिज्रु
रवि ससि उगथिक पासे।
राहु दूर बस निअरो न आवथि
तें नहि करथि गरासे ॥८॥
सारँग नयन बयन पुनि सारँग
सारँग तसु समधाने।
सारँग उपर उगल दस सारँग
केलि करथि मधुपाने ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
एहन जगत नहि आने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन—
लखिमा देइ पति भाने ॥१२॥

७–अधर=ओष्ठ। बिम्ब=बिम्बफल। सन=ऐसा। दसन=दाँत। दाडिम=अनार। बिजु=बीज, दाना रवि। ससि उगथिक पासे=सूर्य चन्द्र एक साथ उगे हैं (चद्रमा ऐसे मुख में बाल सूर्य-सा लाल सिंदूर है)। ८–राहु=(केश की उपमा)। निअरो=निकट। ९–सारँग=(१) हरिण। सारँग=(२) कोयल। सारँग=(३) कामदेव। सारँग तसु समधाने=उसके सधान में–कटाक्ष में–काम (बसता) है। १०–सारँग=(४) कमल (ललाट)। दस=(यहां बहुवाची)। सारँग=(५) भौंरा (केशों के लम्बे घुंघ गुच्छे)। मधुपान=रस पीकर। (मुखरूपी) कमल पर भौंरे (रूपी लटें लटकी) हैं जो मानों मधुपान कर केलि कर रहे हैं। एहन=ऐसा। आने=दूसरा।

(१३)

जुगल सैल-सिम हिमकर देखल
एक कमल दुइ जोति रे॥ १॥
फुललि मधुरि फुल सिंदुर लोटाएल
पाँति वइसलि गज मोति रे।
आज देखल जत के पतिआएत
अपुरब बिहि निरमान रे॥ ३॥
× × × ×
बिपरित कनक कदलि तर सोभित
थल पकज के रूप रे।
तथहु मनोहर बाजन बाजए
जनि जागे मनसिज भूप रे॥ ५॥
भनइ विद्यापति पूरब पुन तह
एसनि भजए रसमन्त रे।
बुझए सकल रस नृप सिवसिंघ
लखिमा दइ कर कत रे॥ ७॥

१–जुगल सैल=दो पहाड़ (कुचों की उपमा) सिम=सीमा में निकट। हिमकर=चन्द्रमा (मुख की उपमा)। कमल=(मुख की उपमा)। दुइ जोति=दो ज्योतियाँ (दो आँखें)। २–मधुरि फूल=एक तरह का लाल फूल। फूली हुई मधुरी (फूल) सिंदूर पर लोटता है। और, दाँत वहाँ हैं, गजमुक्ताओं की पंक्ति बैठी है। ४–बिपरित=उलटा। कनक-कदलि= (जाघ की उपमा) थल पकज=स्थल-कमल (पैर की उपमा)। ५–तथहु= वहाँ भी। मनसिज=कामदेव। ६–पुन=पुण्य। एसनि=ऐसी। रसम= रसवती सुरसिका।

(१४)

चाँद सार लए मुख घटना कर
लोचन चकित चकोरे।
अमिय धोय आँचर धनि पोछलि
दह दिसि भेल उँजोरे ॥ २ ॥
कामिनि कोने गढली।
रूप सरूप मोयँ कहइत असँभव
लोचन लागि रहली ॥ ४ ॥
गुरु नितम्ब भरे चलए न पारए
माझ-खानि खीनि निमाई।
भागि जाइत मनसिज धरि राखलि
त्रिवलि लता अरुझाइ ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति अद्भुत कौतुक
इ सब वचन सरूपे।
रुपनरायन ई रस जानथि
सिवसिंघ मिथिला भूपे ॥ ८ ॥

१-२ चन्द्रमा का सार भाग लेकर (विधाता ने राधा के) मुख की रचना की (जिसे देखते ही) चकोर की आँखें चकित हुईं। बाला ने (अपने मुख चन्द्र को) अंचल से पोंछ कर जो अमृत धो बहाया वही (चाँदनी के रूप में) दसो दिशा में प्रकाशित हुआ। ३-कोने-किसने। गढली=गढ़ा रचा। ५-भरे=भार से। माझ खानि=मध्य भाग में (कटि)। खीनि=क्षीण, पतली। निमाई=निमाण की। ६-त्रिवली=पेट में पड़ी तीन रेखाएँ।

(१५)

सुधामुखि के बिहि निरमिल बाला।
अपरुब रूप मनोभव मंगल
त्रिभुवन विजयी माला ॥ २ ॥
सुन्दर बदन चारु अरु लोचन
काजर रंजित भेला।
कनक-कमल माझ काल भुजंगिनी
स्रीयुत खंजन खेला ॥ ४ ॥
नाभि विवर सयँ लोम लतावलि
भुजगि निसास पियासा।
नासा-खगपति चंचु भरम भय
कुच गिरि संधि निवासा ॥ ६ ॥

१—कै बिहि = किस विधाता ने। निरमिल = निर्माण कि
२—मनोभव मंगल = कामदेव का शुभ स्वरूप—"मनोभव मंगल कल
महोदरे —गीतगोविन्द। त्रिभुवन विजयी माला = तीन भुवन को पराजि
करने वाली माला के समान। ३-४ बदन = मुखड़ा। भेला = हुआ
माझ=मध्य में। स्रीयुत=सुन्दर। सुन्दर मुख में सुन्दर काजल लगी आँ
हैं, मानों, सोने के कमल (मुख) में काल-सर्पिणी (अंजन) क्री
कर रही हो। अथवा मानों काल भुजंगिनी रूपी आँखें कनक कमलरूपी मु
के बीच सुन्दर (स्रीयुत) खंजन की तरह खेल रही हैं। ५-६
विवर=बिल छेद। सयँ=से। लोम-लतावली=रेखा-रूपी लताव
पंक्तिबद्ध बाल। भुजगि=सर्पिणी। निसास=साँस। खगपति=गरु
चंचु=चोंच। नाभी रूपी बिल से पंक्तिबद्ध बाल रूपी सर्पिणी (नायि

तिन वान मदन तेजल तिन भुवने
अवधि रहल दओ बाने।
विधि वड दारुन बधए रसिकजन
सोंपल तोहर नयाने ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
इह रस केओ पए जाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमाने ॥ १० ॥

की सुगंधि) भौंरों की प्यास में (आग बनी), किन्तु नुकीली नाक को गरुड़ की चोंच समझ कर, डर से कुच रूपी (दो) पर्वतों के बीच के (नजीक) मिलन-स्थान में आ बसी। ७-८ तिन=तीन। तेजल=छोड़ा। अवधि=अवशिष्ट बाकी। रहल=रहा। दओ=दो। बधए=बधने को, हत्या करने को। तोहर=तुम्हारे। नयान=आँखें। (कामदेव को पचबाण कहते हैं, सो) मदन ने अपने (पाच बाणों में से) तीन बाण तो तीन लोकों में छोड़े शेष उसके दो बाण रह गये। मह्मा बड़ा ही निष्ठुर है, (उन बचे हुए दो बाणों को) रसिकों की हत्या करने के लिय तुम्हारे नयनों को सौंप दिया। ६-इह रस केओ पए जाने=यह रस कोइ-कोइ ही जानता है। देइ=देवी। रमाने=रमण पति।



"हृदय-सिंधु मति सीप समाना। स्वाती सारद कहहिं सुजाना।
जो बरसै बर बारि-बिचारू। होहिं कबित-मुकुतामनि चारू॥

(१६)

जाइत देखलि पथ नागरि सजनि गे
आगरि सुबुधि सेयानि।
कनक लता सनि सुन्दर सजनि गे
विहि निरमाओल आनि ॥ २ ॥
हस्ति गमन जकाँ चलइत सजनि गे
देखइत राज कुमारि।
जिनकर एहनि सोहागिनि सजनि गे
पाओल पदारथ चारि ॥ ४ ॥
नील वसन तन घेरल सजनि गे
सिर लेल चिकुर सँभारि।
तापर भमरा पिवए रस सजनि गे
बइसल पाँखि पसारि ॥ ६ ॥
केहरि सम कटि-गुन अछि सजनि गे
लोचन अम्बुज धारि।
विद्यापति कवि गाओल सजनि गे
गुन पाओल अवधारि ॥ ८ ॥

१—नागरि=नगर निवासिनी सुचतुरा । आगरि=अग्रगण्या। २–सनि=समान । निरमाओल आनि=लाकर बनाया । ३–जकाँ=जैसे। ४–जिनकर=जिसकी । एहनि=ऐसी । ५–चिकुर–केश । ६–तापर = उस पर । भमरा=भौंरा । ७ केहरि=सिंह । अछि=(अस्ति) है । अम्बुज=कमल । धारि=धारण करो, समझो । अवधारि=निश्चय ।

(१७)

चिकुर-निकर तम सम
पुनु आनन पुनिम ससी।
नयन पंकज के पतिआओत
एक ठाम रहु बसी ॥ २ ॥
आज मोयँ देखलि बारा।
लुबुध मानस, चालक मयन
कर की परकारा ॥ ४ ॥
सहज सुन्दर गोर कलेवर
पीन पयोधर सिरी।
कनक लता अति विपरित
फरल जुगल गिरी ॥ ६ ॥
भन विद्यापति विहि क घटन
के न अद्भुद जान।
राय सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमान ॥ ८ ॥

१-२ चिकुर-निकर=केश समूह । पुनिम=पूर्णिमा का । ठाम=स्थान। केश समूह अंधकार के समान है फिर मुख पूर्णिमा के चन्द्र के समान और नयन कमल के (समान)—कौन विश्वास करेगा (कि ये सब परस्पर विरोधी पदार्थ) एक स्थान पर बसते हैं। मोयँ=मैंने। बारा=बाला। ४-लुबुध=लुब्ध, अनुरक्त। चालक मयन=काम पैदा करने वाला। की परकारा=किस प्रकार ५-सिरी=श्री, शोभायुक्त। ६-फरल=फला। घटन=सृष्टि।

(१८)

सजनी, अपरुप पेखल रामा।
कनक लता अवलम्बन ऊअल
हरिन हीन हिमधामा ॥ २ ॥
नयन नलिनि दओ अंजन रंजइ
भौंह विभंग विलासा ।
चकित चकोर-जोर विधि बाँधल
केवल काजर पासा ॥ ४ ॥
गिरिवर गरुअ पयोधर परसित
गिम गज मोति क हारा ।
काम कम्बु भरि कनक-सम्भु परि
ढारत सुरसरि धारा ॥ ६ ॥
परसि पयाग जाग सत जागइ
सोइ पावए बहुभागी ।
विद्यापति कह गोकुल नायक
गोपी जन अनुरागी ॥ ८ ॥

१–अपरुप=अपूर्व । पेखल=देखा । रामा=सुन्दरी । २–कनक सोने की लता (देह) । ऊअल=उदय हुआ । हरिन हीन हिम निष्कलंक चन्द्र (मुख) । ३–नलिनि=कमलिनी । दओ=दो । भौंह विलासा=कुटिल कटीली भौंहें—भवों—में भाव भंगी । ४–जोर= बाधल=बाँधा है । पास=पास में रस्सा में । ५–६ गिरिवर गरुअ क ऐसे भारी । पयोधर=कुच । गिम=ग्रीवा कण्ठ । गजमोतिक= की । कम्बु=शंख । कनक=सोना । पहाड़ ऐसे उत्तुंग कुच का स्पर्श

(१६)

कनक लता अरविन्दा।
दमना माँझ उगल जनि चन्दा ॥ २ ॥
केहु कहे सैवल छपला।
केहु बोले नहि नहि मेघे झपला ॥ ४ ॥
केहु कहे भमए भमरा।
केहु बोले नहि नहि चरए चकोरा ॥ ६॥
ससय परल सब देखी।
केहु बोलए ताहि जुगुति विसेखी ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति गावे।
बड पुन गुनमति पुनमत पावे ॥१०॥

ई गले में गजमुक्ताओं की माला है मानों कामदेव शस (कण्ठ) मे ...र कर, सोने के महादेव (कुचों) पर गगा की धारा (माला) ...र ...हा हो। ७-पइसि=पैठ कर जा कर। पयाग=प्रयाग में। जाग=यज्ञ। ...त=शत सौ। (जो) प्रयाग में जाकर सैकड़ों यज्ञ करे वही बहुभाग्य...ाली (इस रमणी को) प्राप्त करे।

१-२ दमना=द्रोणलता। माँझ=में। उगल=उदय हुआ। जनि=मानो। सोने की लता पर कमल खिला है या द्रोण-लता पर चन्द्रमा उगा है। ३-केहु=कोइ। कहे=कहता है। सैवल=शैवाल सेवार। छपला=छिपा हुआ ५-८ झपला=ढँपा हुआ। ५-भमए भमरा=भौरा भ्रमण कर रहा है। ६-चरए=चर रहा है दाना चुग रहा है। परल=पड गया। १०-पुन=पुन्य से। पुनमत=पुण्यवत।

(२०)

कवरी भय चामरि गिरि कन्दर
मुख-भय चाँद अकासे।
हरिन नयन भय, सर-भय कोकिल
गति-भय गज वनवासे ॥ २ ॥
सुन्दरि, किए मोहि सँभासि न जासि।
तुअ डर इह सब दूरहि पलायल
तुहुँ पुन काहि डरासि ॥ ४ ॥
कुच-भय कमल कोरक जल मुदि रहु
घट परवेस हुतासे।
दाडिम सिरिफल गगन वास कर
सम्भु गरल कर ग्रासे ॥ ६ ॥
भुज-भय पंक मृनाल नुकायल
कर भय किसलय काँपे।
कवि सेखर भन कत कत ऐसन
कहब मदन परतापे ॥ ८ ॥

१–कवरी=केश । चामरि=चँवरवाली गौ । २–सर=स्वर ...
३–किए=क्यों । सँभासि=बातचीत करके । जासि=जाती है । तु...
क्यों मुझसे बातें नहीं कर जाती ? ४–पलायल=भाग गया । ५–...
कोरक=कमल की कली । घट परवेस हुतासे=घट अग्नि में प्रवेश करता है।
६–दाड़िम = अनार । सिरिफल = बेल । गगन = आकाश । सम्भु =
शिव । गरल = विष । ६–मृनाल = कमल-नाल । नुकायल = छिप गया।
कर = हाथ । किसलय = नवीन पत्ता ।

(२१)

ामा, अधिक चंगिम भेल।
तन जतन कत अद्‌बुद, बिहि बिहि तोहि देल ॥ २ ॥
ुन्दर वदन सिंदुर बिन्दु, सामर चिकुर भार।
नि रवि-ससि संगहि ऊगल पाछु कए अंधकार ॥४॥
चल लोचन बाँक निहारए अंजन सोभा पाए।
नि इन्दीवर पवन पेलल अलि भरे उलटाए ॥ ६ ॥
नत उरोज चिर झपावए पुनु पुनु दरसाए।
तइऔ जतने गोअए चाहए हिम गिरि न नुकाए ॥ ८ ॥
हनि सुन्दरि गुनक आगरि पुने पुनमत पाब।
रस बिन्दक रूपनारायन कवि बिद्यापति गाव ॥१०॥

१-रामा=सुन्दरी। चगिम = शाभामयी। भेल = हुई। २-जतने = केतना। कत = कितना। अदबुद = अद्‌भुत। बिहि = विधि, ब्रह्मा। बिहि = विधि, प्रकार ढंग। अथवा बिहि बिहि=चुन चुन कर। देल = दिया। ३-बदन = मुख। सामर = काला। चिकुर = केश। ४-ऊगल = उदय हुआ। पाछु=पीछे। कए = करके। ५-बाँक=तिरछा। निहारए=देखती है। ६-इन्दीवर = कमल। पवन पेलल = पवन द्वारा आन्दोलित। अलि भरे= भौंरे के भार से। उलटाय = उलट रहा हो। ७-उनत = उन्नत, उभड़े हुए। उरोज=कुच। चिर=चीर मे, साड़ी से। ८-जइऔ=यद्यपि। जतने=यत्न से। गाअए = गोपन करना, छिपाना। हिम = बर्फ (साड़ी)। गिरि= पहाड़ (कुच)। नुकाए = छिपना ९-एहनि = ऐसी। पुनें = पुण्य से ही। पुनमत = पुण्यवान। बिन्दक = ज्ञाता।

(२२)

सहज प्रसन मुख दरस हृदय सुख
लोचन तरल तरङ्ग।
अकास पताल बस सेओ कइसे भल भम
चाँद सरोरुह सँग ॥२॥
विहि निरमलि रामा दोसरि लछि समा
भल तुलापल निरमान ॥३॥
कुच मडल सिरि हेरि कनक गिरि
लाजे दिगन्तर गेल ।
फेओ अइसन कह सेओ न जुगुति सह
अचल सचल कइसे मेल ॥४॥
माझ-खीनि तनु भरे भाँगि जाए जनु
विधि अनुसए मेल साजि ।
नील पटोर आनि अति से सुदृढ़ जानि
जतन सिरिजु रोमराजि ॥७॥
भन कवि विद्यापति काम-रमनि रति
कौतुक बुझ रसमन्त ।
सिरि सिवसिंघ राउ पुरुख सुपुरुख पाउ
लखिमा देइ रानि कन्त ॥६॥

सद्यःस्नाता

सहज प्रसन मुख दरस हृदय सुग
लोचन तरल तरङ्ग।
अकास पताल बस सेओ कइसे भेल अ
चाँद सरोरुह सँग ॥२॥
विहि निरमलि रामा दोसरि लछि समा
भल तुलापल निरमान ॥३॥
कुच मंडल सिरि हेरि कनक गिरि
लाजे दिगन्तर गेल।
केओ अइसन कह सेओ न जुगुति सह
अचल सचल कइसे भेल ॥४॥
माझ-खीनि तनु भर भाँगि जाए जनु
विधि अनुसए भेल साजि।
नील पटोर आनि अति से सुदृढ़ जानि
जतन सिरिजु रोमराजि ॥५॥
भन कवि विद्यापति काम-रमनि रति
कौतुक बुझ रसमन्त।
गिरि गिरसिंघ राउ पुरुन सुरुन पाउ
लखिमा देइ रानि कन्त ॥६॥

सद्यःस्नाता

(२३)

कामिनि करए सनाने।
हेरितहि हृदय हनए पँचबाने ॥ २ ॥
चिकुर गरए जलधारा।
जनि मुख-ससि डर रोअए अँधारा ॥ ४ ॥
कुच जुग चारु चकेवा।
निअ कुल मिलिअ आनि कोन देवा ॥ ६ ॥
ते संका भुज पासे-
बाँधि धएल उडि जाएत अकासे ॥ ८ ॥
तितल बसन तनु लागू।
मुनिहु क मानस मनमथ जागू ॥१०॥
भनइ विद्यापति गावे।
गुनमति धनि पुनमत जन पावे ॥१२॥

२-हेरितहि = देखते ही। हनए = मारती है। पँचबाने = कामदेव के बाण। ३-४, चिकुर = केश। गरए = गिरती है। जनि = मानों। रोअए = रोता है। अँधारा = अंधकार। केशों से जल की धारा गिर रही है, मानों, मुख रूपी चन्द्रमा के डर से (केश रूपी) अंधकार रो रहा हो। ६-निअ=निज। मिलिअ = मिलाने को। आनि कोन देवा = कौन आनि देवा = किसने ला दिया है। ७-८, कहीं ये कुच रूपी चकेवा आकाश में न उड़ जायँ, इसी शंका से अपनी भुजाओं से उन्हें बाँध रखा है। ९-तितल = भीगा हुआ। १०—मानस = मन। मनमथ = कामदेव। धनि = रमणी। जन = पुरुष।

(२४)

आजु मझु सुभ दिन भेला ।
कामिनि पेखल सनान क बेला ॥ २ ॥
चिकुर गरए जलधारा ।
मेह बरिस जनु मोतिम हारा ॥ ४ ॥
वदन पोंछल परचूरे ।
माजि धएल जनि कनक-मुकूरे ॥ ६ ॥
तँइ उदसल कुच जोरा ।
पलटि बैसाओल कनक-कटोरा ॥ ८ ॥
निवि बध करल उदेस ।
बिद्यापति कह मनोरथ सेस ॥१०॥

१–मझु = मेरा । भेला = हुआ । २–पेखल = देखा । ... समय । ३–४ चिकुर = केश । गरए = गिरती है ।—(बाले) ... से (उज्वल) जल की धारा गिर रही है, मानों, बादल (केश) ... की माला (जल धारा) की वर्षा कर रहे हों । ५–वदन = ... पोंछल = पोंछा, परिमार्जित किया । परचूरे = प्रचुर रूप से, ... तरह । ६–माजि धएल = माँज कर रख दिया, साफ कर रख ... कनक-मुकुरे = सोने का दर्पण । ७–तँइ = उससे—(मुख धोने ... उदसल = उकस गया, प्रगट हुआ । जोरा = जोड़ा, युगल । ८–... उलट कर । बैसाओल = बिठला दिया, रख दिया । ९–निवि = ... फुफ्नी । करल = किया । उदेस = शिथिल । १०–सेस = समस्त ।

(२५)

जाइत पेखल नहायलि गोरी।
कति सयँ रूप धनि आनलि चोरी ॥ २ ॥
केस निगारइत वह जल धारा।
चमर गरए जनि मोतिम हारा ॥ ४ ॥
अलकहि तीतल तैं अति सोभा।
अलिकुल कमल वेढल मधुलोभा ॥ ६ ॥
नीर निरंजन लोचन राता।
सिंदुर मँडित जनि पंकज-पाता ॥ ८ ॥
सजल चीर रह पयोधर सीमा।
कनक बेल जनि पडि गेल हीमा ॥१०॥
ओ नुकि करतहि चाहि किए देहा।
अवहि छोडब मोहि तेजब नेहा ॥१२॥
ऐसन रस नहि पाओब आरा।
इथे लागि रोइ गरए जलधारा ॥१४॥
विद्यापति कह सुनह मुरारि।
वसन लागल भाव रूप निहारि ॥१६॥

२—कति सयँ = कहां से। आनलि चोरी = चुरा लाइ। ३—निगार-
= गारते समय, पानी निचोड़ते समय। ४—चमर = चँवर से।
—अलक = केश। तीतल = भींगा हुआ। तैं = इससे। ६—अलि
= भ्रमर गण। बेढ़ल = घेर लिया। ७—पानी में स्नान करने के
रण आँखें अंजन हीन और लाल हो गई हैं। ८—पंकज पाता = कमल
पत्ता। ९—पयोधर सीमा = कुचों पर। कनक-बेल = सोने का

(२६)

नहाइ उठल तीर राइ कमलमुखि
समुख हेरल वर कान।
गुरजन सग लाज धनि नत-मुखि
कइसन हेरव वयान ॥२॥
सखि हे, अपरुव चातुरि गोरि।
सब जन तेजि कए अगुसरि संचरि
आड बदन तँहि फेरि ॥४॥
तँहि पुन मोति-हार तोरि फँकल
कहइत हार टुटि गेल।
सब जन एक एक चुनि संचरु
स्याम-दरस धनि लेल ॥६॥
नयन चकोर कान्हु-मुख ससि-वर
कएल अमिय रस पान।
दुहु दुहु दरसन रसहु पसारल
कवि विद्यापति भान ॥८॥

बिल्व फल। १०—पड़ि गेल = पड़ गया। हीमा = बर्फ ११—ओ=
(वस्त्र)। नुकि करत हि चाहि = छिपाना चाहता है। किए =
१२—ऐसन = ऐसा। आरा = अन्यत्र। इथे = इस लिए।

१—राइ = राधा। हेरल = देखा। कान = कृष्ण। २—नत =
बयान = वदन मुख। ४—अगुसरि = अग्रसर, आगे। सचरि =
आड़ = ओट। ५—तोरि फँकल = तोड़ कर फेंक दिया। टुटि गेल
गया। ६—लेल = लिया। कएल = किया। अमिय =

प्रेम-प्रसंग

श्रीकृष्ण का प्रेम

(२७)

पथ-गति नयन मिलल राधा कान।
दुहु मन मनसिज पूरल संधान ॥ २ ॥
दुहु मुख हेरइत दुहु भेल भोर।
समय न बूझए अचतुर चोर ॥ ४ ॥
विदगधि संगिनी सब रस जान।
कुटिल नयन कएलहि समधान ॥ ६ ॥
चलल राज-पथ दुहु उरझाई।
कह कवि सेखर दुहु चतुराई ॥ ८ ॥

१—२—पथगति = राह में जाते हुए। कान = कृष्ण। २—मन सिज = कामदेव। पूरल = पूरा किया। सधान = बाण का सचालन। पथ में जाते हुए राधा-कृष्ण दोनों आँखों से मिले—एक दूसरे को देखा। दोनों के मन में कामदेव ने अपने बाण का सचालन किया—दोनों के हृदय में काम का सचार हुआ। ३—हेरइत = देखते ही। भेलभोर = बेसुध हुए। ४—समय न बूझए = अवसर नहीं समझता। ५—विदगधि—विदग्ध, सुरसिका। कुटिल नयन = टेढ़ी चितवन से—ईशारे से। कएलहि = कर दिया। समधान = सावधान। उरझाइ = उलझ कर।

"चरन धरत चिंता करत, चहत न नेवहु सोर।
ढूँढ़त है सुबरन सदा, कवि व्यभिचारी चोर॥"

(२८)

सजनी, भल कए पेखल न भेल।
मेघ-माल सयँ तड़ित लता जनि
हिरदय सेल दई गेल ॥ २ ॥
आध आँचर खसि आध वदन हसि
आधहि नयन-तरङ्ग।
आध उरज हेरि आध आँचर भरि
तवधरि दगधे अनङ्ग ॥ ४ ॥
एके तनु गोरा कनक कटोरा
अतनु काचला उपाम।
हार हरल मन जनि बूझि ऐसन
फाँस पसारल काम ॥ ६ ॥
दसन मुकुता पाँति अधर मिलायल
मृदु मृदु कहतहि भासा।
विद्यापति कह अतए से दुख रह
हेरि हेरि न पुरल आसा ॥ ८ ॥

१—भल कए = अच्छी तरह। पेखल न भेल = देख न सका। २—सयँ – संग में साथ में। तड़ित लता = बिजली। जनि = मानों। ३—नयन तरंग = कटाक्ष। ४—उरज = कुच। तवधरि = तब से। दगधे = जलाना है। अनंग = काम ५—कनक कटोरा = सोने का कटोरा (कुच)। अतनु = कामदेव। एक तो शरीर गौरवर्ण है और उसपर से (कुच) मानो मदन (अतनु) सोने के कटोरे में कौन (बलपूर्वक भर) दिया गया है, ऐसा प्रतीत होता है। ६—जनि बूझि ऐसन = ऐसा समझ पड़ता है मानों। ७—दसन = दाँत। अधर = ओष्ठ। भासा = भाषा, वचन। अतए = इतना ही से।

(२६)

ससन परस खसु अम्बर रे
देखल धनि देह ।
नव जलधर-तर संचर रे
जनि बिजुरी रेह ॥ २ ॥
आज देखल धनि जाइत रे
मोहि उपजल रङ्ग ।
कनक-लता जनि सचर रे
महि निर अवलम्ब ॥ ४ ॥
ता पुन अपरब देखल रे
कुच-जुग अरविन्द ।
विगसित नहि किछु कारन रे
सोझा मुख-चन्द ॥ ६ ॥
विद्यापति कवि गाओल रे
रस बूझ रसमन्त ।
देवसिंह नृप नागर रे
हासिनि देइ कन्त ॥ ८ ॥

१–ससन = श्वसन, पवन । परस=स्पर्श से । खसु = गिर पड़ा । अम्बर = कपड़ा, अंचल । दखल = देखा । धनि = बाला । २–जलधर = बादल । तर = तले, नीचे । जनि = मानों । रेह = रेखा । ३–जाइत = जाती हुई । रग = प्रेम । ४–सचर = जा रही है । निर अवलम्ब = बिना अवलम्ब का । ५–ता = उसपर भी । पुन = पुन । जुग = दो । अरविन्द = कमल । बिगसित = खिला हुआ । सोझा = सम्मुख ।

(३०)

अलखित हमे हेरि विहुसलि थोर।
जनि रयनी भेल चाँद इँजोर ॥ २ ॥
कुटिल कटाख लाट पडि गेल।
मधुकर-डम्बर अम्बर लेल ॥ ४ ॥
काहिक सुन्दरि के ताहि जान।
आकुल कए गेल हमर परान ॥ ६ ॥
लीला कमल भमर धर वारि।
चमकि चललि गोरि चकित निहारि ॥८॥
तेँ भेल बेकत पयोधर सोभ।
कनक कमल हेरि काहि न लोभ ॥ १० ॥
आध नुकाएल आध उदास।
कुच कुम्भे कहि गेल अप्पन आस ॥१२॥
से अब अमिल निधि दए गेल सँदेस।
किछु नहि रखलन्हि रस परिसेस ॥ १४ ॥
भनइ विद्यापति दुहु मन जागु।
विसम कुसुम सर काहु जनु लागु ॥१६॥

१—अलखित = अलक्ष्य रूप से—बिना दूसरे के देखे। हेरि = देख कर। बिहुसलि = मुस्कुराई। २—रयनी = रजनी, रात। इँजोर = उजला। ५—काहिक = किसकी। के = कौन। ७—धर वारि = निवारण कर—कौतुक से भ्रमर का कमल से निवारण कर। ९—तेँ = इससे। बेकत = व्यक्त, प्रगट। ११-१२—नुकाएल = छिपा हुआ। उदास = प्रगट। कुम्भ = घड़ा। आधा छिपा और आधा प्रगट कुच-कुम्भ (दिखाकर) वह अपने

(३१)

अम्बर विघटु अकामिक कामिनि
कर कुच झाँपु सुछन्दा।
कनक-सम्भु सम अनुपम सुन्दर
दुइ पंकज दस चन्दा ॥ २ ॥
कत रूप कहब बुझाई।
मन मोर चंचल लोचन विकल भेल
ओ नहिं अनइत जाई ॥ ४ ॥
आड वदन कए मधुर हास दए
सुन्दरि रहु सिर नाई।
अओंधा कमल कान्ति नहि पूरए
हेरइत जुग वहि जाई ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति सुनु वर जौवति
पुहवी नव पँचवाने।
राजा सिव सिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमाने ॥ ८ ॥

भाशा कह गए (कि मिलूगी) १३—अमिल = अप्राप्य। निधि = खजाना। १४—परिसेस = परिशेष, बाकी। १६—विमम = विषम, कठोर। कुसुम-सर = कामदेव का शर।

१ अम्बर = वस्त्र अंचल। विघटु = हट गया। अकामिक = अकस्मात्। कर = हाथ। झापु = ढक लिया। सुछन्दा = सुन्दर। अकस्मात् अंचल हट गया, (तब) कामिनी ने अपने दोनों हाथों से सुन्दर कुचों को ढक लिया। २—कनक-सम्भु = सोने के महादेव

गेलि कामिनि गजहु गामिनि
बिहसि पलटि निहारि।
इन्द्रजालक कुसुम-सायक
कुहकि भेलि वर नारि ॥ २ ॥
जोरि भुज जुग मोरि बेड़ल
ततहि बदन सुछन्द।
दाम चम्पक काम पूजल
अइसे सारद चन्द ॥ ४ ॥

(कुच) दुइ पंकज = दो कमल (दोनों हाथ) दस चंदा = दस चन्द्रमा (दस अंगुलियां) ३—कत = कितना। ४—अनतह = अन्यत्र दूसरी जगह। ५—आड = आट। ६—अऔंधा = उलट कर रखा हुआ। जुग बहि जाए = जुग बीत जाते हैं। ७—पुहवी = पृथ्वी। नव = नवीन। पंचबाने = कामदेव के बाण। ८—रमाने = रमण, पति।

१—गेलि = गई। गजहु गामिनि = हाथी के समान मस्तानी चाल वाली। बिहसि = मुस्कुरा कर। निहारि = देख कर। २—इन्द्रजालक = ऐन्द्रजालिक जादू भरा। कुसुम सायक = कामदेव के बाण। कुहकि- कूँजना हँसना क्या था। कूजना था। भेलि = हुई। मानों वह नारी अब हँसकर ऐन्द्रजालिक मन्त्र हो गई। अर्थात् उसकी हँसी ने उस अद्भुत चमत्कार का अनुभव करा गया जिसका मन्त्र के बाण कराते हैं। ३-४—मोरि = मोड़ कर। बेड़ल = घेरा। ततहि = वहीं। बदन = मुख। दाम = रस्सी (माला) चम्पक = चम्पे की। अइसे = जैसे। सुछन्द = सुन्दर। दोनों हाथों को मोड़ कर उनमें अपना सुन्दर मुख छिपा लिया, मानों, कामदेव ने चम्पे की माला (हाथ) से शारद चन्द (मुख) की पूजा की हो।

उरहि अंचल झाँपि चंचल
आध पयोधर हेरु।
पोन पराभव सरद-घन जनि
बेकत कपल सुमेर ॥६॥
पुनहि दरसन जीव जुडाएव
टुटत विरह क ओर।
चरन जावक हृदय पावक
दहइ सब अंग मोर ॥८॥
भन विद्यापति सुनह जदुपति
चित्त थिर नहि होय।
से जे रमनि परम गुनमनि
पुनु कए मिलब तोय ॥१०॥

४-५-उरहि = वक्षस्थल को। झापि = ढककर। पयोधर = स्तन, कुच। हेरु = देखती है। पौन = पवन, वायु। पराभव=हार कर। जनि = मानों। बेकत = व्यक्त, प्रगट। कएल = किया। सुमेरु = पर्वत। वक्षस्थल को चचल अचल से ढाक कर आधे कुच को देखती है मानो, पवन से हार कर शरद के मेघ (अचल) ने सुमेरु को (कुच) प्रगट किया हो—जिस प्रकार पवन के झोंके मे मेघ हट जाने पर सुमेरु देख पड़ता है उसी प्रकार। ७-जीव=प्राण। जुडाएव=शीतल होंगे। ओर=सीमा। ८-जावक=महावर। पावक=आग। दहइ=जलता है। उसके पैर के महावर (मेरे) हृदय में आग (-लगा रहा) है जिसमे मेरे सब अग जल रहे है। १०-से=वह। पुनु=पुन। मिलब=मिलेगी। तोय=तुम्हें।

(३३)

सहजहि आनन सुन्दर रे
भौंह सुरेखलि आँखि।
पंकज मधु पिबि मधुकर रे
उडए पसारल पाँखि ॥२॥
ततहि धाओल दुहु लोचन रे
जतह गेलि वर नारि।
आसा लुबुधल न तेजए रे
कृपन क पाछु भिखारि ॥४॥
इंगित नयन तरंगित रे
वाम भौंह भेल भंग।
तखन न जानल तेसर रे
गुपुत मनोभव रंग ॥६॥

चन्दन चरचु पयोधर रे
गिम गज मुकुताहार।
भसम भरल जनि संकर रे
सिर सुरसरि जलधार ॥८॥

बाम चरन अगुसारल रे
दाहिन तेजइत लाज।
तखन मदन सर पूरल रे
गति गंजए गजराज ॥१०॥

आज जाइत पथ देखलि रे
रूप रहल मन लागि।
तेहि खन सयँ गुन गौरव रे
धैरज गेल भागि ॥१२॥

देव। ७—चरचु = चर्चित किया। पयोधर = कुच, स्तन। गिम = गले में। भरल = भरा हुआ। सुरसरि = गंगा। कुच चन्दन से चर्चित हैं जिनपर गजमुक्ताओं की माला (झूल रही) है मानों, भस्म का लेप किये हुए महादेव के सिर पर गंगा की धारा (बह रही) हो। ९—अगुसारल = अग्रसर किया, आगे किया। दाहिन तेजइत लाज = दाहिने पैर को आगे रखते लज्जा होती है। १०—तखन = उस समय। मदन = कामदेव। गति = चाल। गंजए = पराजित करती है। गजराज = हाथी। १० रूप रहल मन लागि = रूप मन से लग रहा है—सौंदर्य हृदय में बैठ गया। खन = क्षण। सयँ = से। गेल = गये।

रूप लागि मन धाओल रे
कुच-कंचन गिरि साँधि।
ते अपराधेँ मनोभव रे
ततहि धपल जनि बाँधि॥१५॥
विद्यापति कवि गाओल रे
रस बुझ रसमंत।
रूपनरायन नागर रे
लखिमा देइ कंत॥१६॥

(३४)

पथ गति पेखल मो राधा।
तखनुक भाव परान पए पीड़लि
रहल कुमुद निधि साधा ॥२॥
नतुश्रा नयन नलिनि जनि श्रनुपम
वंक निहारइ थोरा।
जनि सृखल में खगवर बाँधल
दीठि नुकापल मोरा ॥४॥
श्राध वदन-ससि विहसि देखाश्रोलि
श्राध पीहलि निश्र बाहु।
किछु एक भाग बलाहक झापल
किछुक गरासल राहु ॥ ६ ॥

१-२-पथ-गति = पथ में जाती हुई। पेखल = देखा। मो = मैं। तखनुक = उस समय का। परान पए = प्राण भी। पीड़लि = पीड़ित किया। रहल = रह गया। कुमुद निधि = कुमुद का सर्वस्व (चन्द्र)। साधा = साध इच्छा। मैंने राह में जाती हुई राधा को देखा। उस समय की उसकी भावभंगी ने प्राणों तक को पीडित किया उस चन्द्र (मुख) को देखने की साध बनी ही रह गई। ३—नतुआ = सुन्दर। नलिनि = कमलिनी। जनि = समान। वंक = टेढ़ा। निहारइ = देखती है। ४-सृखल = श्रृंखला जंजीर। खगवर = पक्षी श्रेष्ठ खंजन। बाँधल — बाँधा। नुकाएल — छिप गया। ५—वदन—ससि = मुख रूपी चन्द्रमा। देखाआलि = दिखलाई। पीहलि = ढाँप लिया। निअ = निज। बाहु = बाहु से भुजा से। ६—झापल = ढाप दिया। बलाहक = मेघ।

कर-जुग पिहित पयोधर अंचल
चंचल देखि चित भेला।
हेम कमलन जनि अरनित चंचल
मिहिर तरे निन्द गेला ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुनह मधुरपति
इह रस केह पए बाधा।
हास दरस रस सबहु बुभावत
नाल कमल दुइ आधा ॥ १० ॥

[illegible]

(३५)

हाँ जहाँ पग-जुग धरई। तहिं तहिं सरोरुह झरई ॥ २ ॥
हाँ जहाँ झलकत अग। तहिं तहिं बिजुरि तरंग ॥ ४ ॥
क हेरल अपरुब गोरि। पइठल हिय मधि मोरि ॥ ६ ॥
हाँ जहाँ नयन विकास। तहिं तहिं कमल प्रकास ॥ ८ ॥
हाँ लहु हास सँचार। तहिं तहिं अमिय विकार ॥१०॥
हाँ जहाँ कुटिल कटाख। ततहिं मदन-सर लाख ॥१२॥
रइत से धनि थोर। अब तिन भुवन अगोर ॥१४॥
पुनु किए दरसन पाव। अब मोहे इत दुख जाव ॥१६॥
वेद्यापति कह जानि। तुअ गुन देहब आनि ॥१८॥

१-२-पग जुग = दोनों पैर। धरँ = धरती है—रखती है। तहिं = वहाँ। सरोरुह = कमल। झरइ = झड़ते हैं। ३-४ झल कत = झलकते हैं—चमकते हैं। अग = शरीर। बिजुरि-तरग = बिजली के चचल प्रकाश। ५-६-कि = क्या। हेरल = देखा। गोरि = गौर बदनी, सुन्दरी। पइठल = पैठ गई घुस गई। हिय-मधि = हृदय में। मोरि = मेरे। ९-१०-लहु = लघु, मद। हास = हँसी। अमिय = अमृत। ११-१२-कुटिल = टेढ़े। कटाख = कटाक्ष। ततहिं = वहां ही। मदन = कामदेव। सर = वाण। १३-१४-हेरइत = देखते ही। से = वह। धनि = बाला, सुन्दरी। अगोर = प्रतीक्षा करना। १५-१६—पुनु = पुन। किए = क्या। १६—अब मैं इसी दुःख से मरूँगा। १८-तुअ = तुम्हारे। देहब आनि = ला दूगा।



राधा का प्रेम

(३६)

ए सखि पेखलि एक अपरूप ।
सुनइत मानबि सपन सरूप ॥ २ ॥
कमल जुगल पर चाँद क माला ।
तापर उपजल तरुन तमाला ॥४॥
तापर बेढलि बिजुरी लता ।
कालिन्दी तट धीरे चलि जाता ॥६॥
साखा सिखर सुधाकर पाँति ।
ताहि नव पल्लव अरुनक भाँति ॥८॥
विमल विम्बफल जुगल विकास ।
तापर कीर थीर कर वास ॥१०॥
तापर चंचल खंजन-जोर ।
तापर साँपिनि झाँपल मोर ॥१२॥
ए सखि रंगिनि कहल निसान ।
हेरइत पुनि मोर हरल गिआन ॥१४॥
कवि विद्यापति एह रस भान ।
सुपुरुख मरम तुह भल जान ॥१६॥

३ कमल-जुगल = दो पैर । चाँद क माला = नख की पंक्ति । तरुन तमाल = काला शरीर । ५ बेढलि = लिपटी हुई । बिजुरी लता = पीताम्बर । ७—साखा-सिखर = तमाल रूपी शरीर की शाखा रूपी बाहुओं के अग्र भाग में । सुधाकर पाँति = नखों की पंक्ति । ८—नव पल्लव = हथेली । अरुनक भाँति—अरुण

(३७)

की लागि कौतुक देखलों सखि
निमिष लोचन आध।
मोर मन मृग मरम वेधल
विषम वान वेआध ॥ २ ॥
गोरस बिरस वासी बिसेखल
छिकहु छाडल गेह ।
मुरलि धुनि सुनि मो मन मोहल
विकहु भेल सन्देह ॥ ४ ॥
तीर तरंगिनि कदम्ब-कानन
निकट जमुना घाट।
उलटि हेरइत उलटि परलओं
चरन चीरल काँट ॥६॥
सुकृति सुफल सुनह सुन्दरि
विद्यापति भन सार।
कंसदलन गुपाल सुन्दर
मिलल नन्दकुमार ॥८॥

९—बिम्बफल = आठ। १०—चीर = नाक। ११—खजन जोर = आखों का जोड़ा। साँपिनि = केश। मोर = मोर-मुकुट।

१—की लागि = किसलिये। निमिष = एक क्षण। लोचन आध = आधी आखों से, कनखियों से। २—मरम = हृदय का भीतरी भाग। विषम = कठोर। ३—बिरस = रसहीन। बासी बिसेखल = विशेषत बासी। छिकहु = छींकने पर भी। ५—तरंगिनी = नदी।

(३८)

अवनत आनन कए हम रहलिहुँ
वारल लोचन-चोर।
पिया मुख-रुचि पिबए धाओल
जनि से चाँद चकोर ॥२॥
ततहु सयँ हठ हटि मो आनल
धएल चरनन राखि।
मधुप मातल उडए न पारए
तइअओ पसारए पाँखि ॥४॥

१ २ अवनत = नीचे। आनन = मुख। वारल = निवारण किए, रोक रखा। मुख-रुचि = मुख की शोभा। पिबए = पीने के लिये। धाओल = दौड़ पड़ा। जनि = मानों। से = वह। मैंने अपने मुख को नीचे कर लिया और नयन रूपी चोरों का (उनकी ओर जाने से रोक दिया। किंतु प्रीतम के मुख की शोभा को पान करने के लिये दौड़ पड़े जिस प्रकार चाँद की ओर चकोर दौड़ते हैं। ३ ४ ततहु = वहाँ सयँ = से। हटि = हटाकर। मो = मैं। आनल = लाया। धएल राखि = धर रखा। मधुप = भौंरा। मातल = मस्त बना पागल। उडए न पारए = उड़ नहीं सकता। तइअओ = तो भी। पसारए = पसारता है। वहाँ से—मुख की ओर से—मैं (आँखों को) हठ पूर्वक रोक कर हटा लाई और अपने चरणों पर धर रखा—नीचे की ओर देखने लगी। (किन्तु जिस प्रकार) मधु पीकर मस्त बना भौंरा उड़ नहीं सकता

माधव बोलल मधुर बानी
से सुनि मुँदु मोयँ कान।
ताहि अवसर ठाम वाम भेल
धरि धनू पँचबान ॥६॥
तनु पसेव पसाहनि भासलि
पुलक तइसन जागु।
चूनि चुनि भए काँचुअ फाटलि
बाहु वलआ भाँगु ॥८॥
भन विद्यापति कम्पित कर हो
बोलल बोल न जाय।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
साम सुन्दर काय ॥१०॥

तौभी पंख पसारता है। उसी तरह मेरी आँखें बराबर उस ओर जाने लगीं। ४—मुँदु = मूद लिया। ५—ठाम = जगह। वाम भेल = विरुद्ध हुआ, वैरी हुआ। पचवान = कामदेव। ६ उसी समय, उसी जगह कामदेव धनुष धारण कर मेरा बैरी हुआ—मुझपर बाण की बौछार करने लगा। ७—पसेव = पसीना। पसाहनि = प्रसाधनी ललाट पर की सजावट, अंगराग। भासलि = दह गया, धो गया। पुलक = रोमांच। तइसन = उसी प्रकार। ८—चूनि चुनि भए = खण्ड-खण्ड होकर। काचुअ = कंचुरी, चोली। बलआ = चूडी। भाँगु = फूट गईं। [प्रेमातिरेक से शरीर फूल उठा, जिस कारण चोली फट गई और चूड़ियाँ फूट गईं।] ९—कम्पित कर हो = हाथ काँप रहे हैं। बोलल बोल न जाय = बोली बोली नहीं जाती।

(३६)

सामर सुन्दर ए बाट आएत
तें मोरि लागलि आँखि।
आरति आँचर साजि न भेले
सब सखीजन साखि ॥२॥
कहहि मो सखि कहहि मो
कत तकर अधिवास।
दूरहु दुगुन पडि मैं आवओं
पुनू दरसन आस ॥४॥
कि मोरा जीवन कि मोरा जौवन
कि मोरा चतुरपने।

१—ए बाट = इस रास्ते। तें = इसी कारण। २—आरति = आर्त्तावस्था में, व्याकुलता से। साखी = साक्षी, गवाह। अनुराग से—प्रेमावेश से—मैं आँचल को सँभाल भी न सकी—अपने कुचों को भली भाँति ढँक भी न सकी—इस बात की गवाह सभी सखियाँ हैं। ३-४ मो = मुझसे। कत = कहाँ। तकर = उसका। अधिवास = निवास-स्थान। दूरहु दुगुन = दुगुनी दूरी। पडि = अतिक्रमण कर। आवओं = आती हूँ। पुनु = पुन। कहा ऐ मेरी सखी! कहो, उसका निवास-स्थान कहाँ है। दुगुनी दूरी (होने पर भी उसे) अतिक्रम कर मैं पुन दर्शन की आशा में वहाँ आती हूँ। ५-६—मुरछलि = मूर्छित। आछओं = हूँ। मेरी जिन्दगी क्या, जवानी क्या और चतुराई क्या—ये सब मिथ्या है। काम के वाण से मैं मूर्छित हूँ और

मदन-बान मुरछलि अछओं
सहओं जीव अपने ॥६॥
आध पद धरइत मोए देखल
नागर जन समाज।
कठिन हिरदय भेदि न भेले
जाओ रसातल लाज ॥८॥
सुरपति पाए लोचन मागओं
गरुड मागओं पाँखि।
नन्द क नन्दन में देखि आयओं
मन मनोरथ राखि ॥१०॥

(उसकी मार्मिक पीड़ा) अपने प्राणों में सह रही हू । ७ ८—नागर जन = चतुर लोग। भेदि = छेदना विदीर्ण होना। कृष्ण की ओर आधा पग रखते—प्रेमावेश में उनकी ओर एक पैर बढ़ाते ही—मुझे समाज के चतुर लोगों ने देख लिया। पर, मेरा कठिन हृदय फट नहीं गया, लज्जा पाताल में धँस गई। ९—सुरपति = इन्द्र। पाए = चरण में। पाँखि = पख। इन्द्र के चरणों में मैं उन का सहस्र लोचन माँगती हूँ गरुड़ से पख माँगती हूँ। १०—देखि आवओं = देख आऊ।



Poetry is that which lifts the veil from the hidden beauty of the world. *—Shelly*

(४०)

कानु हेरब छल मन बड साध ।
कानु हेरइत भेल अत परमाद ॥२॥
तबधरि अबुधि मुगुधि हम नारि ।
कि कहि कि सुनि किछु बुझिए न पारि ॥४॥
साओन घन सम झरु दु नयान ।
अविरत धस धस करए परान ॥६॥
की लागि सजनी दरसन भेल ।
रभसे अपन जिउ पर हथ देल ॥८॥
ना जानू किए कर मोहन चोर ।
हेरइत प्रान हरि लेई गेल मोर ॥१०॥
अत सब आदर गेल दरसाइ ।
जत बिसरिए तत बिसर न जाइ ॥१२॥
विद्यापति कह सुन बर नारि ।
धैरज धर चित मिलब मुरारि ॥१४॥

१ कानु = कृष्ण । हेरब = देखना । छल = था । साध = इच्छा । २—अत = इतना । परमाद = प्रमाद, पागलपन । ३—तबधरि = तबसे । मुगुधि = मुग्धा । ४—कि = क्या । बुझिए न पारि = समझ नहीं सकती । ५—साओन-घन = श्रावण का मेघ । नयान = नयन, आंख । ६—अविरत = हरदम । धस धस करए = धक धक करता । ८—रभस = कौतुक में ही । पर हथ = दूसरे के हाथ में । ९—किए = क्या । ११—गेल दरसाइ = खो गया, चला गया । १२—जत = जितना । बिसरिए = भूलिए । बिसर न जाइ = नहीं भूलता ।

(४१)

कि कहब हे सखि इह दुख ओर।
बाँसि-निसास-गरल तनु भोर ॥ २ ॥
हठ सयँ पइसए स्रवनक माझ
ताहि खन विगलित तन मन लाज ॥४॥
विपुल पुलक परिपूरए देह।
नयन न हेरि, हेरए जनु केह ॥ ६ ॥
गुरु जन समुखहि भाव-तरंग।
जतनहि वसन झापि सब अंग ॥ ८ ॥
लहु लहु चरन चलिए गृह माझ।
आजु दइब विहि राखल लाज ॥ १० ॥
तनु मन विवस खसए निवि-बंध।
कि कहब विद्यापति रहु धन्द ॥ १२ ॥

१—कि = क्या। २—बाँसि निसास-गरल = बंशी के निःश्वास के विष से—बंशी की आवाज की मादकता से। तनु भोर = शरीर बेसुध है। ३—हठ सयँ = हठपूर्वक। पइसए = पैठता है। स्रवनक = कानों के। माझ = मध्य, में। ४—ताहि खन = उसी समय। बिगलित = दूर हुई, जाती रही। ५—बिपुल = अधिक, असंख्य। पुलक = रोमांच। ६—आँखों से उस ओर—कृष्ण की ओर—नहीं देखती हूँ कि कहीं कोई ऐसा करते देख न ले। ७—गुरु जन—अपने से श्रेष्ठ व्यक्ति। भाव-तरंग = भावना की लहर। ९—लहु लहु = धीरे धीरे।' दइब विहि = दैव और ब्रह्मा। ११—खसए = गिर पड़ता है। १२—धन्द—फिक्र

(४२)

कत न वेदन मोहि देसि मदना।
हर नहि वला मोहि जुवति जना ॥ २ ॥
विभुति-भूषन नहि चानन क रेनू।
बघछाल नहि मोरा नेतक बसनू ॥ ४ ॥
नहि मोरा जटाभार चिकुर क वेनी।
सुरसरि नहि मोरा कुसुम क स्रेनी ॥ ६ ॥
चाँदन क बिन्दु मोरा नहि इन्दु छोटा।
ललाट पावक नहि सिन्दुर क फोटा ॥ ८ ॥
नहि मोरा कालकूट मृगमद चारु
फनपति नहि मोरा मुकुता-हारु ॥ १० ॥
भनइ विद्यापति सुन देव कामा।
एक पए दूखन नाम मोर बामा ॥ १२ ॥

अरे कामदेव मुझे इतनी वेदना मत दो, मैं महादेव नहीं वरन् युवती हूँ। (शरीर में लगे) ये विभूति के भूषण (लेप) नहीं, वरन् चन्दन के रेणु हैं यह बाघछाला नहीं वरन् मेरी चुनरी [नेतक वसनू] है। (सिर पर) यह जटा का भार नहीं वरन् केशों की गुँथी हुई लट है। गंगा नहीं वरन् वेणी में गुँथे गये (उजले) पुष्पों की कतार है। (कपाल पर) चन्दन की बेंदी अथवा माँगटीका है, द्वितीया का चन्द्रमा [इन्दु छोटा] नहीं। ललाट में (तृतीय नेत्र की) अग्नि नहीं सिंदुर का टीका है। यह विष नहीं चिबुक पर सुन्दर (काला) मृगमद है। (गले में) अजगर नहीं, किन्तु मेरी मुक्ताओं की माला है। विद्यापति कहते हैं

(४३)

मनमथ, तोहे की कहब अनेक।
दिठि अपराध परान पए पीड़सि
ते तुअ कौन विवेक ॥ २ ॥
दाहिनि नयन पिसुन गन वारल
परिजन वामहि आध।
आध नयन-कोने जब हरि पेखल
तैं भेल अत परमाद ॥ ४ ॥
पुर-बाहिर पथ करत गतागत
के नहि हेरत कान।
तोहर कुसुम सर कतहु न संचर
हमर हृदय पचबान ॥ ६ ॥

है कामदेव, सुना, मुझमें दोष है तो केवल एक यही कि मेरा नाम 'वाम (रमणी) है [जो महादेव के 'वामदेव नाम से मिलता है]

१–२–मनमथ = कामदेव। दिठि=दृष्टि, नजर,। पीड़सि=पीड़ा देते हो। ३ ४ पिसुन=दुष्ट। वारल=मना किया। परिजन=घर के लोग। परमाद = प्रमाद, पागलपन। दहिने नेत्र को दुष्टों के कारण मना करना पड़ा—दहिने नेत्र से दुष्टों के डर से नहीं देखती—परिवार वालों के कारण बायें नेत्र के आधे को निवारण किया। रह गया बायें नेत्र का आधा भाग—सो आधे नेत्र से ही—बायें नेत्र के कटाक्ष से ही—जब कृष्ण को देखा तो इतना पागलपन मुझमें आ गया। ५–पथ=राह। करत गतागत=आने-जाते। कान=कृष्ण। ६–कुसुम सर=फूलों के बाण। पँचबान=कामदेव के पाँच शर।

(४४)

एक दिन हेरि हेरि हँसि हँसि जाय ।
अर दिन नाम धए मुरलि बजाय ॥२॥
आँजु अति नियरे करल परिहास ।
न जानिए गोकुल ककर विलास ॥४॥
साजनि ओ नागर-सामराज ।
मूल बिनु परधन माँग वेग्राज ॥६॥
परिचय नहिं देखि आनक काज ।
न करए सम्भ्रम न करए लाज ॥८॥
अपन निहारि निहारि तनु मोर ।
देइ आलिगन भए विभोर ॥१०॥
खन खन वेदगधि कला अनुपाम ।
अधिक उदार देखिअ परिनाम ॥१२॥
विद्यापति कह आरति ओर ।
बुझिओ न बूझए इए रस भोर ॥१४॥

२—अरु =और अन्य । ३—नियरे=निकट । परिहास=हँसी मजाक । ककर=किसका । ५–६नागर सामराज =चतुरों का सम्राट् । मूल=मूल धन । सखि, वह चतुरों का बादशाह है देखो तो दूसरे की सम्पत्ति पर विना मूल धन क सूद मांगता है (एक तो धन दूसरे का, उसमें भी मूल धन गायब, फिर सूद कैसा !) ७—दूसरे का काम देख कर भी नहीं परिचय करता—नहीं समझता । ८—सम्भ्रम=डर । ११—प्रतीक्षण अनुपम विदग्धनापूर्ण कला (दिखाता है) १४—यह रस में बेसुध (कृष्ण) समझ कर भी नहीं समझता ।

दूती

कृष्ण की दूती

(४५)

धनि धनि रमनि जनम धनि तोर।
सब जन कान्हु कान्हु करि झूरए
से तुअ भाव विभोर ॥ २ ॥
चातक चाहि तियासल अम्बुद
चकोर चाहि रहु चन्दा।
तरु लतिका अवलम्बन करिए
मझु मन लागल धन्दा ॥ ४ ॥
केस पसारि जबे तुहुँ राखलि
उर पर अम्बर आधा।

१—धनि=धन्य। रमनि=रमणी स्त्री। तोर=तुम्हारा। २—जन=आदमी। कान्हु=कृष्ण। झूरए=जलने, व्याकुल होते। से=वह। तुअ=तुम्हारे। विभोर=बेसुध। ३ ४—चातक=पपीहा। चाहि=देखना। तियासल=तृषित प्यासा। अम्बुद=बादल। तरु=वृक्ष। लतिका=लता। करिए=कर रहा है। मझु=मेरे। लागल=लगा। धन्दा=सन्देह। (कैसी विचित्रता है।) तृषित मेघ आज पपीहा की ओर देख रहा है, चन्द्रमा चकोर को देखता है और वृक्ष लतिका का अवलम्बन कर रहा है (इन विरोधी बातों को देख) मेरे मन में संशय हो रहा है। [कवि का तात्पर्य यह है कि जैसी व्याकुलता आज तुममें होनी चाहिये थी, वह श्रीकृष्ण में है।] ५—पसारि=पसार कर, खोल कर। राखलि=रखा।

से सब सुमिरि कान्हु भेल आकुल
कह धनि इथे कि समाधा ॥ ६ ॥
हँसइत कब तुहु दसन देखाएलि
करे कर जोरहि मोर।
अलखित दिठि कब हृदय पसारलि
पुनु हेरि सखि कर कोर ॥ ८ ॥
एतहु निदेस कहल तोहे सुन्दरि
जानि तोहे करह विधान।
हृदय पुतलि तुहु से सून कलेवर
कवि विद्यापति भान ॥ १० ॥

उर=छाती, वक्ष स्थल। अम्बर=वस्त्र, अचल। ६–से=वह। भेल=हुआ। इथे=इसका। धनि=बाले! । समाधा=निवारण। ७–८ दसन=दाँत। करे कर जोरहि मोर=हाथ से हाथ जोड कर मुड़ती हुई। अलखित=अलक्ष्य रूप से, बिना देखे। पुनु=पुन। हेरि=देखकर। कर कोर=कोर कर=क्रोड़ में करना–रखना आलिंगन करना। हाथ से हाथ जोड़ कर (अँगड़ाइयाँ लेती हुई) कब तुमने पीछे की ओर मुड़ कर, हँसती हुई अपने दाँतों की छटा दिखाई, एवम् अलक्ष्य दृष्टि से कब उनके हृदय को प्रसारित कर पुन उनकी ओर देख कर, सखी का आलिंगन किया। ९–एतहु=इतना। निदेस=इशारा। कहल=(मैंने) कहा। तोहे=तुम्हें। जानि=जानकर। करह=करो। विधान=उपचार। १०–हृदय-पुतलि=हृदय की पुतली मात्र। से=वह (कृष्ण)। सून=शून्य। कलेवर=शरीर। भान=कहता है।

(४६)

सुन सुन ए सखि कहए न होए।
राहि राहि कए तन मन खोए ॥ २ ॥
कहइत नाम पेम भए भोर।
पुलक कम्प तनु घरमहि नोर ॥ ४ ॥
गद गद भाखि कहए वर-कान।
राहि दरस विनु निकस परान ॥ ६ ॥
जव नहि हेरव तकर से मुख।
तव जिउ-भार धरव कोन सुख ॥ ८ ॥
तुहु विनु आन नहि इथे कोइ।
विसरए चाह विसर नहि होइ ॥ १० ॥
भनइ विद्यापति नहि निवाद।
पूरव तोहर सव मन साध ॥ १२ ॥

१–कहए न होए=कहा नहीं जाता। २–राहि=राधा। कए=करके, कहकर। खोए=खोना, भुला देना। ३–पेम=प्रेम। भोर=बेसुध। ४–पुलक=रोमाच। घरमहि=पसीना भी। नोर=आँसू। शरीर रोमांच होकर कांपने लगता है पसीना होता है और आसू प्रवाहित होने लगते हैं। ५–गदगद=रुँधे हुए कंठ से। भाखि=कहना। कान=कृष्ण। ६–निकसे=निकलता है। ७–तकर=उसका। से=वह। ८–धरव=धरूगा। ९–आन=दूसरा। इथे=यहाँ तुम्हारे सिवा यहां दूसरा कोई नहीं–तुम्हें छोड़ कर कृष्ण अन्य किसी को प्यार नहीं करते। १०–विसरए=विस्मरण होना, भूल जाना। ११–निवाद=कलह। १२–पूरव=पूरी होगी। मन-साध=मन कामना।

(४७)

कंटक माझ कुसुम परगास।
भमर विकल नहिं पावए पास ॥ २ ॥

भमरा भेल घुरए सबे ठाम।
तोहे बिनु मालति नहिं बिसराम ॥ ४ ॥

रसमति मालति पुनु पुनु देखि।
पिबए चाह मधु, जीव उपेखि ॥ ६ ॥

उ मधुजीवी तोंञे मधुरासि।
साँचि धरसि मधु मने न लजासि ॥ ८ ॥

अपनेहु मने गुनि बुझ अवगाहि।
तसु दूषन बध लागत काहि ॥ १० ॥

भनहि विद्यापति तौं पय जीय।
अधर सुधारस जौं पय पीय ॥ १२ ॥

१–परगास=प्रकाश। २–पावए = पाता है, जा सकता है ३–भमरा (माधव) ४–मालति (राधा) ६–जीव उपेखि–जीवन की उपेक्षा करके अर्थात् मरेंगे या जीवेंगे इसका कुछ भी ख्याल न करके। ८–साँचि धरसि–संचित करके रखा है। १०–अवगाहि–डूबकर अर्थात् इस बात को अपने मन में भली भाँति सोचो-समझो। ११–जौं पय जीव = जब जी सकता है। १२– जौं पय पीव=यदि वह पी सके।

(४८)

आजु हम पेखल कालिन्दी कूले।
तुअ बिनु माधव विलुठए धूले ॥२॥
कत सत रमनि मनहि नहि आने।
किए विष दाह समय जल दाने ॥ ४ ॥
मदन-भुजंगम दंसल कान।
विनहि अमिय-रस कि करब आन ॥६॥
कुलवति धरम काच समतूल।
मदन दलाल भेल अनुकूल ॥ ८ ॥
आनल वेचि नीलमनि हार।
से तुहु पहिरवि करि अभिसार ॥१०॥
नील निचोल झापवि निज देह।
जनि घन भीतर दामिनि-रेह ॥ १२ ॥
चौदिक चतुर सखी चलु संग।
आजु निकुंज करह रस-रंग ॥१४॥

१-पेखल=देखा। कालिन्दी=यमुना। कूले=किनारे में। २-विलुठए=लोट रहे हैं। ३-कत=कितने। सत=सौ। आने=लाता है। ४-विष की ज्वाला के समय जल के दान से क्या—विष की ज्वाला कहीं पानी मे शान्त होती है? ५-भुजंगम=सर्प। दंसल=काटा। कान=कृष्ण। ६-अमिय=अमृत। कि करब=क्या करेगा। आन=अन्य। ८ समतूल=समान। १०-से=वह। अभिसार=गुप्त मिलन, प्रियतम के पास गमन। ११ निचोल=चोली। १२-घन=मेघ। दामिनि=बिजली। रेह=रेखा। चौदिक=चारों ओर।

(४६)

आज पेखल नन्द किसोर ।
केलि विलास सबहु अब तेजल
अह निसि रहत बिभोर ॥२॥
जब धरि चकित विलोकि बिपिन तट
पलटि आओलि मुख मोरि ।
तबधरि मदन मोहन तरु कानन
लुटइ धीरज पुनि छोरि ॥४ ॥
पुनु फिरि सोइ नयन जदि हेरबि
पाओव चेतन नाह ।
भुजंगिनि दंसि पुनहि जदि दंसए
तवहि समय विष जाह ॥६॥
अब सुभ खन धनि मनिमय भूषन
भूषित तनु अनुपाम ।
अभिसर वल्लभ हृदय विराजहु
जनि मनि काचन दाम ॥८॥

२—अहनिसि=दिन-रात । बिभोरि=बेसुध । ३—जबधरि=जबसे । ४—तब धरि—तबसे । लुटइ=लोटते हैं । ५—पाओव चेतन=चेतन पायेंगे, सुध में आयेंगे । नाह=नाथ (कृष्ण) । ६—भुजगिनि=नागिनी । दंसि=काट कर । तवहि समय=उसी समय—उसी हालत में । जाह=जाता है । ८—अभिसरु=अभिसार करो—गुप्त मिलन स्थान में जा मिलो । वल्लभ=प्यारा, विद्यापति का उपनाम । जनि मनि काँचन-दाम=जैसे सोने के धागे में मणियों की माला पिराई गई हो ।

(५०)

प्रथम सिरिफल गरब गमश्रोलह
जौं गुन-गाहक आबे।
गेल जौवन पुनु पलटि न आवए
केवल रह पछतावे ॥ २ ॥
सुन्दरि, वचन करह समधाने।
तोह सनि नारि दिवस दस अछलिहुँ
पेसन उपजु मोहि भाने ॥४॥
जौवन रूप तावेधरि छाजत
जावे मदन अधिकारी।
दिन दस गेले सखि सेहओ पराएत
सकल जगत परचारी ॥६॥
बिद्यापति कह जुवति लाख लह
पडल पयोधर-तूले।
दिन दिन अगे सखि पेसनि होएबह
घोसिनि घोर क मूले ॥८॥

१-सिरिफल=श्रीफल, बेल (कुच)। गमओलह=गँवा दिया खो दिया। २-जौं=जबतक। आवे=आता है। ३-करह समधाने=समाधान करो, विचार करो। ४-सनि=समान। अछलिहुँ=मैं भी थी। भान=अनुमान। ५-छाजत=शोभता है। ६-जावे=आने पर। सेहओ=वह भी। पराएत=भागेगा। ७-पयोधर-तूले=कुच तराजू पर है। ८-अगे सखि=अरी सखि। होएबह=हो जाओगी। घोसिनि=ग्वालिनी की। घोर क=मट्ठा। मूले=मूल्य की।

(५१)

ए धनि कमलिनी सुन हित बानि।
प्रेम करबि जब सुपुरुष जानि ॥ २ ॥
सुजन क प्रेम हेम समतूल।
दहइत कनक दिगुन होय मूल ॥ ४ ॥
टूटइत नहि टुट प्रेम अदभूत।
जइसन बढए मृनाल क सूत ॥ ६ ॥
सबहु मतगज मोति नहि मानि।
सकल कंठ नहि कोइल बानि ॥ ८ ॥
सकल समय नहि रीतु बसन्त।
सकल पुरुष-नारि नहि गुनवन्त ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुन बर नारि।
प्रेम क रीत अब बुझह बिचारि ॥१२॥

१–धनि=बाला। कमलिनी=पद्मिनी जाति की स्त्री। बानि=वाणी, बात। २–जब प्रेम करो तो सुपात्र हो जान कर। ३–सुजन क=सज्जन का। हेम=सोना। समतूल=समान। ४–दहइत=जलने पर। कनक=सोना। दिगुन=दो गुणा। मूल—मूल्य। ६–जइसन=जिस प्रकार। बढए=बढ़ता है। मृणाल क=मृणाल का कमल की डंटी का। सूत=सूत्र, धागा भीतर का रेशा। ७–मतगज=हाथी। मोति=मुक्ता। ८–कोइल-बानि=कोयल की काकली। १०–सभी स्त्री और पुरुष गुणवन्त ही नहीं होते। घाघ की एक कहावत इसी भाव की है—

सदा न बागां बुलबुल बोल सदा न बाग बहारा।
सदा न ज्वानी रहनी यारौं, सदा न सोहबत यारां॥

राधा की दूती

(५२)

सुनु मनमोहन कि कहब तोय ।
मुगुधिनि रमनी तुश्र लागि रोय ॥२॥
निसि दिन जागि जपए तुश्र नाम ।
थर थर काँपि पडए सोइ ठाम ॥४॥
जामिनि श्राध श्रधिक जब होइ ।
बिगलित लाज उठए तब रोइ ॥ ६॥
सखिगन जत परबोधए जाय ।
तापिनि ताप ततहिं तत ताय ॥ ८॥
कह कबि सेखर ताक उपाय ।
रचइत तबहि रयनि बहि जाय ॥ १० ॥

१—कि = क्या । कहब = कहूं । तोय = तुझे । २—मुगुधिनि = मुग्धा, प्रेमासक्ता । रमनी = रमणी, स्त्री । तुअलागि = तेरे लिये । रोय = रोती है । ४=पड़ए = (गिर) पड़ती है । ठाम = जगह । ५—जब रात आधी से अधिक बीत जाती है । ६—बिगलित लाज = लाज से रहित होकर । उठए तब रोइ = तब रो उठती है । ७—जत = जितना । परबोधए = प्रबोध करती है, समझाती है । ८—तापिनी = ज्वाला से जली हुई । ताप = ज्वाला से । ततहिं तत = उतनाही उतना । ताय = जलती है । (वह विरह-ज्वाला से) जली हुई बाला ज्वाला से और भी अधिकाधिक जलती है । ९—ताक = उसका । १०—बहि जाय = बह जाती है, बीत जाती है ।

(५३)

माधव ! कि कहब से विपरीत ।
तनु भेल जरजर भामिनी अन्तर
चित बाढल तसु प्रीत ॥ २ ॥
निरस कमल मुख कर अवलम्बइ
सखि माझ बइसलि गोइ ।
नयन क नीर थीर नहिं बाँधइ
पंक कयल महि रोइ ॥ ४ ॥
मरम क बोल, बयन नहिं बोलए
तनु भेल कुहु-ससि खीना ।
अवनि उपर धनि उठए न पारइ
धएलि भुजा धरि दीना ॥ ६ ॥
तपत कनक जनि काजर भेल तनु
अति भेल बिरह-हुतासे ।
कवि विद्यापति मन अभिलासत
कान्हु चलह तसु पासे ॥ ८ ॥

२—जरजर = जर्जर, अत्यन्त क्षीण । भामिनी = स्त्री । अन्तर = भीतर । बाढल = बढ़ गया । तसु = उसी प्रकार । ३—निरस = रसहीन, उदास । कर = हाथ । अवलम्बइ = अवलम्बन करके । माझ = मध्य । बइसलि = बैठी । गोइ = छिपाकर । ४—नयन क नीर = आँसू । थीर = स्थिरता । ५—मरम क बोल = मर्म-कथा, हृदय के भाव । कुहु-ससि = अमावास्या का चंद्र । ६ उठए न पारइ = उठ नहीं सकती । पृथ्वी पर वह बाला स्वयं उठ नहीं सकती (सखियाँ) उस दीना को भुजा पकड़कर (धरती पर से)

(५४)

लोटइ धरनि, धरनि धरि सोइ ।
खने खन साँस खने खन रोइ ॥ २ ॥
खने खन मुरछइ कंठ परान ।
इथि पर की गति दैव से जान ॥ ४ ॥
हे हरि पेखलों से वर नारि ।
न जीवइ विनु कर परस तोहारि ॥ ६ ॥
केओ केओ जपए वेद दिठि जानि ।
केओ नव ग्रह पुज जोतिअ आनि ॥ ८ ॥
केओ केओ कर धरि धातु विचारि ।
विरह विखिन कोइ लखए न पारि ॥ १० ॥

उठाती हैं । ७–तपत = तप्त तपाये हुए । कनक = सोना । जनि = समान । हुतास = अग्नि । ८–तसु = उसके ।

१–लोटइ = लोटती है । धरनि = पृथ्वी । सोइ = वह । २–खने-खन = क्षणक्षण में । सांस = उसासें लेती है । रोइ = रोती है । ३–क्षण-क्षण में वह मूर्छित हो जाती है और प्राण कण्ठ तक चले आते हैं (मृत प्राय हो जाती है) । ४–इथि = इसके । पर = बाद । की = क्या । से = वह । ५–पेखलों = (मने) देखा । ६–जीवइ = जीयेगी । करपरस = हाथ का स्पर्श । ७–केओ = कोई । दिठि = नजर लगाना । ८–पुज = पूजता है । जोतिअ = ज्योतिषी । आनि = ले आकर बुलाकर । ९–धातु = नाड़ी । १०–विरह विखिन = विरह विक्षीण विरह से क्षीण हुई । लखए न पारि = लख नहीं सकना ।

(५५)

अविरल नयन गरए जल धार ।
नव जल विंदु सहए के पार ॥ २ ॥
कि कहब सजिनी तकर कहिनी ।
कहए न पारिअ देखलि जहिनी ॥ ४ ॥
कुच जुग ऊपर आनन हेर ।
चाद राहु डर चढल सुमेर ॥ ६ ॥
अनिल अनल वम, मलयज बीख ।
जेहु छल सीतल सेहु भेल तीख ॥ ८ ॥
चाद सतावए सविता हु जीनि ।
नहि जीवन एकमत भेल तीनि ॥ १० ॥
किछु उपचार मान नहि आन ।
ताहि वेआधि भेषज पँचवान ॥ १२ ॥
तुअ दरसन विनु तिलओ न जीव ।
जइओ कलामति पीउख पीव ॥ १४ ॥

१–अविरल = लगातार । गरए = गिरती है । २–नव-जल-विन्दु = नवीन जल के कण आसू । ३–तकर = उसका । कहिनी = कहानी । ४–जहिनी = जैसी । ५–आनन = मुख । ७–अनिल = वायु । अनल= आग । वम = वमन करती है उगलती है । मलयज = चन्दन । बीख = विष । ८–छल = था । तीख = तीक्ष्ण । ९–सविताहु = सूय । जीनि = जैसे, जीतकर, बढ़कर । १०–एकमत भेल तीनि = तीनों (वायु चन्दन, चन्द्र) एकमत हुए । ११–उपचार = औषधादि । १२–भेषज = दवा । पँचवान = कामदेव । १३–तिलआ = तिलमात्र भी, एक क्षण भी ।

(५६)

लाखे तरुअर कोटिहि लता
जुवति कत न लेख।
सब फूलमधु मधुर नही
फूलहु फल निसेख ॥ २ ॥
जे फुल भमर निन्दहु सुमर
बासि न बिसरए पार।
जाहि मधुकर उडि उडि पड
सेहे संसार क सार ॥ ४ ॥
सुन्दरि, अवहु बचन सुन।
सबे परिहरि तोहि इछ हरि
आपु सराहहि पुन ॥ ६ ॥

जीव = जीवेगी। १४—पीउख = पीयूष = अमृत।

१–२—तरुअर = तरुवर, वृक्षश्रेष्ठ। कत = कितना। न लेख = सख्या नहीं, असख्य। मधु = पुष्परस। मधुर = मीठा। लाखों पेड़ है करोड़ों लतायें हैं, (यों ही) कितनी युवतियाँ हैं (जिनकी) गिनत नहीं। किन्तु सभी फूलों का रस मीठा नहीं होता—फूलों में भी को विशेष फूल होते हैं। जे = जिस। भमर = भौंरा। निन्दहु = नीन्द भी। सुमर = स्मरण करता है। बासि = गध। न बिसरए पार = नह विस्मरण कर सकता, नहीं भूल सकता। ४—मधुकर = भौंरा। पड़ पड़ना, बैठना। सेहे = वही। जिसपर भौंरा उड़-उड़ कर बैठे, वह (फूल) ससार का सार है—ससार में खिलना उसी का सार्थक है

तोहरे चिन्ता तोहरे कथा
सेजहु तोहरे चाव।
सपनहु हरि पुनु पुनु कए
लए उठए तोर नाव॥ ८॥
आलिंगन दए पाछु निहारए
तोहि विनु सुन कोर।
अकथ कथा आपु अवथा
नयन तेजए नोर॥ १०॥
राहि रा॰ी जाहि मुँह सुनि
ततहि अप्पए कान।
सिरि सिव सिंघ इ रस जानए
कवि विद्यापति भान॥ १२॥

५-सुन=सुनो। ६-सबे=सबको। परिहरि=छोड़कर। इछ=इच्छा करता है। आपु=अपना। सराहहि=सराहना करो। पुन=पुण्य। ७-ताहरे=तुम्हारा। सेजहु=शय्या पर भी। चाव=चाहना। ८-सपनहु=सपने में भी। पुन पुन कए=बारम्बार। लए उठए=ले उठते हैं। नाव=नाम। दए=देते हैं। पाछु=पीछे। निहारए=देखते हैं। सुन=शून्य, खाली। कोर=गोद। १०-अकथ=न कहने योग्य। आपु=अपनी। अवथा=अवस्था। नोर=आँसू। ११-राहि=राधा। अप्पए=अर्पण करते हैं। १२-भान=कहते हैं।

'A poet is a painter of soul"

(५७)

आसायं मन्दिर निसि गमावए
सुख न सूत सँयान।
जखन जतए जाहि निहारए
ताहि ताहि तोहि भान ॥ २ ॥
मालति ! सफल जीवन तोर।
तोर विरहे भुअन भम्मए
भेल मधुकर भोर ॥ ४ ॥
जातकि केतकि कत न अछए
सबहि रस समान।
सपनहु नहि ताहि निहारए
मधू कि करत पान ॥ ६ ॥
वन उपवन कुज कुटीरहि
सबहि तोहि निरूप।

१–आसायें = आशा में। गमावए = बिताता है। सूत = सोता है। सँयान = शयन पर, बिछावन पर। २–जखन = जब। जतए = जहाँ। जाहि = जिसे। निहारए = देखता हूँ। जब जहा जिसे देखता है, उसे उसे ही तुम्हें भान करता है—भ्रमवश सभी को तुम्हें ही समझता है। ४–भुअन = भुवन ससार। भम्मए = भ्रमण करते। मधुकर = भारा। भोर = बिभोर, व्याकुल या प्रात काल। ५–जातकि = पारिजात। कत = कितना। अछए = है। ६–स्वप्न में भी उन्हें देखता तक नहीं, फिर उनका मधु क्यों पान करने चला। ७– सबहि = सभी स्थानों में। निरुप = निरूपण करता है।

तोहि बिनु पुनु पुनु मुरुछए
अइसन प्रेम सरूप ॥ ८ ॥
साहर नवह सउरभ न सर
गुंजरि गीत न गाव।
चेतन पापु चिन्ताए आकुल
हरख सबे सोहाव ॥ १० ॥
जकर हिरदय जतहि रतल
से धसि ततही जाए।
जइओ जतने बाँधि निरोधिअ
निमन नीर थिराए ॥ १२ ॥
ई रस राय सिव सिंघ जानए
कवि विद्यापति भान।
रानि लखिमा देइ वल्लभ
सकल गुन निधान ॥ १४ ॥

८—पुनु पुनु = पुन पुन, बारम्बार। मुरुछय = मूर्छित होता है। अइसन = इस प्रकार का। ९—साहर = सहकार। नवह = नया-नव कुसुमित फूल। सउरभ = सौरभ, सुगंध। गुंजरि = गुंजार करके। गाव = गाता है। १०—चेतन = चैतन्य, जीव। पापु = पापी। चिन्ताए = चिन्ता से। हरख सबे सोहाव = आनन्द में ही सब कुछ सुहाता है। ११—जकर = जिसका। जतहि = जहाँ। रतल = अनुरक्त हुआ। से = वह। धसि = घुसकर। ततहि = वहाँ ही। १२—जइओ = यद्यपि। निरोधिए = रोक रखिये। निमन = नीची जगह। नीर = पानी। थिराए = स्थिर होता है।

नोंक-झोंक

(५८)

कर धरु कर मोहे पारे
देव मैं अपरव हारे, कन्हैया ॥ २ ॥
सखि सब तेजि चलि गेली ।
न जानू कोन पथ भेली, कन्हैया ॥ ४ ॥
हम न जाएव तुअ पासे ।
जाएब औघट घाटे, कन्हैया ॥ ६ ॥
विद्यापति एहो भाने ।
गूजरि भजु भगवाने, कन्हैया ॥ ८ ॥

१—कर = हाथ । धरु = धरकर । करु = करो । पारे = उसपार । २—देव = दूंगी । मैं = मैं । हारे = माला । ३—तेजि = छोड़कर । चलि गेली = चली गई । ४—न जानू = न मालूम । कोन पथ भेली = किस रास्ते गई । ५—जाएव = जाऊँगी । तुअ = तेरे । पासे = निकट । ६—औघट घाट = जिस घाट से कोई आता जाना न हो । ७—एहो = यह । भाने = कहते हैं । ८—गूजरि = बाला ।

इस पद में प्रेमिका के हृदय का खासा चित्र विद्यमान है । जहां एक ओर कहती है—'हम न जाएव तुअ पासे' तो दूसरी ओर मुँह से निकलता है—'जाएव औघट घाटे'—याने जा रही हूं निश्चिन्त स्थान में ही—अर्थात् चलो उस एकान्त स्थान में केलि क्रीड़ा करें । यों ही इसके अन्य पदों में भी अपूर्व बारीक भाव विद्यमान हैं । रसिक पाठक गौर करें ।



Poetry has something divine in it —*Bacon*

(५६)

कुंज भवन सयँ निकसलि रे
रोकल गिरिधारी।
एकहि नगर वस माधव हे
जनि कर वटमारी ॥ २ ॥
छाड़ु कन्हेया मोर आचर रे
फाटत नव-सारी।
अपजस होएत जगत भरि हे
जनि करिअ उघारी ॥ ४ ॥
सग क सखि अगुआइलि रे
हम एकसरि नारी।
दामिनि आए तुलाएल हे
एक रात अँधारी ॥ ६ ॥
भनहिं विद्यापति गाओल रे
सुनु गुनमति नारी।
हरि क संग किछु डर नहि हे
तोंह परम गमारी ॥ ८ ॥

१—सयँ = से। निकसलि = निकली। रोकल = रोक दिया। २—बस = रहते हो। जनि = मत। वटमारी = टकैती राहजनी। ३—नव-सारी = नवीन साड़ी। उघारी = नग्न। ५—सग क = साथ की। अगुआइलि = आगे गई। एकसरि = अकेली। ६—दामिनि आए तुलाएल = बिजली भी चमकने लगी—मेघ छा गया। अँधारी = अँधेरी कृष्ण पक्ष की। ८—हरि क = श्रीकृष्ण के। गमारी = गँवारी, बेवकूफ।

(६०)

तुअ गुन गौरव सील सोभाव।
सुनि कए चढलिहुँ तोहरि नाव ॥२॥
हठ न करिअ कान्हु कर मोहि पार।
सब तहँ बड थिक पर उपकार ॥४॥
आइलि सखि सब साथ हमार।
से सब भेलि निकहि विधि पार ॥६॥
हमरा भेलि कान्हु तोहरोअ आस।
जे अँगिरिअ ता न होइअ उदास ॥८॥
भल मन्द जानि करिअ परिनाम।
जस अपजस दुइ रहत ए ठाम ॥१०॥
हम अबला कत कहब अनेक।
आदति पड़ले बुझिअ विवेक ॥१२॥
तोहँ पर नागर हम पर नारि।
काँप हृदय तुअ प्रकृति विचारि ॥१४॥
भनइ विद्यापति गावे।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन इ रस सकल से पावे ॥१६॥

२–सुनिकए = सुनकर। ४–सब तहँ = सबमे। थिक = है। ६–भेलि = हुई। निकहि बिधि = अच्छी तरह से। ८–जे = जो कुछ। अँगिरिअ = अंगीकार करना। ता = उसमे। होइअ उदास = उदासीन होना, मुकरना। ११–कत = कितना। १२–आदत पड़ले = आ पड़ने पर ही, अवसर आने पर ही। बुझिअ बिवेक = ज्ञान की परख होती है। १३–पर नागर = अन्य पुरुष। १४–प्रकृति = स्वभाव।

(६१)

नाव डोलाव अहीरे
जिवइत न पाओव तीरे
खर नीरे लो।
रुपैया न लेअए मोले
हँसि हँसि की दहु वोले
जिव डोले लो ॥ २ ॥
किए विके ऐलिहु आए
बेढलिहु मोहि बड़ सापे
मोरे पापे लो
करितहुँ पर-उपहासे
परिलिहुँ तन्हि विधि फाँसे
नहि आसे लो ॥४॥
न बूझसि अबूझ गोआरी
भजि रहु देव मुरारी
नहि गारी लो।
कवि विद्यापति भाने
नृप सिवसिंघ रस जाने
नव कान्हे लो ॥ ६ ॥

१–जिवइत = जीती हुई। खर नीरे = तीक्ष्ण धारा। २–मोले = मूल्य में, रुपैया पैसा में। की दहु = न जाने क्या? ३ किए = क्यों। ऐलिहु = मैं आई। बेढ़लिहु = आ घेरा। ४–तन्हि = उसी से। ५–गोआरी = ग्वालिन। गारी = गाली। ६–नव = नवीन, युवक।

सखी शिक्षा

राधा को शिक्षा

(६२)

प्रथमहि अलक तिलक लेब साजि ।
चंचल लोचन काजर आँजि ॥ २ ॥
जाएब वसन आँग लेब गोए ।
दूरहि रहब तें अरथित होए ॥ ४ ॥
मोरि बोलब सखि रहब लजाए ।
कुटिल नयन देब मदन जगाए ॥ ६ ॥
झाँपब कुच दरसाओब आध ।
खन खन सुदृढ करब निवि बाँध ॥ ८ ॥
मान करए किछु दरसब भाव ।
रस राखब तें पुनु पुनु आब ॥ १० ॥
हम कि सिखाओबि अओ रस रंग ।
अपनहि गुरु भए कहत अनंग ॥१२॥
भनइ विद्यापति इ रस गाव ।
नागरि कामिनि भाव बुझाव ॥ १४ ॥

१—अलक=केश । तिलक—टीका बेंदी । लेब=लेना । २—आँजि=लगा लेना । ३—वसन=कपड़ा । आँग=अंग । लेब गोए=छिपा लेना । ४—तें=इससे । अरथित=अर्थित चाहक । ५—मुड़कर बातें करना और बार-बार लज्जित होना । ६—कुटिल=टेढ़े झाँपब=ढँकना । निवि-बाँध=नीबी का बंधन । ९—मान करने कुछ भाव प्रकट करना । ११—अओ=और । १२—अनंग=कामदेव १४—नागरि कामिनि=सुचतुर स्त्री ।

(६३)

प्रथमहि सुन्दरि कुटिल कटाख ।
जिव जोखे नागर दे दस लाख ॥ २ ॥
केओ दे हास सुधा सम नीक ।
जइसन परहोंक तइसन बीक ॥ ४ ॥
सुनु सुन्दरि नव मदन पसार ।
जनि गोपह आओव बनिजार ॥ ६ ॥
रोस दरस रस राखव गोए ।
धएले रतन अधिक मूल होए ॥ ८ ॥
भलहि न हृदय बुझाओव नाह ।
आरति गाहक महँग बेसाह ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुनहु सयानि ।
सुहित वचन राखब हिय आनि ॥१२॥

१ २ जोखे = तौलकर। पहले, हे सुन्दरि, कुटिल कटाक्ष करना जिसके (मूल्य रूप में) नागर दस लाख प्राण तौलकर देगा। ३—कओ=कोई। हास = हँसी ।। नीक = अच्छा। ४—परहोंक = बोहनी। बीक=बिक्री होती है। ५—मदन पसार = कामदेव की दूकान। ६—गोपह = छिपाओ। बनिजार = व्यापारी। ७—८ रोष प्रगटकर प्रेम छिपाकर रखना क्योंकि धरे हुए रत्न की कीमत अधिक होती है। ९—भलहि=अच्छी तरह। १०—आरति = आर्त्त आग्रहपूर्ण। महँग = महँगा। बेसाह = खरीद करता है। १२—सुहित = सुहृद् मित्र। हिय = हृदय।

(६४)

सुनु सुन ए सखि वचन विसेस ।
आजु हम देब तोहे उपदेस ॥२॥
पहिलहि बैठवि सयनक-सीम ।
हेरइत पिया मुख मोडवि गीम ॥४॥
परसइत दुहु कर वारवि पानि ।
मौन रहवि पहु करइत बानि ॥६॥
जब हम सोंपब करे कर आपि ।
साधस धरवि उलटि मोहे काँपि ॥८॥
विद्यापति कत इह रस ठाठ ।
भए गुरु काम सिखाओब पाठ ॥१०॥

३—सयनक सीम = शय्या की एक ओर । ४—गीम = ग्रीवा गरदन । जब प्रीतम मुख देखने लगें तो अपनी गरदन (दूसरी ओर) मोड़ लेना । ५—परसइत = स्पर्श करते । कर = हाथ । बारवि = वारण करना, मना करना । पानि = हाथ । जब वे अंग स्पर्श करने लगें तो दोनों हाथों से उनके हाथ को रोकना । ६—पहु = प्रभु प्रीतम । करइत बानि = बातचीत करते समय ।७-८—करे = हाथ में । कर = हाथ । आपि = अर्पण कर । साधस = समय । जब मैं उनके हाथ में तुम्हारा हाथ अर्पण कर तुम्हें सौंपूंगी तो तुम सभ्रम उलटकर काँपते हुए मुझे पकड़ना ९—रस ठाठ = रस की रीति । भए = होकर ।

'रसात्मक वाक्य काव्यम्'—साहित्यदर्पण

(६५)

परिहर, ए सखी, तोहे परनाम ।
हम नहि जाएब से पिआ-ठाम ॥२॥
वचन चातुरि हम किछु नहि जान ।
इंगित न वूझिए न जानिए मान ॥४॥
सहचरि मिलि बनावए भेस ।
बाँधए न जानिए अप्पन केस ॥६॥
कभु नहि सुनिए सुरत क बात ।
कइसे मिलव हम माधव साथ ॥८॥
से वर नागर रसिक सुजान ।
हम अबला अति अलप गेआन ॥१०॥
विद्यापति कह कि बोलब तोए ।
आजुक मीलल समुचित होए ॥१२॥

१—ए सखि, (इन बातों को) छोड़ो मैं तुम्हें प्रणाम करती हूँ । २—ठाम = स्थान । ४—इंगित = इशारा । न मैं इशारा समझती हूँ और न मान करना जानती हूँ । ५—सहचरि = सखियाँ । बनावए भेस = भेष बनाती हैं—मेरा शृंगार कर देती हैं । ६—अप्पन = अपना । ७—सुरत क बात = काम-क्रीडा की बातें । ८—कइसे = किस प्रकार ९—नागर = चतुर । १०—अलप = अल्प, थोड़ा । ११—तोए = तुम । १२—आजुक = आज का । मीलल = मिलना ।

शेर दर अस्ल है वही हसरत
सुनते ही दिल में जो उतर जाये ।

(६६)

काहे डरसि सखि चलु हम सग।
माधव नहिं परसव तुअ अग ॥ २ ॥
इह रजनी फुल-कानन माझ।
के एक फिरत साजि बहु साज ॥४॥
कुसुम क घोर धनुष धरि पानि।
मारत सर बाला जन जानि ॥ ६ ॥
अतए चलह सखि भीतर कुज।
जहाँ रह हरी महाबल पुज ॥ ८ ॥
एत कहि आनल धनि हरि पास।
पूरल बल्लभ सुख अभिलास ॥ १० ॥

१—काहे = किसलिये। डरसि = डरती है। २—परसव = स्पर्श करेंगे। ३–६—रजनी = रात। फुल-कानन = पुष्प-वन। माझ = में। के = कौन। एक = अकेले। कुसुम क = फूलों का। धनुक = धनुष। पानि = हाथ। इस रात में पुष्प-वन में, यों नाना प्रकार शृङ्गार करके कौन अकेली घूमती है ? (अरी, क्या तुम्हें मालूम नहीं कि) फूलों का कठोर धनुष हाथ में धरकर (कामदेव रूपी तीरन्दाज) बाला स्त्रियों को खोज-खोज कर वाण मारता है। ७—अतए = अतएव, इसलिये। ८—हरी = श्रीकृष्ण। महाबलपुज = बड़े बलशाली। महाबलपुज कहकर सखी धैर्य देती है कि श्रीकृष्ण तुम्हें काम के वाण की चोट से बचायेंगे। ९—एत = इतना। आनल = लाई। धनि = बाला। पास = निकट। १०—पूरल = पूरा हुआ। बल्लभ = विद्यापति का उपनाम।

(६७)

परिहर मन किछु न कर तरास ।
साधस नहिं कर,चल पिय पास ॥ २ ॥
दुर कर दुरमति कहलम तोए ।
विनु दुख सूख कबहु नहि होए ॥ ४ ॥
तिल आध दूख जनम भरि सूख ।
इथे लागि धनि किए होइ विमूख ॥ ६ ॥
तिला एक मूनि रहु दु नयान ।
रोगि करए जइसे औषध पान ॥ ८ ॥
चल चल सुन्दरि करहु सिंगार ।
विद्यापति कह पहि से विचार ॥ १० ॥

१—परिहर=छोडो । तरास=त्रास डर । १—साधस=भय । ३—दुर कर=दूर करो । दुरमति = दुर्बुद्धि । कहलम = मै कहती हू । तोए = तुझे । ५—तिल आध = (मैथिली प्रयोग) एक क्षण के लिए । ६—इथे = इसलिये । किए = क्यों । होइ = होती हो । बिमूख=विमुख, विपक्ष । ७—मूनि रहु = मूद रक्खो । दु = दो । नयान = आँखे । ८—जइसे = जिस प्रकार । पान = पीना । १—करहु = करो । पहि से = यह ही ।



A poet is not only a dreamer of dreams his heart is the mirror of the world s emotions his songs of gladness are the echoes of the world s laughter his songs of sorrow reflect the tears of humanity.—Sarojini

श्रीकृष्ण को शिक्षा

(६८)

हमे दरसइत कतहुँ वेस करु
हमे हेरइत तनु झाँप।
सुरत सिंगारि आज धनि आओलि
परसइत थर थर काँप ॥२॥
सुनु हे कान्हु कहिए अवधारि।
सकल काज हम बुझल बुझाएल
न बुझल अन्तर नारि ॥ ४ ॥
अभिनव काम नाम पुनु सुनइत
रोसत गुन दरसाइ।
अरि सम गंजए मन पुनु रंजए
अपन मनोरथ साइ ॥६॥
अन्तर जीउ अधिक करि मानए
बाहर न गन तरासे।
कह कवि-सेखर सहज विषय-रत
विदगधि केलि विलासे ॥ ८ ॥

१—दरसइत = दिया करके। कतहु = कितना ही। वेस करु = शृंगार करना। हेरइत = देखते। झाँप = ढाप लेना। २—सुरत = काम क्रीड़ा। ३—अवधारि = निश्चय करके। ४—बुझल बुझाएल = समझा बुझा दिया है। अन्तर = हृदय। ५—अभिनव = नवीन। रोसत = रोष प्रकट करती है। गुन दरसाइ = गुण दिखाकर कला प्रकट करके। चूंकि

(६७)

सुन सुन सुन्दर कन्हाई। तोहे सौंपल धनि राई ॥ २ ॥
कमलिनि कोमल कलेवर। तुहु से भूखल मधुकर ॥ ४ ॥
सहज करयि मधु पान। भूलह जनि पँचवान ॥ ६ ॥
परबोधि पयोधर परसिह। कुंजर जनि सरोरुह ॥ ८ ॥
गनइत मोतिम हारा। छले परसव कुच भारा ॥१०॥
न बुझए रति रस रंग। खन अनुमति खन भंग ॥१२॥
सिरिस कुसुम जिनि तनु। थोरि सहय फुल धनु ॥१४॥
विद्यापति कवि गाव। दूतिक मिनति तुए पाव ॥१६॥

बिल्कुल ही नवीना है अत , काम का नाम सुनते ही कला प्रकट करती हुई क्रोधित हो उठती है। ६—गजए = गजना करती है। रजए = प्रमत्त करती है। साह = वह। ७—हृदय से तो (तुम्हें) प्राणों से अधिक चाहती है किन्तु बाहर डर से प्रगट नहीं करती।

२—धनि = बाला। राइ = राधा। ३—कलेवर = शरीर। ४—भूखल = भूखा हुआ। मधुकर = भौंरा। ५—सहज = स्वाभाविक ढग मे धीरे धीरे। करब = करना। जनि = नहीं। पचबान = कामदेव। ७—परबोधि = प्रबोध कर, समझा-बुझाकर। पयोधर = कुच, स्तन। परसिह = स्पर्श करना। ८—कुजर = हाथी। जनि = नहीं। सरोरुह = कमल। जिस प्रकार हाथी कमल को रौंदता है उस प्रकार नहीं। ९—गनइत = गिनते हुऐ। १०—छले = छल मे। १२—अनुमति = राजी होना। १३—सिरिस—कुसुम = एक कोमल फूल। जिनि = ऐसा। १४—फुलधनु = काम का धनु। १६—मिनती = बिनती। पाव = पैर।

(७०)

प्रथम समागम भुखल अनङ्ग ।
धनि जल जानि करब रतिरङ्ग ॥२॥
हठ करब अति आरति पाए ।
बडहु भुखल नहि दुहु कर खाए ॥४॥
चेतन कान्हु तोंहहि अति आथि ।
के नहि जान महत नव हाथि ॥६॥
तुअ गुन गन कहि कत अनुबोधि ।
पहिलहि सबहि हललि परबोधि ॥८॥
हठ नहिं करब रती परिपाटि ।
कोमल कामिनि विघटति साटि ॥१०।
जावे रभस सह तावे विलास ।
विमति बुझिअअ यँ न जाएब पास ॥१२॥
धसि परिहरि नहि धरविए बाहु ।
उगिलल चाँद गिलए जनि राहु ॥१४॥
भनइ विद्यापति कोमल-काँति ।
कौसल सिरिस सुमन अलि भाँति ॥१६॥

१—अनग = कामदेव । २—आरति पाए = व्याकुलता में पाकर । ४—कर = हाथ से । ५—चेतन = चतुर । आथि = अस्ति, हो । ६—महत = मदमत्त । नव = नया (फमाया हुआ)। ७—अनुबोधि = समझा-बुझाकर । हललि = लाई । ९—रती परिपाटि = रति-क्रीड़ा के ढंग । १०—विघटति साटि = शक्ति घटेगी=पीड़ा होगी । ११—रभस = काम क्रीड़ा । सह = सहन करे । १२—विमति = राजी नहा । जयँ = यदि ।

(७१)

बुझब छयलपन आज ।
राहि मनि रतने आनलि अति जतने
बचि सर रमनि समाज ॥२॥
सिरिस कुसुम जनि अति सुकुमार धनि
आलिंगब दृढ अनुरागे ।
निर्भय करब केलि केह नहि बूझे गेलि
भोंर भरे मॉंजरि न भाँगे ॥४॥
विरीतिक बोलि नियरे बइसाओब
नख हनि आनब कोल ।
नहि नहि कर धनि कपट भुलब जनु
यदि कह कातर बोल ॥६॥

१३—एक बार छोड़कर पुन धमकर दोबारा आगे बढ़कर उसकी बाँह मत पकड़ना । १४=गिलए = निगल जाना । १६=जिस प्रकार भौंरा बड़े कौशल से सिरिस के फूल का रस चूमता है उसी प्रकार ।

१—छयलपन = रसिकता । २—राहि = राधा । मनि रतने = रत्नों में मणि । आनलि = लाई । बचि = छल करके । ३—जनि = ऐसा । आलिंगब = आलिंगन करना छाती लगाना । ४—निर्भय होकर केलि करना यह किसे नहीं मालूम है कि भौंरे के शरीर के भार से आम्र मजरी नहीं टूटती । ५—नियरे = निकट । नख हनि आनब काले = नख से हनन कर—नख से कुचों को क्षत-विक्षत कर—उसे गोदी में बैठा लेना । ६—नहि नहि कर धनि = वह बाला यदि नहीं नहीं करे । कातर बोल = दीन वचन ।

मिलन

(७२)

सुन्दरि चललिहु पहु-घर ना।
चहुदिस सखि सब कर धर ना ॥ २ ॥
जाइतहु लागु परम डर ना।
जइसे ससि काँप राहु डर ना ॥ ४ ॥
जाइतहि हार टुटिए गेल ना।
भूखन बसन मलिन भेल ना ॥ ६ ॥
रोए रोए काजर दहाए देल ना।
अदकँहि सिंदुर मेटाए देल ना ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति गाओल ना।
दुख सहि सहि सुख पाओल ना ॥१०॥

१—चललिहु = चली। पहु = प्रभु। २—चहुदिस = चारो ओर। कर=हाथ। ३—जईतहु—जाने में। ४—ससि = चन्द्रमा। ७—रोए= रोकर। बहाए देल = बहा दिया। अदकँहि = आतङ्क से ही, डर से।

681

स कवि यथ्यते स्रष्टा रमते यत्र भारती।
रसभावगुणैभूतैरलकारैंगुणोदयै ॥

—वेंकटाचार्य।

(७३)

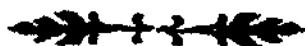
कौतुक चलति भवन कए सजनि गे
संग दस, चौदिस नारी।
विच विच सोभित सुन्दरि सजनि गे
जेंहि घर मिलत मुरारी।
लए अभरन कए षोडस, सजनि गे
पहिर उतिम रंग चीर।
देखि सकल मन उपजल, सजनि ग
मुनिहुक चित नहिं थीर ॥ ४ ॥
नील वसन तन घेरलि सजनि गे
सिर लेल घोंघट सारि।
लग लग पहु के चलइत सजनि गे
सकुचल अंकम नारि ॥ ६ ॥

---

१ कौतुक = कुतूहल युक्त होकर। चौदिस = चारो ओर। २—बिच बिच = मध्य भाग में। ३—अभरन = आभरण पहने। कए षोडस = सोलह श्रृंगार करके। उतिम रग = अच्छे रग का। चीर = साड़ी। ४—उपजल = (काम) उत्पन्न हुआ। मुनिहुक = ऋषियों का भी। थीर=स्थिर। ५—नील बसन = नीले रग का कपड़ा। तन घेरलि=शरीर को लपेटे हुई। घोंघट = घूंघट। सारि लेल=सँभाल लिया। ६—लग = निकट। पहु = प्रीतम। सकुचल = सकुचा गया। अकम = हृदय। प्रीतम के निकट जाने में बाला का हृदय सकुच गया।

सखि सब देल भवन कए, सजनि गे
घुरि आइलि सभ नारि।
कर धए लेल पहु लग कए, सजनि गे
हेरए बसन उघारि ॥ ८ ॥
भए बर सनमुख बोलइ सजनि गे
करे लागल सविलास।
नव रस रीति पिरीति भेल सजनि गे
दुहु मन परम हुलास ॥ १० ॥
विद्यापति कवि गाओल सजनि गे
ई थिक नव रस रीति।
वयस जुगल समुचित थिक सजनि गे
दुहु मन परम पिरीति ॥ १२ ॥

७—देल भवन कए = भवन कए देल = घर में ला रक्खा। घुरि आइलि = लौट आई। ८ कर धए = हाथ धरकर। पहु लग कए लेल= प्रीतम निकट ले आये। हेरए = देखता है। बसन = वस्त्र (अंचल)। उघारि = उघारकर—(अंचल) हटाकर। ९—भए = होकर। बर = प्रीतम। करे लागल = करने लगा। सविलास = काम-क्रीड़ा। १०—नव = नवीन। हुलास = आनन्द। ११—ई = यह। थिक = है। १२ बयस = अवस्था। जुगल = दोनो की। समुचित – योग्य।



"Poetry is the spontaneous over flow of powerful feelings"

(७४)

अहे सखि अहे सखि लए जनि जाह ।
हम अति बालिक आकुल नाह ॥ २ ॥
गोट गोट सखि सब गेलि बहराय ।
बजर किवाड पहु देलहि लगाय ॥ ४ ॥
तेहि अवसर पहु जागल कन्त ।
चीर सँभारलि जिउ भेल अन्त ॥ ६ ॥
नहिं नहिं करए नयन ढर नोर ।
काँच कमल भमरा झिकझोर ॥ ८ ॥
जइसे डगमग नलनिक नीर ।
तइसे डगमग धनि क सरीर ॥ १० ॥
भन विद्यापति सुनु कबिराज ।
आगि जारि पुनि आगि क काज ॥ १२ ॥

१—लए जाह —ले जाओ । जनि = मत, नहीं । २—बालिक = बालिका । आकुल = घबराया हुआ । नाह = नाथ प्रीतम । ३—गोट गोट = एक-एक कर । गलि=गई । बहराय=बाहर होना । ४—बजर = वज्र तुल्य । पहु = प्रभु प्रीतम । देलहि = दिया । ५—पहु = प्रीतम (यहाँ कामदेव से तात्पर्य है) । ६—वस्त्र हटाने का उपक्रम करते ही मालूम हुआ, मेरे प्राण निकल गये । ७—नोर = आँसू । ८—काँच कमल = अधखिला कमल । भमरा = भौंरा । ९—डगमग=हिलता डुलता । नलनिक नीर = कमल के (पत्ते पर का) पानी । १०—धनि क=धनि के, बाला के । १२—आग जलाई जाती है, तौभी तो फिर आग की आवश्यकता होती है ।

(७१)

कत अनुनय अनुगत अनुबोधि ।
पति-गृह सखिन्हि सुताओलि बोधि ॥ २ ॥
विमुखि सुतलि धनि सुमुखि न होए ।
भागल दल बहुलावए कोए ॥ ४ ॥
बालमु बेसनि बिलासिनी छोटि ।
मेल न मिलए देलहु हिम कोटि ॥ ६ ॥
बसन झपाए बदन धर गोए ।
बादर तर ससि बेकत न होए ॥ ८ ॥
भुज-जुग चाँप जीव जौं साँच ।
कुच कञ्चन कोरी फल काँच ॥ १० ॥
लग नहिं सरए, करए कसि कोर ।
करे कर बारि करहि कर जोर ॥ १२ ॥
एत दिन सैसव लाओल साठ ।
अब भए मदन पढाओव पाठ ॥ १४ ॥
गुरुजन परिजन डुअओ नेवार ।
मोहर मुदल अछि मदन भण्डार ॥ १६ ॥
भनइ विद्यापति इहो रसभान ।
राए सिवसिंघ लखिमा विरमान ॥ १८ ॥

१—कत = कितना । अनुनय = विनती । अनुगत = खुशामद । अनु बोधि = बुझाना । २—सुताओलि = सुलाई । ३—बिमुख = दूसरी तरफ मुँह करके । ४—बहुलावए = फेरना । कोए = कौन । ५—बेसनि = व्यसनी, कामी । विलासिनी = विलास करने वाली (बाला) । ६—हिम = हेम =

 डा

(७६)

सखि परबोधि सयन तल आनि।
पिय हिय हरखि धएल निज पानि ॥ २ ॥
छूअइत बालि मलिन भइ गेलि।
विधु कोर मलिन कमलनी भेलि ॥४॥
नहि नहि कहइ नयन भर नोर।
सूति रहलि राहि सयनक ओर ॥ ६ ॥
आलिंगए नोवि-बँध बिनु खोरि।
कर कुच परस सेह भेल थोरि ॥ ८ ॥
आचर लेइ वदन पर झाँप।
थिर नहि होअइ थर थर काँप ॥ १० ॥
भनइ विद्यापति धीरज सार।
दिन दिन मदन क होय अधिकार ॥ १२ ॥

सोना। ७—गोए = छिपाकर। ८—बेकत = व्यक्त प्रगट। ९-१०—चाँप = दबाकर। साँच = सचय करना। कोरी = कोरा, अछूता। माने के समान कुचों को कच्चे और अछूते फल समझ कर दोनों हाथों से दबाकर प्राणों के समान लगाती है। ११—लग = निकट। सरए = आती है। कोर = क्रोड़, गोदी। १२—करे कर बारि = अपने हाथ से (नायक) के हाथ निवारण करती है। करइ करजोर = हाथ जोड़ती है प्रार्थना करती है। सैसव = बचपन। माठ लाओल = सगन निभाई। नेबार = निवारण किया हुआ। माहर = सुदर देखर।

१—आनि = लाई। २—धएल = पकड़ा। पानि = हाथ। ३—बालि = बाला। ४—विधु कोर = चन्द्रमा गोद में। ५—

(७७)

प्रथमहि गेलि धनि प्रीतम पास ।
हृदय अधिक भेल लाज तरास ॥ २ ॥
ठाढि भेलन्हि धनि अंगो न डोले ।
हेम-मूरति सयँ मुखहु न बोले ॥ ४ ॥
कर दुहु धए पहु पास बइसाए ।
रुसल छलि धनि बदन सुखाए ॥ ६ ॥
मुख हेरि ताकए भमर झाँपि लेल ।
अंकम भरि कँ कमलमुखि लेल ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति दह इ सुमति मति ।
रस बूझ हिन्दूपति हिन्दूपति ॥ १० ॥

नार = आसू । ६—सुति रहल = सो रही । राहि = राधा । ओर = सीमा पर (एक ओर) । खारि = खोलना । ८—मेह = वहीं ।

१—धनि = नायिका । ३—भेलहि = हुई । ४—हेम = सोना । सूनि = समान । ५—पहु = प्रभु, प्रीतम । बइसाए = बैठाना है । ६—रुसल छलि = रूठी हुई थी । ७-८—हेरि ताकए = भली भाँति (निरीक्षण करके) देखना । भमर = भौंरा [कृष्ण] । अकम = गोद । भरिकें = भर कर, भौंरा (कृष्ण) उसका मुख भली भाँति—आखें गड़ा कर—देखना था अत नायिका ने उसे ढाँप लिया । किन्तु ज्यों ही उसने अपना मुँह ढाँपा कि मौका पाकर श्रीकृष्ण ने उसे गोद में ले लिया । ९—दह = दो । विद्यापति कहते हैं कि हे सुमति, अब यह (मति) अनुमति दो—कृष्ण की प्रार्थना स्वीकार करो । हिन्दूपति = राजा शिवसिंह ।

(७८)

जतने आएलि धनि सयन क सीम।
पाँगुर लिखि खिति नत रहु गीम ॥ २ ॥
सखि है, पिया पास बैठलि राहि।
कुटिल भाह करि हेरइछि काहि ॥ ४ ॥
नवि वर नारि पहिल पिया मेलि।
अनुनय करइत रात आध गेलि ॥ ६ ॥
कर धरि वालमु वइसाओल कोर।
एक पुप कह धनि नहि नहि बोल ॥ ८ ॥
कोर करइत मोडई सब अङ्ग।
प्रबोध न मानु, जनि बाल भुजङ्ग ॥ १० ॥
भनइ विद्यापति नागरि रामा।
अन्तर दाहिन बाहर वामा ॥ १२ ॥

१—सयन क-सीम = शय्या की सीमा में शय्या के निकट। २—पाँगुर = पदाङ्गुलि, पैर की अङ्गुली। खिति = पृथ्वी। नत = नीचे किये। गीम = ग्रीवा, गर्दन। ३—राहि = राधा। ४—हेरइछि = देखती है। ५—नवि=नवीना।। नवीना सुन्दरी नायिका की प्रथम-प्रथम प्रीतम से भेंट हुई। ६—अनुनय = विनय। ७—कर धरि=हाथ धरकर। बइसाओल कोर = गोदी में बिठलाया। ८—बाला बस एक 'नहीं नहीं' का वचन कहती है—सदा नहीं नहीं बोलती है। ९—गोदी में बिठलाने ही अपने अंगों को एंठती है—भावभंगी दिखलाती है। १०—जनि=मानों। बाल भुजग = बच्चा सांप। १२—अन्तर=हृदय मे। दाहिन = अनुकूल। बाहर = बाहर से, ऊपर से। बामा = प्रतिकूल।

(७६)

अधर मँगइते अओंध कर माथ।
सहए न पार पयोधर हाथ ॥ २ ॥
विघटल नीवी कर घर जाँति।
अँकुरल मदन, धरए कत भाँति ॥ ४ ॥
कोमल कामिनि नागर नाह।
कओने परि होएत केलि निरवाह ॥ ६ ॥
कुच कोरक तब कर गहि लेल।
काँच बदरि अरुनिम रुचि भेल ॥ ८ ॥
लावए चाहिअ नखर बिसेख।
भौंहनि आवए चाँद क रेख ॥ १० ॥
तसु मुख सौं लोभे रहु हेरि।
चाँद झपाव वसन कत बेरि ॥ १२ ॥

१—अओंध कर = नीचे करती है। २—सहए न पार = सह नहीं सकती। पयोधर = कुच। ३—विघटल = खुली हुई। नीवी = नीवा, फुफनी। कर धर जाँति – हाथ से दबा कर रखती है। अंकुरल = अंकुरित हुआ, पैदा हुआ। भाति = रूप आकार। ४—नागर = चतुर। नाह = नाथ प्रीतम। ६—कओने परि = किस प्रकार। ७—कुच कोरक = कुच की कोर। ८—बदरि = बेर (छोटे छोटे कुच की उपमा)। अरुनिम रुचि = लाल रंग के। ९-१०—नखर = नख की रेखा। बिसेख = उत्तम, सुन्दर। (जब प्रीतम) कुच पर नख-रेखा देना चाहता है, तो नायिका की भवों पर [चन्द्र की रेखा] टेढ़ापन आ जाता है। ११—तसु = उसका। १२—चाँद = चन्द्रमा (मुख)। बसन = कपड़ा (अंचल)।

(८०)

जखन लेल हरि कँचुअ अछोडि।
कत पर जुगति कएल अग मोडि ॥ २ ॥
तखनुक कहिनी कहल न जाय।
लाजे सुमुखि धनि रहलि लजाए ॥४॥
कर न मिझाय दूर जर दीप।
लाजे न मरए नारि कठजीव ॥ ६ ॥
अंकम कठिन, सहए के पार।
कोमल हृदय उखडि गेल हार ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति तखनुक भान।
कओन कहल सखि होएत बिहान ॥ १० ॥

१—जखन = जिस समय। कँचुअ = कञ्चुकी, चोली। अछो[...] लेल = उतार लिया। २—कत = कितना। पर जुगति = प्रयुक्ति उपाय। ३—कहिनी = कहानी, कथा। ४—लाजे = लाज से। ५—कर = हाथ। मिझाय = बुझता है। जर = जलना है। दीप = दीपक। दीपक [शय्या स[...] दूर पर जल रहा है, अत वह नायिका के हाथ से नहीं बुझता। कवि-कुल-गुरु कालिदास के मेघदूत में एक ऐसा ही पद्य है जिसका अनुवाद[...] है—' नीवी मथी शिथिल करके वस्त्र प्रेमी छुडावे। मुग्धा प्यारी अधर[...] अधरा कामक्रीड़ा दिखावे ॥ मोगी लज्जा विवश तब हा चूर्ण मुट्ठी चलावे। पै होती है विफल मणि का दीप कैसे बुझावे।'' ६—लाज = लाज से। कठजीव = कठोर प्राण। ७—अंकम = आलिंगन। सहए के पार = कौन सह सकता है। ८—उखडि गेल = उखड़ गया निशान पड़ गया।

(८१)

ए हरि वले यदि परसयि मोय।
तिरि बध-पातक लागए तोय ॥ २ ॥
तुहु रस आगर नागर ढीठ।
हम न बूझिए रस तीत कि मीठ ॥ ४ ॥
रस परसंग उठओं मझु काँप।
बान हरिनि जनि कएलहि झाँप ॥ ६ ॥
असमय आस न पूरए काम।
भल जन न कर विरस परिनाम ॥ ८ ॥
विद्यापति कह बुझलहुँ साच।
फलहु न मीठ होअए काँच ॥ १० ॥

६—तखनुक=उस समय का। १०—विहान=प्रात काल।

१—बल=बलपूर्वक। परसवि=स्पर्श करना। मोय=मुझे। २—तिरि-बध पातक=स्त्री के बध का पाप। तोय=तुझे। ३—आगर=अग्रणी श्रेष्ठ। नागर=चतुर। ४—तीत तिक्त, कड़वा। कि=या। परसग=चर्चा। ५—मझु=मैं। ६—मानों बाण से बेधी जाकर हरिन उछल उठती हो। ७—कुसमय में करने से न कोई आशा पूरी होती है, और न कोई काम पूरा होता है। ८—भलजन=अच्छे आदमी। न कर=नहीं करते। विरस=रस हीन, बुरा। परिनाम=अन्तिम फल। अच्छे आदमी [ऐसा काम] नहीं करते जिसका परिणाम बुरा हो। ९—बुझलहुँ=मैं समझा। १०—कच्चा फल भी मीठा नहीं होता।

(८२)

रति-सुबिसारद तुहु राख मान।
बाढ़िले जोवन तोहे देव दान ॥ २ ॥
आवे से अलप रस न पूरब आस।
थोर सलिल तुअ न जाव पियास ॥ ४ ॥
अलप अलप रति यहि चाहि नीति।
प्रतिपद चाँद-कला सम रीति ॥ ६ ॥
थोरि पयोधर न पूरब पानि।
न दिह नख रेख, हरि रस जानि ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति कइसन रीति।
काँच दाड़िम प्रति ऐसन प्रीति ॥ १० ॥

१—रति-सुबिसारद = कामक्रीड़ा में परम चतुर। तुहु = तुम। मान =मर्यादा। २—आवे=इस समय। से=वह। अलप=थोड़ा। पूरब = पूरेगा। ३—सलिल=पानी। तुअ = तेरी। न जाव=नहीं जायगी। ५-६—जिस प्रकार प्रतिपदा चन्द्रमा थोड़ा थोड़ा बढ़ता है, उसी प्रकार रति भी थोड़ी थोड़ा करके बढ़ानी चाहिये यही नीति है। ७—थोरि= छोटी। पयोधर=कुच। पानि=हाथ। अभी कुच छोटे हैं, उनमें तुम्हारे हाथ भी नहीं भरेंगे। ८—हे हरि, उनपर नख की रेखा मत दो—उन्हें नखों से मत सताओ, तुम तो स्वयं रस की बात जानते हो। ९—कइसन= किस प्रकार की। १०—दाड़िम=अनार [कुच की उपमा]। ऐसन = इस प्रकार।

जहाँ न जाय रवि। तहाँ जाय कवि।'

(८३)

निवि बंधन हरि किए कर दूर।
एहो पए तोहर मनोरथ पूर ॥ २ ॥
हेरने कओन सुख न बुझ विचारि।
बड तुहु ढीठ बुझल बनमारि ॥ ४ ॥
हमर सपथ जा हेरह मुरारि।
लहु लहु तब हम पारब गारि ॥ ६ ॥
विहर से रहसि हेरने कौन काम।
से नहि सहबहि हमर परान ॥ ८ ॥
कहाँ नहि सुनिए एहन परकार।
करए विलास दीप लए जार ॥ १० ॥
परिजन सुनि सुनि तेजब निसास।
लहु लहु रमह सखीजन पास ॥ १२ ॥
भनइ विद्यापति एहो रस जान।
नृप सिवसिंघ लखिमा बिरमान ॥ १४ ॥

१— निवि बंधन = चोंचे का बंधन। किए = क्यों। २—एहोपए = इसमें भी। ३—हेरने=देखने से। ४—बुझल=मैं समझ गई। ५—हेरह—देखो। ६—लहु लहु=धीरे धीरे। पारब गारि=गाली दूंगी। ७—खुश होकर बिहार करो, [बिहार से रहसि] भला देखने से क्या प्रयोजन। ९—एहन परकार=ऐसा ढंग। १०—काम-क्रीड़ा के समय दीपक जला ले। ११—परिजन=पड़ोसी। तेजब निसास=[केलि-समय में] निःश्वास लेना। १२—रमह = संभोग करो। पास = निकट। १४—बिरमान = पति।

(८४)

सुन सुन नागर निवि वध छोर।
गाँठिते नहि सुरत धन मोर ॥ २ ॥
सुरत क नाम सुनल हम आज।
न जानिअ सुरत करए कौन काज ॥ ४ ॥
सुरत क खोज करब जहाँ पाब।
घर कि अछए नाहि सखिरे सुधाब ॥ ६ ॥
बेरि एक माधव सुन प्रभु बानि।
सखि सयँ खोजि माँगि देब आनि ॥ ८
विनति करए धनि माँगे परिहार।
नागरि चातुरि भन कवि-कठहार ॥ १० ॥

इस पद्य में राधा का विचित्र परिहास, बड़ी सफाई से, वर्णित है कृष्ण राधा से 'सुरत' मांग रहे हैं—राधा से काम-क्रीड़ा करने को कह रहे हैं—इसपर राधा कहती है,— अरे चतुर, सुनो, मेरी नीवी का बंध छोड़ो, इसकी गाँठ में 'सुरत' रूपी धन नहीं छिपा पड़ा है। मैंने 'सुरत' का नाम तो आज ही सुना है, न जाने 'सुरत' [कौन है और] क्या काम करता है। हां आज से मैं जहां पाऊंगी सुरत की खोज करूंगी सखियों से पूछूंगी [सखि रे सुधाब] कि मेरे घर में है कि नहीं। माधव एक बार मेरी बात सुन लो, सखियों से यदि प्राप्त कर सकूंगी तो खोज ढूंढ कर तुम्हें ला दूंगी।' यों नायिका विनती करती और उन्हें मना कर रही है, कवि-कण्ठहार विद्यापति नागरी नायिका की इस चातुरी का (चतुराई का वर्णन करते हैं।) वर्णन करते हैं।

(८५)

हरि-कर हरनि-नयनि तव सौंपलि
सखिगन गेलि आन ठाम।
अवसर पाइ धनि कर धरि नागर
विनति करए अनुपाम ॥ २ ॥
हरनि नयनि धनि रामा।
कौतुक सरस-परस संभापन
मेटल लाज क धामा ॥ ४ ॥
सुखद सेजोपरि नागरि नागर
बइसल नव रति साधे।
प्रति अंग चुम्बन रस अनुमोदन
थर थर काँपए राधे ॥ ६ ॥
मदन सिंहासन करल अरोहन
मोहन रसिक सुजान।
भय गढ तोडल अलप समाधल
राखल सकल समान ॥ ८ ॥
कह कवि सेखर गरुअ भूख पर
कर जल थोर अहार।
अइसन दुहुमन तलफइ पुन पुन
उपजल अधिक विकार ॥ १० ॥

४—सरस परस = रसमय स्पर्श, आलिंगन। ५—सेजोपरि—शय्या के ऊपर। करल अरोहन = आरोहन किया, चढ़े। ८—अलप समाधल = थोड़े से सन्तुष्ट किया। समान = मान सहित। ६—गरुअ = अधिक।

(८६)

सुरत समापि सुतल वर नागर
पानि पयोधर आपी।
कनक सभु जनि पूजि पुजारी
धएल सरोरुह झाँपी ॥ २ ॥
सखि हे माधव, केलि विलासे।
मालति रमि अलि ताहि अगोरमि
पुनु रति रंगक आसे ॥ ४ ॥
वदन मेराए धएल मुख मंडल
कमल मिलल जनि चन्दा।
भमर चकोर दुअओ अरसाएल
पीवि अमिय मकरन्दा ॥ ६ ॥
भनइ अमीकर सुनह मधुरपति
राधा चरित अपारे।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
सुकवि भनथि कंठहारे ॥ ८ ॥

१—सुरत = काम-क्रीड़ा । समापि=समाप्त कर । सुतल = सो [illegible] । पानि = हाथ । पयोधर = कुच । आपी = अर्पितकर, रख । २—कनक सभु = सोने का महादेव । सरोरुह = कमल । ४—अलि = भौंरा । अगोरमि = अगोरे रहता है । ५—मेराए = मिलाकर । धएल=रखा । वदन मंडल = कृष्ण ने अपना मुख राधा के मुख में सटाकर रखा । ६—दुअओ = दोनों । अरसाएल = अलसा गए । अमीकर = विद्यापति के मित्र । सुकवि कंठहार = विद्यापति ।

(८७)

हे हरि हे हरि सुनिए स्रवन भरि
अब न विलास क बेरा।
गगन नखत छल से अवेकत भेल
कोकिल करइछ फेरा॥ २॥
चकवा मोर सोर कए चुप भेल
उठिए मलिन भेल चंदा।
नगर क धेनु डगर कए संचर
कुमुदनि वम मकरंदा॥ ४॥
मुख केर पान सेहो रे मलिन भेल
अवसर भल नहिं, मंदा।
विद्यापति भन एहो न निक थिक
जग भरि करइछ निंदा॥ ६॥

१—स्रवन भरि = कान भरकर, अच्छी तरह। विलास क बेरा = केलि का समय। २—गगन = आकाश। नखत = नक्षत्र, तारे। छल = थे। से = वह। अवेकत भेल = अव्यक्त हुए, छिप गये। करइछ फेरा = फेरा कर रही है, इधर उधर पुकार रही है। ३—सोर कए = शोरगुल करके। चुप भेल = चुप हो गये। ४—धेनु = गौ। डगर = राह। संचर = जा रही है। कुमुदनि वम मकरंदा = कुमुदिनियों से मकरंद (पराग) का झरना (अब) कम (खतम) हो गया अर्थात् वे मुंद गईं। मुखकेर = मुख का। से हो = वह भी। ५—भल = भला, अच्छा। मन्दा = बुरा। निक = अच्छा, उचित। थिक = है।

(८८)

रयनि समापलि फुलल सरोज।
भमि भमि भमरी भमरा खोज ॥ २ ॥
दीप मद रुचि अम्बर राता।
जुगुतहि जानलि भए गेल परात ॥ ४ ॥
अबहु तेजहु पहु मोहि न सोहाए।
पुनु दरसन होत मदन दोहाए ॥ ६ ॥
नागर राए नारि मान-रंग।
हठ कपले पहु हो रस भंग ॥ ८ ॥
तत फरिअए जत फावए चोरि।
पर जन रस लए न रह अगोरि ॥ १० ॥

१—रयनि = रात। समापलि = बीत गई। सरोज = कमल। २—भमरी घूम घूम कर भ्रमर को खोज कर रही है—क्योंकि भ्रमरी को छोड़कर भ्रमर पराग-लोभ से रात भर कमलिनी कोष में बैद था और अब उसके निकलने का समय आ गया है। ३—दीप = दीपक। मद-रुचि = क्षीण कान्ति, मलिन। अम्बर = आकाश। राता = लाल हुआ। ४—जुगुतहि = युक्ति से ही। जानलि = जान गए। ५—तजहु = छोड़ो। पहु = प्रभु, प्रीतम। ६—मदन दोहाए = कामदेव की दुहाई। ७—नागर = चतुर। मान-रंग = आदर और प्रेम। ६—फावए = लहे। परजन = पर पुरुष।

"The beauty of poetry is to paint the human life truely"

सखी-सम्भाषण

(८६)

आजु विपरित धनि देखिअ तोय।
बुझए न पारिअ संसय मोय ॥ २॥
तुअ मुख-मंडल पुनिम क चाँद।
का लागि भए गेल ऐसन छाँद ॥ ४ ॥
नयन जुगल भेल काजर विथार।
अधर निरस कर कओन गमार ॥ ६ ॥
पीनपयोधर नखरेख देल।
कनक-कुंभ जनि भगनहु भेल ॥ ८ ॥
अंग विलेपन कुंकुम भार।
पीताम्बर धरु इथे कि विचार ॥ १० ॥
सुजन रमनि तुहु कुलवति-नाद।
का सयँ भुंजलि मरम क साध ॥ १२॥
कामिनी कहिनी कह सम्वाद।
कह कवि सेखर नह परमाद ॥ १४ ॥

१—विपरित = बदली हुई। ३—पुनिम क = पूर्णिमा का। ४—का लागि = किसलिये। ऐसन छाँद = इस आकार का अर्थात् ऐसा मलिन। ५—विथार = विस्तार, फैल जाना। ६—अधर = ओष्ठ। ७—पीनपयोधर = पुष्ट कुच। ८—कनक-कुंभ = सोने का घड़े (कुच)। भगनहु = टूट जाना। कुंकुम भार = केशर से भरा हुआ अर्थात् रक्त-वर्ण। १०-पीताम्बरधरु = पीताम्बर धारण किये हुए हो—शरीर पीला पड़ गया है। इथे = इसका। कि = क्या। १२-का सयँ = किससे संग। भुंजलि = भोग किया। मरम क साध = हृदय की इच्छा। १४-परमाद = प्रमाद, दि

(६०)

आजु देखलिसि कालि देखलिसि
आज कालि कत भेद ।
सैसव बापुर सीमा छाडल
जऊवन बाँधल फेद्र ॥ २ ॥
सुन्दर कनककेआ मुति गोरी ।
दिन दिन चाँद कला सयँ बाढलि
जऊवन सोभा तोरी ॥४॥
बाल पयोधर गिरि क सहोदर
अनुपामिए अनुरागे
कओन पुरुए कर परसए पाओल
जे तनु जितल परागे ॥ ६ ॥
मन्द हास बंकिम कए दरसए
चगिम भौंह बिभंगे ।
लाज बेआकुलि सामु न हेरए
आओल नयन तरंगे ॥ ८ ॥
विद्यापति कविवर यह गावए
नव जौवन नव कन्ता ।
सिवसिंघ राजा एह रस जानए
मधुमति देवि-सुकन्ता ॥ १० ॥

१—बापुर = बेचारा । फेद (अस्पष्ट) । ३—कनककेआ = कनकीया, स्वर्ण-निर्मिता । मुति = मूर्ति । ५—बाल पयोधर = छोटे छोटे कुच । गिरि क सहोदर = पहाड के भाइ (पहाड़ के ऐसे) ।

(६१)

सामरि हे झामरि तोर देह ।
की कह के सयँ लाएलि नेह ॥ २ ॥
नींद भरल अछ लोचन तोर ।
कोमल वदन कमल रवि चोर ॥ ४ ॥
निरस धुसर कर अधर पँवार ।
कौन कुबुधि लुटु मदन भँडार ॥ ६ ॥
कोन कुमति कुच नख खत देल ।
हाय हाय सम्भु भगन भए गेल ॥ ८ ॥
दमन-लता सम ननु सुकुमार ।
फूटल वलय टूटल गृम हार ॥ १० ॥
केस कुसुम तोर, सिरक सिंदूर ।
अलक तिलक हे सेउ गेल दूर ॥ १२ ॥
भनइ विद्यापति रति अवसान ।
राजा सिवसिंघ ई रस जान ॥ १४ ॥

अनुपामिए = उपमा देते हैं । ६—जितल पराये = पराग को जीत लिया—पीला पड़ गया । ७—चगिम = सुन्दर । ७—मासु = सामने ।

१—सामरि = श्यामा, सुन्दरी । झामरि = मलिन । २—की = क्या । के सयँ = किससे । लाएलि = लाई । ३—अछ = है । ४—कोमल मुख की कमल-सदृश आभा चोरी चली गई है—वह मद पड़ गया है । ५—धुसर = धूसर, भूरा । पँवार = प्रवाल, मूगा । ७—खत = घात, घाव । ६—दमन लता = द्रोण पुष्प की लता । १०—वलय = हाथ की चूड़ी । गृम = ग्रीवा, गला । ११—कुसुम = फूल । १२—अलक = आलता महावर । १४—अवसान = समाप्त ।

(१२)

ए धनि ऐसन कहवि मोय।
आजु जे कैसन देखिए तोय ॥ २ ॥
नयन वयन आनहि भाँति।
कहइत कहिनि भूलसि पाँति ॥ ४ ॥
सुरग अधर विरँग भेलि।
का सयँ कामिनि कएल केलि ॥ ६ ॥
वेकत भए गेल गुपुत काज।
अतए ककर करह लाज ॥ ८ ॥
सघन जघन काँपए तोर
मदन मथन कएल जोर ॥ १० ॥
गोर पयोधर रातुल गात।
नखर आखर झाँपसि हात ॥ १२ ॥
अमिअ-सागर तुहु से राहि।
मुकुद मातंग निहर ताहि ॥ १४ ॥
कह कवि-सेखर कि कर लाज।
कह न कहिनि सखिन समाज ॥ १६ ॥

३—आनहि = अन्य ही । ५—सुरँग = लाल । विरँग = मलिन । ७—वेकत = व्यक्त प्रगट । ८—अतए = अतएव, यहाँ । ककर = किसकी । ९—सघन = पुष्ट । जघन = जाँघ । ११—१२—रातुल=लाल । गोरे कुचों का रंग लाल हो गया है । नखर=नखों की रेखा । १३—अमिअ = अमृत । राहि = राधा । १४—मुकुद-मातंग = कृष्ण रूपी हाथी ।

(६३)

आजु देखिए सखि वड अनमनि सनि
बदन मलिन सन तोरा।
मन्द वचन तोहि कोन कहल अछि
से न कहिए किछु मोरा ॥ २ ॥
आजुक रयनि सखि कठिन वितल अछि
कान्हु रभस कर मदा।
गुन अवगुन पहु एकओ न बुझलनि
राहु गरासल चंदा ॥ ४ ॥
अधर सुखाएल केस अरुझाएल
घाम तिलक वहि गेला।
बारि विलासिनि केलि न जानथि
भाल अरुन उड़ि गेला ॥ ६ ॥
भनई विद्यापति सुन वर जौवति
ताहि करव किए बाधे।
जे किछु देल आँचर बाधि लेल
सखि सभ कर उपहासे ॥ ८ ।

१—अनमनि=अनमनी उदासीन। सनि=समान। बदन=मुख।
२—मद=बुरा। अछि=है। ३—रयनि=रात। रभस=कामक्रीड़ा।
मदा=बुरी तरह से। ४—पहु=प्रीतम। ५—अधर=ओठ। घाम=
पसीना। तिलक=टीका। ६—बारि=बालिका। भाल अरुन उड़ि गेला=
मस्तक का सिंदूर बिंदु नष्ट हो गया। ७—किए=कैसे। बाधे=बाधा
देना, रोकना। ८—उपहासे=निंदा।

(६४)

न कर न कर सखि मोहि अनुरोध ।
की कहब हमहु तकर परबोध ॥ २ ॥
अलप वयस हम कानु से तरना ।
अतिहु लाज डर अतिहि करना ॥४॥
लोभे निठुर हरि कएलन्हि केलि ।
की कहब जामिनि जत दुख देलि ॥ ६ ॥
हठ भेल रस मोर हरल गेआन ।
निवि बँध तोडल कखन के जान ॥८॥
देल आलिंगन भुज जुग चापि ।
तखन हृदय मझु ऊठल कापि ॥ १० ॥
नयन वारि दरसाओलि रोइ ।
तबहु कान्हु उपसम नहिं होइ ॥ १२ ॥
अधर सुरस मझु कएलन्हि मन्द ।
राहु गरासि निसि तेजल चन्द ॥ १४ ॥
कुच जुग देलन्हि नख परहार ।
केहरि जनि गज कुम्भ विदार ॥१६॥
भनइ विद्यापति रसवति नारि ।
तुहु से चेतन लुबुध मुरारि ॥ १८ ॥

२—तकर=उसका । ६—जामिनी=रात । जत=जितना । ८—कखन=कब । भुज जुग=दोनों हाथ । चापि=दाबकर । १०—तखन=उस समय । १२—उपसम=शान्त ठंडा । १३—अधर=ओष्ठ । १४—तेजल=छोड़ दिया । १५—नखपरहार=नखों की

(६५)

कि कहव हे सखि आजु क विचार।
से सुपुरुख मोहे कएल सिंगार ॥ २ ॥
हँसि हँसि पहु आलिंगन देल।
मनमथ अकुर कुसुमित भेल ॥ ४ ॥
आँचर परसि पयोधर हेर।
जनम पंगु जनि भेंटल सुमेर ॥ ६ ॥
जव निवि वध खसाओल कान।
तोहर सपथ हम किछु जदि जान ॥ ८ ॥
रति चिन्हे जानल कठिन मुरारि।
तोहर पुने जीअलि हम नारि ॥ १० ॥
कह कवि रजन सहँज मधुराई।
न कह सुधामुखि गेल चतुराई ॥ १२ ॥

चोट। १६—केहरि = सिंह। गज-कुम = हाथी का पेट। विदार = फाड़ना। १८—चेतन = चतुरा। लुबुध = लाभायमान।

२—कएल किया। ३—पहु = प्रीतम। ४—मनमथ = कामदेव। कुसुमित = फूला हुआ। कामदेव रूपी अकुर फूल उठा-काम का पूर्ण विकाश हुआ। ५—आचर = अंचल। पयोधर = कुच। हेरु = देखना। ६—पगु = पगहीन। जनि = मानों। ७—खसाओल = (खोलकर) गिरा दिया। कान = कृष्ण। ८—रति के चिह्न से जाना कि कृष्ण बड़ा कठोर हृदय है। १०—पुने = पुण्य से। जीअलि = जीती बची। ११ सहज मधु राई = राई (राधा) स्वभावत ही मधु (मधुरा) है। १२—गेल चतुराई = चतुरता खतम हो गई।

(६६)

दृढ परिरम्भन पीडलि मदने।
उबरि अएलहुँ सखि पुरब पुने ॥ २ ॥
टुटि छिड़िआएल मोतिम हार।
सिंदुर लोटाएल सुरग पँवार ॥ ४ ॥
सुन्दर कुच जुग नख खत भरी।
जनि गज कुंभ विदारल हरी ॥ ६ ॥
अधर दसन देखि जिउ मोरा काँपे।
चाद-मडल जनि राहु क झाँपे ॥ ८ ॥
समुद ऐसन निसि न पारिए ऊर।
कखन उगत मोर हित भए सूर ॥१०॥
मोयँ न जाएव सखि तन्हि पिया ठाम।
बरु जिउ मारि नडावथि काम ॥१२॥
भनइ विद्यापति तेज भय लाज।
आग जारिये पुनु आगि क काज ॥१४॥

१—परिरम्भन = गाढ़ आलिंगन। पीड़लि = पीड़ित हुई। मदने = काम-द्वारा। २—उबरिअएलहु = मैं बच आई। पुने = पुण्य से। ३—छिड़िआएल = बिखर पड़ा। ४—सुरग = लाल। पँवार = प्रवाल मूँगा। ५—कुच = स्तन। जुग = दो। नख-खत = नखों-द्वारा किये गये घाव। ६—गज-कुंभ = हाथी के पेट। विदारल = विदीर्ण किया चीर फाड़ डाला। हरी = सिंह। ७—ओष्ठ पर दाँतों का आक्रमण करते देख मेरे प्राण काँप उठे। ८—राहु क झापे = राहु का आक्रमण। ९—समुद = समुद्र, सागर। ऐसन = समान। ऊर = ओर सीमा।

(६७)

कि कहब हे सखि रातुक बात।
मानिक पडल कुगनिक हात॥ २॥
काँच कचन न जानए मूल।
गुंजा रतन करेए समतूल॥ ४॥
जे किछु कभु नहि कला रस जान।
नीर खीर दुह करए समान॥ ६॥
तन्हि सौं कहाँ पिरीत रसाल।
बानर-कंठ कि मोतिम माल॥ ८॥
भनइ विद्यापति इह रस जान।
बानर मुँह की सोभए पान॥ १०॥

१०—उगन = उगेगा। सूर=सूय। ११—मोयँ = मैं। तन्हि = उस। १२—बरु = भले ही। नडाबथि = छोड़ दे। १४—आग जलाती है, किन्तु पुन आग ही की जरुरत होती है।

१—कि कहब = क्या कहूँ। रातु क = रात की। २—मानिक = माणिक, मणि। पड़ल = पड़ गया। कुबानिक = अपटु व्यापारी। हात= हाथ। ३—कचन = सोना। मूल=मूल्य, कीमत। ४—गुजा=एक प्रकार का लाल फल जो जगल में विशेष होता है वनवासी इसकी माला बनाते हैं घुँघुची। रतन = रत्न मणि। समतूल = समान। ६—नीर= पानी। खीर = क्षीर = दूध। ७—तहिसौं=उनमे। रसाल=रस मय। ८—बानर = बदर। कि = क्या। १०—इह = यह। की= क्या। सोभए = शोभता है।

(६८)

पहलु क परिचय पेम क संचय
रजनी आध समाजे।
सकल कला रस सँभरि न भेले
वैरिनि भेलि मोरि लाजे॥ २॥
साए साए अनुसए रहलि बहुते।
तन्हिहि सुबन्धु के कहिए पठाइअ
जाँ भमरा होअ दूते॥ ४॥
खनहि चीर धर खनहि चिकुर गह
करए चाह कुच भंगे।
एकलि नारि हम कत अनुरंजब
एकहि वेरि सब रंगे॥ ६॥

१—पहिलु क = प्रथम बार का। परिचय = जान पहचान। पेम क= प्रेम का। रजनी = रात। पहली बार का परिचय था—प्रथम प्रथम भेंट हुई थी, अतः प्रेम के संचय में ही—प्रेमासक्ति में ही—आधी रात बीत गई। २ = सँभरि न भेले = सँभल कर न हुआ—अच्छी तरह नहीं हुआ। भेलि = हुई। ३—साए = सखि। अनुसए = अनुताप, पछतावा। रहलि=रह गया। ४—तन्हिहि = उनके। कहिए पठाइअ = बात पठाना, दूत भेजना। जा=जिस प्रकार। भमरा= भ्रमर = भौंरा। ५—खनहि = क्षण में। चीर=साड़ी। चिकुर= केश। गह=पकड़ना। कुच-भंग=कुच को विमर्दित करना। ६— एकलि = अकेली। कत = कितना। अनुरंजब = अनुरंजन करूँगी, प्रेम निबाहूँगी। वेरि = बार।

तखन विनय जत से सव कहब कत
कहए चाहल कर जोली।
नव रस-रंग भग भए गेल सखि
ओर धरि भेल न बोली ॥८॥
भनइ विद्यापति सुनु वरजौवति
पहु अभिमत अभिमाने।
राजा सिवसिंघ रूप नरायन
लखिमा देइ विरमाने ॥१०॥

७—तखन = उस समय। जत = जितना। से = वह। कहब = कहूँगी। कत = कितना। कहए चाहल = कहना चाहा। कर जोली = हाथ जोड़कर। ८—नव = नवीन, नया। भग भए गेल = भग हो गया। ओर = अन्त। ओर धरि भेल न बोली = अन्त तक वह भी न सकें—साफ-साफ बात भी नहीं कह सके। ७—८, इस पद का तात्पर्य यह है कि समागम के समय श्रीकृष्ण यह देखकर कि राधा उनकी प्रत्येक चेष्टा का यथोचित समाधान नहीं करती, दोनों हाथ जोड़कर उस समय उसकी प्रार्थना करने लगे। यों ऐन मौके पर दोनों हाथ प्रार्थना के लिये जोड़े जाने के कारण रति-रंग में भग हो गया। फिर तो कृष्ण के मुख से बोली तक नहीं निकली। इस पद का यथार्थ मर्म विदग्ध पाठक ही समझ सकेंगे। ९—पहु = प्रभु, प्रीतम। अभिमत = युक्तियुक्त। १०—विरमाने = विरमण, प्रीतम, पति।



कौतुक

(६६)

उठ उठ माधव कि सुतसि मद।
गहन लाग देखु पुनिम क चंद ॥ २ ॥
हार-रोमावलि जमुना-गग।
त्रिवलि त्रिवेनी विप्र अनंग ॥ ४ ॥
सिंदुर तिलक तरनि सम भास।
धूसर मुख-ससि नहि परगास ॥ ६ ॥
एहन समय पूजह पँचवान।
होअ उगरास देह रतिदान ॥ ८ ॥
पिक मधुकर पुर कहइत बोल।
अलपओ अवसर दान अतोल ॥१०॥
विद्यापति कवि एहो रस भान।
राए सिवसिंघ सब रसक निधान ॥१२॥

१—मद=असमय। २—गहन = ग्रहण। ३—४—रोमावलि=कमर के निकट के—केशों की—पंक्ति। त्रिवलि = पेट में पड़ी तीन रेखायें। अनग = कामदेव। हार और रोमावली क्रमश गगा और यमुना है त्रिवली ही त्रिवेणी है और कामदेव ही विप्र है। ५—सिंदुर तिलक = सिंदूर का टीका। तरनि = सूर्य। भास = प्रकाशित। ६—धूसर = धूमिल, प्रभाहीन। परगास=प्रकाश। ७—एहन = ऐसा। पँचवान = कामदेव। ८—होअ उगरास = उगरास होगा ग्रहण छूटेगा। देह रति दान = रति का दान दो। ९—पिक = कोयल। मधुकर = भौंरा। पुर कहइत बोल = गाँव में कहता फिरता है। १०—अलपओ=थोड़ा ही। अतोल = अनन्त।

(१००)

त्रिवलि तरंगिनि पुर दुग्गम जानि
मनमथ पत्र पठाऊ।
जौवन-दलपति तोहि समर लागि
ऋतुपति-दूत वढाऊ ॥ २ ॥
माधव, अब, देखु साजिए बाला।
तसु सैसव तोहें जे संतापल
से सब आओत पाला ॥ ४ ॥
कुंडल चक्र तिलक अंकुस कए
चँदन कवच अभिरामा।
नयन कमान कटाख बान दए
साजि रहल अछि बामा ॥६॥
सुन्दरि साजि खेत चलि आइलि
विद्यापति कवि भाने।
राजा सिवसिंघ रूप नरायन
लखिमा देइ रमाने ॥ ८ ॥

१—त्रिवलि = पेट में पड़ी तीन रेखायें। तरंगिनि = नदी। त्रिवली रूपी नदी के तट पर (बसे हुए) नगर को दुर्गम जान कामदेव रूपी राजा ने (उसे विजय करने को) पत्र भेजा। २—दलपति=सेनापति। समर लागि = युद्ध के लिये। ऋतुपति = वसंत। ४—तसु = उसके। तोहें = तुमने। संतापल = दुःख दिया। ५—कुण्डल चक्र = कुण्डल (कर्णभूषण) चक्र है। तिलक-अंकुस = टीका ही अंकुश है। चंदन कवच = चंदन का लेप ही शरीर-रक्षा है। ६—कमान = धनुष। ७—खेत = युद्धभूमि।

(१०१)

अम्बर वदन झपावह गोरी ।
राज सुनइछिअ चाँद क चोरी ॥ २ ॥
घर घर पहरि गेल अछ जोहि ।
अरही दूखन लागत तोहि ॥ ४ ॥
कतए नुकाएव चाँद क चोर ।
जतहि नुकाओव ततहि उजोर ॥ ६ ॥
हास सुधारस न कर उजोर ।
वनिक धनिक धन वोलव मोर ॥ ८ ॥
अधर क सीम दसन कर जोति ।
सिंदुर क सीम वैसाओलि मोति ॥ १० ॥
भनइ विद्यापति होह निरसंक ।
चाँदहु काँ थिक, भेद कलंक ॥ १२ ॥

१—अम्वर = वस्त्र । वदन = मुख । झपावह = ढाँप लो । २—चाँद क = चन्द्रमा की । ३—पहरि = प्रहरी, पहरुआ । गेल छ्ल जोहि = ढूँढ गया है । ४—दूखन — दाप कलक । ५—कतए = कहाँ । नुकाएव = छिपेगा । ६—उजोर = प्रकाश । ७-१०—हास = हँसी । सुधारस = अमृत का रस । अधर क सीम = ओष्ठ के निकट । दसन = दाँत । वैसाओलि = बैठाया । हँसकर प्रकाश मत करो, धनी व्यापारी कहेंगे कि ये मेरे ही धन हैं (क्योंकि) ओष्ठ के निकट दाँत प्रकाश फैला रहे हैं (जो मुक्ता के समान हैं) और सिंदूर बिन्दु मोती से चमक रहे हैं । ११—होह = होओ । १२—थिक = है । चाँद (और तुम्हारे मुख) में भेद है क्योंकि उसमें कलक है ।

(१०२)

लोलुअ वदन सिरी अछि धनि तोरि।
जनु लागिह तोहि चाँद क चोरि ॥ २ ॥
दरसि हलह, जनु हेरह काहु।
चाँद-भरम मुख गरसत राहु ॥ ४ ॥
धवल नयन तोर जनि तरुआर।
तीख तरल तेहि कटाख क धार ॥ ६ ॥
निरखि निहारि फाँस गुन जोलि।
बाँधि हलय तोहि खंजन बोलि ॥ ८ ॥
सागर-सार चोराओल चंद।
ता लागि राहु करए बड दंद ॥१०॥
भनइ विद्यापति होउ निरसंक।
चाँदहु की किछु लागु कलंक ॥१२॥

१—लोलुअ = आन्दोलित, चचल। वदन-सिरी = वदनश्री मुख की शोभा। अछि = असि, है। धनि=स्त्री। २—जनु = नहीं। ३-४-दरसि हलह = देखकर (झटपट) हट जाओ। 'शृंगार-तिलक" में यों ही लिखा है—'झगिति प्रविश गेहे मा बहिस्तिष्ठ कान्ते, ग्रहण समय-वेला वर्तते शीतरश्मे। तव मुखमकलंक वीक्ष्य नूनं स राहु ग्रसति तव मुखेन्दु पूर्णचन्द्र विहाय ॥— ५—धवल = उजला। जनि = जैसा। तरुआर = तलवार। ६—तीख=तीक्ष्ण। कटाख क = कटाक्ष की। ७-८—निरखि=नीचे की ओर। फाम गुन = गुण रूपी फंदे में। जोलि=जोड़कर बांधकर। हलय=ले जायगा। बोलि=समझकर। ९—सागर-सार = अमृत। १०—दंद = द्वन्द्व। जोर-जुल्म।

(१०२)

साँझ क बेरि उगल नव ससधर
भरम विदित सवितहु।
कुण्डल चक्र तरास नुकायल
दूर भेल हेरथि राहु ॥२॥
जनु बइससि रे बदन हाथ लाई।
तुअ मुख च गिम अधिक चपल भेल
कति खन धरब नुकाई ॥४॥
रक्तोपल जनि कमल बइसाओल
नील नलिनि दल तहु।
तिलक कुसुम तहु माझु देखिकहु
भमर आवथि लहु लहु ॥६॥
पानि पलव गत अधर विम्ब रत
दसन दाड़िम बिज तोरे।
कीर दूर भेल पास न आवए
भौंह धनुहि के भोरे ॥८॥

१—सध्या क समय नवीन चन्द्र का उन्य हुआ जिममे सूर्य का भी भ्रम हुआ—मतलब यह है कि सूर्यास्त हो रहा था उसी समय नायिका घर से निकली। सूय अभी पूर्णत अस्त नहीं हुए थे उन्हें आश्चर्य हुआ कि मेरे अस्त होने के पहले ही यह कौन सा नवीन चन्द्रमा उदित हुआ। २—कुण्डल-चक्र = कुण्डल (कर्णफूल) रूपी चक्र। नुकायल = छिपा हुआ। ३—बदन हाथ लाइ = मुख हाथ पर रखकर। ४—चगिम = सुन्दर। कति खन = कब तक।

(१०४)

बड कौसलि तुग्र राधे।
किनल कन्हाई लोचन आधे ॥२॥
ऋतुपति हटवप नहिं परमादी।
मनमथ मधथ उचित मूलवादी ॥४॥
द्विज पिक लेखक मसि मकरदा।
काँप भमर-पद ,साखी चदा ॥६॥
बहि रति-रग लिखापन माने।
श्री सिवसिंध सरस कवि भाने ॥८॥

५—रक्तोपल = लाल कमल (हाथ) । कमल = (मुख) । नील नलिनि = नील कमल (आँखें) । तहु = वहां भी । ६— लहु लहु = धीरे धीरे। ७—पानि-पलव-गत = हाथ पल्लव के समान है। अधर = ओठ। बिम्ब रत = बिम्ब फल के समान। दाड़िम बीज = अनार के दाने ८—कीर = सुग्गा। भोरे = भ्रम में।

१—कौसलि = सुचतुरा । किनल = क्रय किया खरीदा। २—लोचन आधे = आधी आँख से, एक कटाक्ष से। ऋतुपति = वसन्त। हटवप = व्यापारी । नहिं परमादी = प्रमादी नहीं बुद्धिमान्। ४—मनमथ = कामदेव । मधथ = मध्यस्थ, दलाल । मूल = मूल्य। वादी = कहने वाला । ५—द्विज पिक लेखक = कोयल रूपी ब्राह्मण लेखक हैं । मसि = रोशनाई । मकरन्दा = पराग। ६—कांप = काँड़े का कलम। भमर पद = भौंरे का पैर। साखी = साक्षी, गवाह। बहि = बही, हिसाब की पुस्तक। रति-रग = काम-विलास। लिखापन माने = मान लिखा गया। इस पद

(१०५)

कंचन गढल, हृदय हथिसार।
ते थिर थम्भ पयोधर भार ॥ २ ॥
लाज सिकर धर दृढ कए गोए।
आनक वचन हलह जनु कोए ॥ ४ ॥
दूर कर अगे सखि चिन्ता आन।
जओवन हाथि करिय अवधान ॥ ६ ॥
मनसिज मदजल जओं उमताए।
धरिहसि पिअतम-आकुस लाए ॥ ८ ॥
जावे न सुमत तावे अगोर।
मुसइत मनिहसि मानस चोर ॥१०॥
भन विद्यापति सुन मतिमान।
हाथि महत नव के नहि जान ॥१२॥

संस्कृतानुवाद स्वयं विद्यापति ने यों किया है—'रत्नाकरसुता मार्या यस्य कृष्णस्य राधिके। लोचनार्द्धेन स क्रीतस्त्वया ते कौशलम्महत् ॥ हट्टाधिपो वसन्तस्मोहप्रमारी विचक्षण। योग्यमूल्यार्थ वादी च मध्यस्थो मन्मथोऽभवत्। भ्रमरस्य पद कर्पो लेखक कोकिलो द्विज। अमुत् कृष्ण भये राधे शशी पात्र मर्मी मधु ॥ बद्दिनति रति-क्रीडा मानो वेदन लेखक। कृष्णस्य शिवसिंहेन वाणी विद्यापते कवे।'

१—कचन = सोना। हथिसार = हस्ती-शाला। २—थिर = स्थिर। थम्भ = स्तम्भ, खम्भा। पयोधर = कुच। ३—सिकर = शृङ्खला, जंजीर। गोए = छिपाकर। ४—आनक = दूसरे के। हलह जनु कोए = कभी मत खोल दो। ६—जवानी को ही हाथी समझ लो।

(१०६)

फउडि पठाओले पाव नहि घोर।
घीव उधार माँग मति भोर ॥२॥
वास न पावए माँग उपाति।
लोभ क रासि पुरुस थिक जाति ॥४॥
कि कहव आज कि कौतुक भेल।
अपदहि कान्हक गौरव गेल ॥६॥
आएल वइसल पाव पोआर।
सेज क कहिनी पूछए विचार ॥८॥
ओछाओन खँडतरि पलिआ चाह।
आओर कहव कत अहिरिनि-नाह ॥१०॥
भनइ विद्यापति एहु गुनमत।
सिरि सिवसिंघ लखिमा देइ कंत ॥१२॥

७—मनसिज = कामदेव। मदजल = हाथी के मस्तक से चूने पानी। उमताए = पागल हो। पियतम-आकुस = प्रीतम रूपी अं[illegible] ९—सुमन = मत में आ जाय। १०—मुमइत = (मुंह [illegible] खोलने से। मनिहसि = मना करना। १२—महन = मत्त, पागल।

१—कउड़ि = कौड़ी। (यहां मूल्य)। पठाओने = दे[illegible] पर भी। घोर = मट्ठा। २—घीव = घी। मतिभोर = मूर्ख [illegible] ३—वास = रहने की जगह। उपाति = खाद्य सामग्री। ल[illegible] रासि = लोभ का खजाना। थिक = है। ६—अपदहि = अप[illegible] पर, बुरी जगह। ७—पोआर = पुआल। ८—ओछाओन = बिछावन। खँड़तरि = जीर्ण-शीर्ण चगड़। पलिया = पलग।

अभिसार

(१०७)

धनि धनि चलु अभिसार।
सुभ दिन आजु राजपन मनमथ
पाओल कि रीति विथार ॥२॥
गुरु जन नयन अंध करि आओल
बाधव तिमिर निसेख।
तुअ उर फुरत वाम कुच लोचन
बहु मंगल करि लेख ॥४॥
कुलवति धरम करम भय अब सब
गुरु मंदिर चलु रारि।
प्रियतम संग रंग कर चिर दिन
फलत मनोरथ साखि ॥६॥
नीरद निजुरि बिजुरि सयँ नीरद,
किंकिनि गरजन जाने।
हरखए गरराए फुल सब साखी
सिखि कुल दुहु गुन गान ॥८॥

१—अभिसार = गुप्त मिलन। २—राजपन मनमथ = काम का राजत्व है। बिथार = विस्तार। ३—गुरुजन = बड़े लोग। बांधव = बन्धु, मित्र। तिमिर = अन्धकार। ४—फुरत = फड़कना। उर = हृदय। बाम = बायें। लेख = समझो। ६—साखि = साखी, वृक्ष। ७—नीरद = मेघ। सयँ = संग में। मेघ बिजली के साथ रहता है और बिजली मेघ के साथ (यों ही राधा कृष्ण के साथ और कृष्ण राधा के साथ) ८—सिखिकुल = मोर।

(१०८)

कह कह सुन्दरि न कर वेआज।
देखिअ आज अपूरब साज ॥ २ ॥
मृगमद पक करसि अँगराग।
कोन नागर परिनत होअ भाग ॥ ४ ॥
पुनु पुनु उठसि पछिम दिसि हेरि।
कखन जाएत दिन कत अछि वेरि ॥ ६ ॥
नूपुर उपर करसि कसि थीर।
दढ कए पहिरसि तम सम चीर ॥ ८ ॥
उठसि विहँसि हँसि तेजिए सार।
तोर मन भाव सघन अँधिआर ॥ १० ॥
भनइ विद्यापति सुनु वर नारि।
धैरज धर मन, मिलत मुरारि ॥ १२ ॥

१—वेआज = बहाना। ३—मृगमद पक = कस्तूरी का लेप (जो काला होता है)। ४—कोन = कौन। किस नायक का भाग्य परिणत हुआ—किसका भाग्योदय हुआ है। ५—हेरि = देखना। ६—कखन = कब। कत = कितना। अछि = अस्ति = है। वेरि = समय। ७—नूपुर को पैर के ऊपरी भाग में कसकर स्थिर करती हो जिसमें चलने पर शब्द न हो। ८—तम-सम = अन्धकार के समान काला। ९—तेजिए सार = सार त्याग कर, अकारण ही। १०—तोर = तुम्हारे। भाव = अच्छा लगता है। अँधिआर = अन्धकार।

(१०६)

माधव, जनि आपलि कत भाति ।
प्रेम हेम परखाओल कसोटी
भादव कुहु तिथि राति ॥ २ ॥
गगन गरज घन ताहि न गन मन
कुलिस न कर मुख वका ।
तिमिर अजन जलधार धोए जनि
तें उपजावति संका ॥ ४ ॥
भाग भुजग सिर कर अभिनय, कर-
झापल फनिमनि दीप ।
जानि सजल घन से देइ चुम्बन
तें तुअ मिलन समीप ॥ ६ ॥
नारि रतन धनि नागर व्रज मनि
रस गुन पहिरल हार ।
गोविंद चरन मन कह कविरंजन
सफल भेल अभिसार ॥ ८ ॥

२—हेम = सोना । कसौटी भादव कुहु तिथि राति = भादो की अमावस्या की रात रूपी कसौटी पर । ३—गगन = आकाश । कुलिस = वज्र, ठनका । मुख वका = मुख टेढ़ा करना, विमुख करना । ४—तिमिर अजन = अधकार रूपी अजन का । जनि = नहीं । ५—भागते हुए सर्प के सिर पर मानो नृत्य करती है और सर्प के मणि को हाथ से ढाँप लेती है । ६—इस भाव का पद गीतगोविन्द में यों है—श्लिष्यति चुम्बति जलधर कल्पम्, हरिरुपगत इति तिमिर मन-

(११०)

चन्दा जनि उग आजुक राति।
पिआ के लिखिअ पठाओब पाँति ॥ २ ॥
साओन सयँ हम करब पिरीत।
जत अभिमत अभिसार क रीत ॥ ४ ॥
अथवा राहु बुझाएब हँसी।
पिबि जनि उगिलह सीतल ससी ॥ ६ ॥
कोटि रतन जलधर तोहे लेह।
आजुक रयनि घन तम कए देह ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुभ अभिसार।
भल जन करथि पर क उपकार ॥१०॥

त्पम् ॥ ७—धनि=बाला (राधे) । नागर–नायक (कृष्ण) ८—कवि रतन = विद्यापति का उपनाम ।

१—जनि = नहीं । उग=उदय हो । पठाओब = पठाऊंगी, भेजूंगी । पाँति = पत्र । ३—साओन सयँ = श्रावण मास से । ४—अभिमत = मनोनीत । जो अभिसार करने की निश्चित रीति है—निश्चित काल है । ६—पिबि = पीकर । उगिलह = उगल दो । ससी = चन्द्रमा । ७—जलधर=मेघ । लेह = लो । ८—रयनि = रजनी, रात । घन = घना, निविड़ । । तम = अन्धकार । देह = दो । १०—करथि=करते हैं । पर क=दूसरे का ।

Poetry is an emotion realized in tranquility
—Wordswroth

(१११)

आजु मोयँ जायब हरि समागम
कत मनोरथ भेल।
घर गुरुजन निंद निरुपद्दत
चन्द उदय देल ॥ २ ॥
चन्दा भलि नहि तुअ रीति।
पहि मति तोहे कलँक लागल
किछु न गुनह भीति ॥ ४ ॥
जगत नागरि मुख जितल जय
गगन गेला हारि।
तहँओ राहु गरास पडला
देव तोह कि गारि ॥ ६ ॥
एक मास विहि तोहि सिरिजए
दए सकलओ बल।
दोसर दिन पुनु पूर न रहसो
एही पाप क फल ॥ ८ ॥
भन विद्यापति सुन तोयँ जुवती
न कर चाँद क साति।
दिना सोरह चाँद क आइति
ताहि पए भलि राति ॥१०॥

२—निंद निरुपद्दत = नींद का निरुपन करते, साते—न—सोते। ४—भीति=डर। ५—ससार में जब स्त्रियों ने तुम्हारे मुख को जीत लिया—अपनी मुखश्री से तुम्हें पराजित किया—तब तुम हारकर

(११२)

गगन अब घन मेह दारुन, सघन दामिनि झलकई।
कुलिस पातन सबद झनझन, पवन खरतर बलगई ॥२॥
सजनी, आजु दुरदिन भेल।
कत हमर नितांत अगुसरि सँकेत कुँज हि गेल ॥३॥
तरल जलधर बरिख झर झर, गरज घन घनघोर।
साम नागर एकले कइसन, पथ हेरए मोर ॥६॥
सुमिरि मभु तनु अवस भेल, जनि अथिर थर थर काप।
ई मभु गुरुजन नयन दारुन, घोर तिमिरहि झाप॥ ८॥
तुरित चल अब किए विचारत, जीवन मभु अगुसार।
कवीसेखर वचन अभिसर, किए से विघिन विथार ॥१०॥

आकाश में भाग गये। ७—पुर=पूर्ण। ९—सानि=शालि, निन्दा।
१०—आइति=आयत्त, सीमा। तोहि पर=उसके बाद।

१—गगन=आकाश। घन = घना, निबिड़। दामिनि = बिजली।
२—कुलिस पातन = वज्र का गिरना ठनका की ठाक। खरतर बल गई = अत्यन्त तेजी से सनसनाती हुई बहती है। ४—अगुसरि = अग्रसर होकर, आगे जाकर। सकेत = गुप्त मिलन स्थान। ५—तरल=अस्थिर, चलायमान। जलधर = मेघ। बरिख = बरसता है। ६—साम = श्याम, श्रीकृष्ण। एकल=अकेले। ७—मभु=मेरा। अथिर=चचल। ८—ई—यह। गुरुजन=बड़े लाग श्रेष्ठ पुरुष। तिमिरहि=अंधकार। ९—तुरित = तुरत। किए = क्या। विचारत=विचारती हो। मभु=मध्य, में। अगुसार=अग्रसर होओ, बढ़ो।
१०—अभिसर=अभिसार करो। विथार=विस्तार।

(११३)

रयनि काजर वम, भीम भुजगम,
कुलिस परए दुरवार।
गरज तरज, मन रोस वरिस घन
ससश्र पड अभिसार ॥२॥
सजनी, वचन छडइ तमोहि लाज।
होएत से होश्रो नर सब हम अगिकर
साहस मन देल श्राज ॥४॥
श्रपन श्रहित लेख कहइत परतेख
हृदय न पारिश्र श्रोर।
चाद हरिन वह राहु कवल सह
प्रेम पराभव थोर ॥६॥

१–रयनि - रात। बम = वमन करता है। रयनि काजर बम = रात अंधकार पूर्ण है। भीम = विशाल। भुजगम = सर्प। कुलिस = वज्र, ठनका। दुरवार = जिमसे बचना मुश्किल है। २–रास = रोष, क्रोध। ४—होएत से होओ नर = जो होना होगा, वह भले ही हो जाय। अगिकरु = अंगीकार करुगी। ५—अहित = बुराई। लेख = समझना। परतेख = प्रत्यक्ष। ओर = सीमा, अन्त। ६—हरिन = चन्द्रमा में जो हरिन के आकार का काला धब्बा है। वह = धारण करना। कवल = कौर, ग्रास। सह = साथ। पराभव = हार। राहु का ग्रास हो जाने पर भी चन्द्रमा हरिण को धारण किये रहता है प्रेम में पराजय है ही नहीं— किसी विघ्न बाधा से प्रेम का नाश नहीं हो सकता।

चरन येढिल फनि हित मानलि धनि
नेपुर न फरए रोर।
सुमुखि पुछओं तोहि सरुप कहसि मोहि
सिनेह क कत दुर ओर ॥८॥
ठामहि रहिअ घुमि परस चिन्हिअ भूमि
दिग मग उपजु सँदेह।
हरि हरि सिव सिव तावे जाइअ जिव
जावे न उपजु सिनेह ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुनह सुचेतनि
गमन न करह विलम्ब।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
सकल कला अवलम्ब ॥१२॥

---

७ बेढ़लि = लपेटना, घेरना। फनि = सर्प। रोर = शब्द झंकार। पैर में सर्प लिपट जाने पर बाला ने उसे अपना हित समझा क्योंकि (सर्प लिपट जाने से) नूपुर झंकार नहीं करते थे। ८—सरूप = सत्य। ओर = अन्त। सुन्दरी मैं तुमसे पूछती हूँ, सच सच बताओ प्रेम की अन्तिम सीमा कहाँ पर है? ९—दिग = दिशा। घूम घूम कर एक ही स्थान पर चली आती हूँ। स्पर्श से ही पृथ्वी जानी जाती है (अन्धकार के कारण दीख नहीं पड़ती) दिशा और राह के विषय में सन्देह है—मालूम होता है कि दिग्भ्रम हो गया है जिससे मैं राह भूल गई हूँ। १०—तावे = तब तक। जावे = जब तक। ११ —सुचेतनि = बुद्धिमती सुचतुरा। —जाने में।
१०—आमसर—

(११४)

सखि हे, आज जाएब मोहि ।
घर गुरुजन डर न मानब
वचन चूकब नहि ॥ २ ॥
चानन आनि आनि अग लेपब
भूषन कए गजमोति ।
अंजन विहुन लोचन जुगुल
धरत धवल जोति ॥ ४ ॥
धवल वसन तनु झपाएब
गमन करब मंदा ।
जइओ सगर गगन ऊगत
सहस सहस चदा ॥ ६ ॥
न हम काहुक डीठि निवारबि
न हम करब ओत ।
अधिक चोरी पर सयँ करिअ
एहे सिनेह क सोत ॥ ८ ॥
भन विद्यापति सुनह जुवती
साहस सकल काज ।
बूझ सिवसिंघ ३ रस रसमय
सोरम देवि समाज ॥१०॥

३—चानन = चदन । आनि = लाकर । ३—विहुन = रहित । धवल = उजला । ५—मदा = धीरे धीरे । ६—सगर = समग्र = समूचे । गगन = आकाश । ७—निवारबि=बचा दूंगी । ओत–ओट । सोत=स्रोत ।

(११५)

प्रथम जउवन नव गरग्र मनोभव
छोटि मधुमास रजनि ।
जागे गुरजन गेह राखए चाह नेह
सम्ग्र पडल सजनि ॥ २ ॥
नलिनी दल निर चित न रहए थिर
तत उर तत हो वहार ।
विहि मोर वड मदा उगि जनु जाए चंदा
सुति उठि गगन निहार ॥ ४ ॥
पथहु पथिक संका पय पय धए पंका
कि करति ओ नव तरुनी ।
चलए चाह धसि पुनु पड खसि खसि
जाल क छेकलि हरिनी ॥ ६ ॥
साए साए कओन बेदन तसु जाने ।
निकुंज वनहि हरि जाइति कओन परि
अनुसन हन पचवाने ॥ ८ ॥
विद्यापति भन कि करत गुरजन
नींद निरूपल लागी ।
नयन नीर भरि धीर झपावए
रयनि गमाउए जागी ॥ १० ॥

१–मधुमास = चैत्र । ३–नलिनी दल निर=कमल के पत्ते पर के पानी के समान । वहार=बाहर । ४–सुति=सागर । ५–पय = पग । पंका=कीचड़ । ६–जाल क छेकलि=जाल में घिरी हुई । ७–साए=माँ । ८–हन=मारना ।

(११६)

अबहु राजपथ पुरुजन जागि।
चाँद किरन नभमडल लागि ॥ २ ॥
सहए न पारए नव नव नेह।
हरि हरि सुन्दरि पडलि संदेह ॥ ४ ॥
कामिनि कएल कतहु परकार।
पुरुष क बेस कएल अभिसार ॥ ६ ॥
धम्मिल लोल झाँट कए बंध।
पहिरल बसन आन करि छन्द ॥ ८ ॥
अम्बर कुच नहि सम्बर भेल।
बाजन यन्त्र हृदय करि लेल ॥१०॥
अइसए मिलिलि धनि कुँज क माझ।
हेरि न चिन्हइ नागर राज ॥ १२ ॥
हेरइत माधव पडलन्हि धंद।
परसइत भाँगल हृदय क दंद ॥१४॥
भनइ विद्यापति सुन वर नारि।
दूध-समुद जनि राज मरालि ॥ १६ ॥

३—सहए न पारए = सह नहीं सकती। नव = नया। ५—परकार = प्रकार, उपाय। ७—धम्मिल = केश, वेणी। लोल = चंचल। झाँट = झोंटा, खोंपा, जूड़ा। चंचल वेणी को (साधुओं के ऐसा) जूड़ा के समान बाँधा। ८—आन छन्द करि = दूसरी तरह से। ९—अम्बर = कपड़ा। सम्बर = सँभलना। किन्तु कपड़े से कसे जाने पर भी कुच सँभल न सके, छिप न सके। १०—बाजन-यन्त्र = सितार। हृदय करि

(११७)

चरन नूपुर उपर सारी।
मुखर मेखल कर निवारी ॥ २ ॥
अम्बर सामर देह झपाइ।
चलहु तिमिर पथ समाई ॥ ४ ॥
ममुद कुसुम रभस रसी।
अबहि उगत कुगत ससी ॥ ६ ॥
आएल चाहिअ सुमुखि तोरा।
पिसुन लोचन भम चकोरा ॥ ८ ॥
अलक तिलक न कर राधे।
अग विलेपन करह बाधे ॥ १० ॥
कुसुमित कानन कालिन्दि तीर।
तहाँ चलि आओल गोकुल बीर ॥१२॥
तयँ अनुरागिनि ओ अनुरागी।
दूपन लागत भूपन लागी ॥ १४ ॥
भन विद्यापति सरस कवि।
नृपति कुल सरोरुह रवि ॥१६॥

लेल = हृदय पर रख लिया। १३—धद = सदेह। दद=दन्द दुबिधा। १६—ममुद=समुद्र। राजमरालि=राजहंसिनी।

१—२ पैर के नूपुर को ऊपर चढ़ालो, और मुखरा (शब्द करने वाली) करधनी को हाथ से निवारण करो। ३—अम्बर = वस्त्र। तिमिर पथ = अंधकार पूर्ण राह। समाई = घुसकर। ५—समु = समुद्र। कुसुम = फूल। रभस = आनन्द। रसी = रस युक्त। ६—कुगत=जिसका

(११८)

जागल घर पर निंद भेल भोरें।
सेज तेजल उठि नंद किसोर ॥ २ ॥
सघन गगन हेरि नखतर पाँति।
अवधि न पाओल छूटल राति ॥ ४ ॥
जलधर रुचिहर सामर काँति।
जुबति-मोहन वेस धरु कत भाँति ॥ ६ ॥
धनि अनुरागिनि जानि सुजान।
घोर अँधिआरे कएल पयान ॥ ८ ॥
पर-नारि पिरित क ऐसन रीति।
चलल निभृत पथ न मानए भीति ॥१०॥
कुसुमित कानन कालिन्दि तीर।
तहँ चलि आओल गोकुल बीर ॥१२॥
कविसेखर पथ मीलल जाइ।
आएल नागर भेंटल राइ ॥ १४ ॥

आगमन अशुभ हो। ससी = चन्द्रमा। ८-पिसुन=दुष्ट। भमअ=भ्रमण कर रहे हैं। ६-अलक-तिलक = महावर और टीका। अंग बिलेपन = शरीर में अंगराग लगाना। करह बाधे = बाधा कर दो, मत लगाओ।

१—घर पर जो जगे थे, सभी सो गये। ३—नखतर = नक्षत्र तारे। ४—रात कितनी बीती इसका अन्दाज न पाया। ५—जलधर = मेघ। रुचि हर=शोभा हरने वाला। ६-जुबति-मोहन = युवतियों का मोहनेवाला। १०-निभृत = अंधकार पूर्ण, सुनसान। १४-राइ = राधा।

(११६)

तपन क ताप तपत भेल महि तल
तातल वालू दहन समान।
चढ़त मनोरथ भामिनी चलु पथ
ताप तपत नहि जान ॥ २ ॥
प्रेम क गति दुरवार।
नविन जौवनि धनि चरन कमल जिनि
तइओ कएल अभिसार ॥ ४ ॥
कुल गुरु गौरव सति-जस अपजस
तृन करि न मानए राधे।
मन मधि मदन महोदधि उछलल
बूडल कुल मरजादे ॥ ६ ॥
कत कत विधिन जितल अनुरागिनि
साधल मनमथ-तंत।
गुरु जन नयन निवारइत सु वदनि
पाठ करए मन मंत ॥ ८ ॥
केलि कलावति कुसुम सरसि कुल
कौसल करल पयान।
जत छल मनोरथ पूरल मनमथ
इह कविसेखर भान ॥ १० ॥

१—तपन क=सूर्य के। ताप = गर्मी। तपत=तप्त, जलती हुई। तातल=गर्म हो गया। दहन=अग्नि। २—मनोरथ=इच्छा रूपी रथ। भामिनि=स्त्री ३—दुरवार=अटल। ४—जिनि=

(१२०)

निअ मंदिर सयँ पग दुइ चारि।
घन घन बरिस मही भर बारि॥ २॥
पथ पीछर बड गरुअ नितम्ब।
खसु कत बेरि नहीं अवलम्ब॥ ४॥
बिजुरि छटा दरसावए मेघ।
उठए चाह जल धारक बेघ॥ ६॥
एक गुन तिमिर लाख गुन भेल।
उतरहु दखिन भान दुर गेल॥ ८॥
ए हरि जानि करिअ मोयँ रोस।
आजुक बिलम्ब दइव दिअ दोस॥१०॥

समान। नइओ = तौ मी। ५—सति=सती स्त्रियों का। ६—मधि = मध्य, में। महोदधि = महा समुद्र। उछलल = उछलने लगा, तरंगित होने लगा। ७—मनमथ = कामदेव। तत = तन्त्र। ८—निवारइत = बचती हुई। मन्त=मन्त्र। ९—कुसुम = फूल। सरसि= सरसी, तालाब। कुल=किनारे। कौसल = छल से। १०—छल = था।

१—निअ = अपना। सयँ=से। पग = डेग। २—घन घन = घने बादल। मही भर बारि=पृथ्वी जल से भर गयी। ३—पीछर = जिसपर पैर फिसल जाय। गरुअ = भारी। नितम्ब = चूतड़। ४—खसु कत बेरि = कितनी बार गिर पड़ी। ६—जल धारा बाँध कर—मूसलधार—बरसना चाहता है। ७—तिमिर = अंधकार। ८—उत्तर और दक्खिन का ज्ञान ही दूर हो गया, दिशा ज्ञान नहीं रहा।

(१२१)

माधव, करिअ सुमुखि समधाने।
तुअ अभिसरि कएलि जत सुन्दरि
कामिन करु के आने॥ २॥
वरिस पयोधर धरनि वारि भरि
रयनि महा भय भीमा।
तइओ चललि धनि तुअ गुन मन गुनि
तसु साहस नहि सीमा॥ ४॥
देखि भवन भित लिखित भुजँग पति
तसु मन परम तरासे।
से सुवदनि कर झपइत फनिमनि
विहुसि आएलि तुअ पासे॥ ६॥
निअ पहु परिहरि अइलि कमल मुखि
परिहरि निअ कुल गारी।
तुअ अनुराग मधुर मद मातलि
किछु न गुनलि वर नारी॥ ८॥
ई रस रसिक विनोद क विन्दक
कवि विद्यापति गावे।
काम प्रेम दुहु एक मत भए रहु
कखने की न करावे॥ १०॥

२—के = कौन। आने = दूसरा। पयोधर = बादल। भीमा = डरावनि। ५—भिति = दीवाल। भुजग = सर्प। ७—कर = हाथ। फनिमनि = सर्प के मणि को। ७—पहु = प्रभु, प्रीतम। गारी—

(१२२)

राहु मेघ भय गरसल सूर।
पथ परिचय दिवसहि भेल दूर॥ २ ॥
नहि बरिसए अवसन नहि होए॥
पुर परिजन संचर नहि कोए॥ ४ ॥
चल चल सुन्दरि, कर गए साज।
दिवस समागम सपजत आज॥ ६ ॥
गुरुजन परिजन डर करु दूर।
बिनु साहस अभिमत नहि पूर॥ ८ ॥
एहि ससार सार वथु एक।
तिला एक सगम, जाव जिब नेह॥१०॥
भनइ विद्यापति कबिकंठहार।
कोटिहुँ न घट दिवस-अभिसार॥१२॥

गाली, शिकायत। १०—करावे = क्व क्या नहीं कराता।

१—मेघ ने राहु बनकर सूय को ग्रस लिया है— मेघ के कारण सूय हीनप्रभ हो गये हैं। २—पथ परिचय = राह को पहचान। दिवसहि = दिन में ही। ३—अवसन = अवसन्न, समास। मेघ न बरसता है, न खुल जाता है। ४—गाँव में लोग नहीं आते-जाते। ५—कर गए साज = जाकर साज करो—शृंगार करो। ६—दिवस समागम = दिन का मिलन। सपजत = सम्पूर्ण होगा। ८—अभिमत = मनोवाञ्छा। ९—सार = तत्त्व, सत्य। वथु = वस्तु। १० = एक क्षण के लिये रति-क्रीड़ा और जीवन भर प्रेम करना। १२—कोटिहु = करोड़ों उपाय करने पर भी। न घट = न घट सकना, न हो सकना।

(१२१)

माधव, करिअ सुमुखि समधाने।
तुअ अभिसरि कएलि जत सुन्दरि
कामिन करु के आँने ॥ २ ॥
बरिस पयोधर धरनि बारि भरि
रयनि महा भय भीमा।
तइओ चललि धनि तुअ गुन मन गुनि
तसु साहस नहि सीमा ॥ ४ ॥
देखि भवन भित लिखित भुजँग पति
तसु मन परम तरासे।
से सुवदनि कर झपइत फनिमनि
विहुसि आएलि तुअ पासे ॥ ६ ॥
निअ पहु परिहरि अइलि कमल मुखि
परिहरि निअ कुल गारी।
तुअ अनुराग मधुर मद मातलि
किछु न गुनलि बर नारी ॥ ८ ॥
ई रस रसिक विनोद क विन्दक
कवि विद्यापति गावे।
काम प्रेम दुहु एक मत भए रहु
कखने की न करावे ॥ १० ॥

२—के = कौन। आने = दूसरा। पयोधर = बादल। भीमा = डरावनि। ५—भिति = दीवाल। भुजग = सर्प। ७—कर = हाथ। फनिमनि = सर्प के मणि को। ७—पहु = प्रभु, प्रीतम। गारी—

(१२२)

राहु मेघ भए गरसल सूर।
पथ परिचय दिवसहि भेल दूर॥ २ ॥
नहि बरिसए अवसन नहि होए॥
पुर परिजन सचर नहि कोए॥ ४ ॥
चल चल सुन्दरि, करे गए साज।
दिवस समागम सपजत आज॥ ६ ॥
गुरुजन परिजन डर करु दूर।
बिनु साहस अभिमत नहि पूर॥ ८ ॥
एहि ससार सार वथु एक।
तिला एक सगम, जाव जिव नेह॥१०॥
भनइ विद्यापति कविकठहार।
कोटिहुँ न घट दिवस अभिसार॥१२॥

गाली, शिकायत। १०—बरसने = बन क्या नहीं कराना।

१—मेघ ने राहु बनकर सूर्य को ग्रस लिया है—मेघ के कारण सूर्य हीनप्रभ हो गये हैं। २—पथ-परिचय = राह की पहचान। दिवसहि = दिन में ही। ३—अवसन = अवसान, समाप्त। मेघ न बरसता है, न खुल जाता है। ४—गाँव में लोग नहीं आते-जाते। ५—कर गए साज = जाकर साज करो—शृंगार करो। ६—दिवस समागम = दिन का मिलन। सपजत = सम्पूर्ण होगा। ८—अभिमत = मनोवाञ्छा। ९—सार = तत्त्व, सत्य। वथु = वस्तु। १० = एक क्षण के लिये रति-क्रीड़ा और जीवन भर प्रेम करना। १२—कोटिहु = करोड़ों उपाय करने पर भी। न घट = न घट सकना, न हो सकना।

(१२३)

आज पुनिम तिथि जानि मोयँ अएलिहुँ
उचित तोहर अभिसार ।
देह-जोति ससि किरन समाइति
के विभिनावए पार ॥ २ ॥
सुन्दरि अपनहु हृदय विचारि।
आख पसारि जगत हम देखलि
के जग तुअ सम नारि ॥ ४ ॥
तोहँ जनि तिमिर हीत कए मानह
आनन तोर तिमिरारि ।
सहज विरोध दूर परिहरि धनि
चलु उठि जतए मुरारि ॥ ६ ॥
दूती वचन हीत कए मानल
चालक भेल पँचवान ।
हरि अभिसार चललि वर कामिनि
विद्यापति कवि भान ॥ ८ ॥

१—पुनिम = पूर्णिमा । अएलिहुँ = मैं आई । २—देह जोति = शरीर की कांति । ससि किरन = चन्द्रमा की किरन (में)। समाइति = घुस जायगी, मिल जायगी । के = कौन । विभिनावए पार = विभिन्न कर सकता है, अलग कर सकता है । ५—जनि—नहीं । तिमिर = अंधकार । हीत = मित्र । आनन = मुख । तिमिरारि = अंधकार का शत्रु चन्द्र । ६—जतए = जहाँ । ७—चालक = प्रेरक । पँचवान = काम । हरि अभिसार = कृष्ण से गुप्त मिलन करने को ।

(१२४)

अरुन किरन किछु अम्बर देल।
दीपक सिखा मलिन भए गेल ॥ २ ॥
हठ तज माधव जएबा देह।
राखए चाहिअ गुपुत सनेह ॥ ४ ॥
दुरजन जाएत परिजन कान।
सगर चतुरपन होएत मलान ॥ ६ ॥
भमर कुसुम रमि न रह अगोरि।
केओ नहि बेकत करए निअ चोरि ॥८॥
अपनयँ धन हे धनिक धर गोए।
परक रतन परगट कर कोए ॥ १० ॥
फाब चोरि जौं चेतन चोर।
जागि जाए पुर परिजन मोर ॥१२॥
भनइ विद्यापति सखि कह सार।
से जीवन जे पर उपकार ॥ १४ ॥

१— अरुन किरन=सूर्य की किरण। अम्बर=आकाश। २—सिखा=लौ, टेम। ३—तज=छोड़ो। जएबा देह=जाने दो। ४—गुपुत=गुप्त, छिपा हुआ। ६—सगर=सब। मलान=म्लान, मलिन। ७—भमर=भौंरा। रमि=रमण कर, विहार कर। अगोरि=अगोर कर रहना। ८—बेकत=व्यक्त प्रगट। ९-१०—धनी लोग अपने धन को भी छिपाकर रखते हैं। फिर दूसरे के धन को कहीं कोई प्रकट करता है। ११—फाब=फबना, शोभना। चेतन=चतुर। १३—सार=सत्य।

दुहु रुप लावनि मनमथ मोहनि (१२५)
निरखि नयन भुलि जाय।
रजनि जनित रति विशेष अलापन
अलस रहल दुहु गाय ॥ २ ॥
चाँचर कुन्तल ताहे कुसुम दल
लोलत आनहि भाँति।
दुहु दुहु हेरि मुख हृदय वाढए सुख
योलत भूलत पाँति ॥ ४ ॥
निज निज मन्दिर नागरि नागर
चलइत करु अनुबन्ध।
विरह विपानल दुहु तनु जारल
लोचन लागल धन्द ॥ ६ ॥
भीतरचीत पुतुलि सन दुहु जन
रहल विदायक वेला।
प्रेम पयोनिधि उछलि उछलि पड
चेतन अचेतन भेला ॥ ८ ॥
दुहु जन चीत रीत हेरि सहचरि
छन छन गगनहि चाय।
रजनि पोहाओल सब जन जागल
से उर अधिक डराय ॥ १० ॥
सेखर बुझि तब करि कत अनुभव
दुहुसँग भग कराव।
निज निज मन्दिर गमन करल दुहु
 गुरुजन भेद न पाय ॥ १२ ॥

छलना

(१२६)

मन्दिर अउलों सहचरि मेलि।
परसगे रजनि अधिक भइ गेलि ॥ २ ॥
जब सखि चललहु अप्पन गेह।
तब मझु नीन्द भरल सब देह ॥ ४ ॥
सूति रहल हम करि एक चीत।
दैव विपाक भेल विपरीत ॥ ६ ॥
न वाल सजनि सुन सपन सम्वाद।
हँसइत केहु जनि कर परिवाद ॥ ८ ॥
विषाद पडल मझु हृदयक माँझ।
तुरित घोंचायल नीविक काज ॥ १० ॥
एक पुरुष पुनु आओल आगे।
कोप अरुन आँखि अधरक दागे ॥१२॥
से भय चिकुर चीर आनहि गेल।
कपाल काजर मुख सिंदुर भेल ॥ १४ ॥
अतर कहब केह अपजस गाव।
विद्यापति कह के पतिआव ॥ १६ ॥

१—अउलों = मैं थी। सहचरि = सखी। २—परसगे = बातचीत में। रजनि = रात। ५—सूति रहल = सो रही। चीत एक करि = चित्त एकाग्र करके। ६—विपाक = फल। ७—सपन = स्वप्न। ८—परिवाद = प्रवाद, शिकायत। १०—घोंचायलों = शिथिल कर दिया। नीविक काज = नीवी का बंधन। १२—अरुन = लाल। अधरक दागे = ओठ पर चिह्न बना दिया।

(१२७)

कुसुम तोरए गेलहुँ जाहाँ।
भमर अधर खंडल ताहाँ ॥ २ ॥
तें चलिएलहुँ जमुना तीर।
पवन हरल हृदय चीर ॥ ४ ॥
ए सखि सरुप कहल तोहि।
आनु किछु जनि बोलसि मोहि ॥ ६ ॥
हार मनोहर बेक्त भेल।
उजरि, उरग ससुझ लेल ॥ ८ ॥
तें धसि मजूर, जोडल झाँप।
नखर गाडल हृदय काँप ॥ १० ॥
भन बिद्यापति उचित भाग।
वचन पाउव कपट लाग ॥ १२ ॥

१३—से भय=उस डर से। चिकुर=केश। चोर=साड़ी। आनि
गेल=दूसरे ही ढंग का हो गया। १४—कपाल=मस्तक
१५—अन्तर=हृदय की बात। १६—पतिआर=विश्राम करेगा।

१—कुसुम=फूल। गेलहुँ=मैं गई। २—भमर=भौरा
अधर=ओठ। ३—तें=वहां से। ४—हृदय चोर—वक्षस्थल
की साड़ी, अंचल। ५—सरुप=सत्य। आनु=अन्य। ७—
बेक्त=व्यक्त, प्रकट। ८—उजर=उजरे। उरग=सर्प। ९—
गाडल=गड़ पड़ा। १०—नखर, गाडल=नख गड़ा दिया।
१२—पाउव=पडुआ, चतुरता।

(१२८)

सखि हे तोहे हमर बहु सेवा।
ऐसनि बानि कबहु जनि बोलबि
जाति कुल कि्ए मोर लेबा ॥ २ ॥
गोकुल नगर कान्हु रति लम्पट
जोवन सहज हमारा।
तुहु सखि रभसि मोहे जनि बोलबि
लोक करब पतिआरा ॥ ४ ॥
केसर कुसुम हेरि हम कौतुक
भुज जुग मेटल ताहि।
दाडिम भरम पयोधर ऊपर
पडलहु कीर लोभाहि ॥ ६ ॥
चकित उभय भुज इति-उति पेखल
तें वेस भए गेल आन।
इये परिवाद कहसि, मोहे वैरिनि
इह कवि सेखर भान ॥८॥

१—हे सखि, मैं तुम्हारी बहुत सेवा करूंगी। २—बानि = बोली। जाति कुल = मेरा जाति-कुल क्यों लोगी, क्यों नष्ट करोगी। ४—रभसि = दिल्लगी में। पतिआरा = विश्वास। ५—केशर के फूल देख कर, कौतुकवश, उसे दोनों हाथों से मसल दिया [जिस कारण मेरे अंगों में अंगराग लगा दीख पड़ते है]। ६—अनार समझकर सुग्गे मेरे कुचों पर लुभा गये [उनकी चोंचों के आघात से कुच क्षतविक्षत हो गये, जिसे तुम नख-रेखा समझ रही हो]। ७-उभय=

(१२६)

खरि नरि वेग भासलि नाइ।
धरए न पारथि वाल कन्हाइ ॥ २ ॥
ते धसि जमुना भेलहुँ पार।
फुटरा वलआ टूटल हार ॥ ४ ॥
ए सखि ए सखि न वोल मद।
विरह वचन वाढए दुद ॥ ६ ॥
कुंडल खसल जमुन माँझ।
ताहि जोहइत पडलि साँझ ॥ ८ ॥
अलक तिलक तें वहि गेल।
सुध सुधाकर वदन भेल ॥१०॥
तटिनि तट न पाइअ वाट।
तें कुच गडल कठिन काँट ॥१२॥
भन विद्यापति निअ अपसाद।
वचन कओमल जितिअ वाद ॥१४॥

दोनों। भुज=हाथ। तें=इससे। वेप = रूप। आन=दूसरा।

१—खरि = तीव्र। नरि = नदी। भासलि = भस गई, बह चली। नाइ = नाव, नौका। ३—धसि = तैरकर। ४—वलआ= चूडी। ५—मद = बुरी बात। ६—विरह = विरस, कठोर। दुद = झगड़ा। ७—खसल = गिर पड़ा। ८—जोहइत = खोजने में। ९—अलक - आलता, महावर। तिलक = टीका। १०—सुध = शुद्ध, निष्कलंक। सुधाकर=चंद्रमा। ११—तटनि = नदी। बाट= राह। १२—गड़ल=गड़ गया। १३—अवसाद = पराजय।

(१३०)

ननदी सरुप निरूपह दोसे।
बिनु बिचार वेभिचार बुझओवह
सासु करतन्हि रोसे ॥ २ ॥
कौतुक कमल नाल सयँ तोरल
करए चाहल श्रवतसे।
रोष कोप सयँ मधुकर आओल
तेंहि अधर कर दसे ॥ ४ ॥
सरवर-बाट बाट कण्टक तरु
देखहि न पारल आगू।
साँकरि बाट उबटि कहु चललहु
तें कुच कण्टक लागू ॥ ६ ॥

१४—बचन कओसल=वचनों की चातुरी। बाद=मुकदमा।

१—सरुप=स्वरूप आकृति। निरूपह=निरूपण करती हो। मेरी ननद, तुम आकृति देखकर मुझे दोष लगाती हो। २—वेभिचार=व्यभिचार पाप कर्म। बुझओवह=समझाओगी। रोसे=क्रोध। ३—नाल सयँ=मृणाल से। श्रवतसे=सिर का आभूषण। ४—रोष कोपित होकर। कोप=कमल का भीतरी भाग। मधुकर=भौंरा। तेंहि=उसीने। दसे कर=काट लिया (जिससे ओठ क्षत हो गया) ५—सरवर=तालाब। बाट=राह। कण्टक तरु=काँटों के पेड़। देखहि न पारल=देख न सकी। आगू=आगे। ६—साँकरि=संकीर्ण, पतली। तें=इसमें। कुच=स्तन।

गरुअ कुम्भ सिर थिर नहिं थाकए
तें उधसल केस पास।
सखि जन सयँ हम पाछे पडलिहु
तें भेल दीर्घ निसास ॥ ८ ॥
पथ अपवाद पिसुन परचारल
तथिहु उतर हम देला।
अमरख चाहि धैरज नहि रहले
तें गदगद सर भेला ॥ ११ ॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
ई सभ राखल गोइ।
ननदी सयँ रस रीति बढावह
गुपुत, वेकत नहि होई ॥१२॥

७—गरुअ = भारी। कुम्भ = घड़ा। सिर थिर नहिं थाकए= सिर स्थिर नहीं रहना। उधसल = शिथिल हो गया। ८—सयँ = से। पीछे पडलिहु = पीछे पड़ गई। दीर्घ भेल=तीव्र हुआ। निसास= ऊँची सास, उच्छ्वास। मैं सखियों से पीछे पड़ गई, अतः दौड़ कर उन्हें पाने की चेष्टा करने के कारण साँस जल्दी चलती आ रही है। ९—पथ=राह। अपवाद = शिकायत। पिसुन = दुष्ट। परचारल=प्रचारित किया, फैलाया। तथिहु=वहाँ। उत्तर देला = उत्तर दिया। १०—अमरख चाहि=आप वश, क्रोध के वश हो। गदगद सर = भराई आवाज। ११—ई सभ=यह सब। गोइ = छिपाकर। गुपुत वकत नहि होइ = जो प्रकट है वह छिप नहीं सकता।

(१३१)

जाहि लागि गेलि हे ताहि कहाँ लइलि हे।
ता पति, वरि, पितु काहाँ।
अछलि हे दुख सुख कहह अपन मुख
भूषन गमश्रोलह जाहाँ॥ २॥
सुन्दरि, कि कए बुझाश्रोब कैते।
जन्हिका जनम होइत, तोहे गेलिहु
अइलि हे तन्हिका अते॥ ४॥
जाहि लागि गेलहु से चलिआएल
तैं मोयँ धाएल नुकाई।

१—जाहि लागि = जिसके लिये (जल के लिये)। गेलि = गई। ताहि = उसे। कहा लाइलि = कहा लाइ (नहीं लाइ)। ता पति वरि पितु कहा = उसके (जल के) पति = समुद्र, समुद्र का बैरी = अगस्त्य, अगस्त्य का पिता = घट, घड़ा—घडा कहा है? २—अछलि = थी। भूषण = अगराग आदि। गमओलह = खो दिया। जहा अगराग आदि (रतिक्रीड़ा की मस्ती में) नष्ट हो गये, वहा के सुख-दुख अपने ही मुख मे कहो। ३—कि कए = क्या करकर। बुझाअ.ब = समझाऊंगी। ४—जन्हिका जनम होइत = जिसका (दिन का) जन्म होते ही—प्रातःकाल ही। अइलि। तन्हिका अते = उसके (दिन के) अत में—सन्ध्या को आइ। ५—जिसके लिये (जल के लिये) मैं गइ वह (जल वृष्टि वर्षा) चली आइ—वर्षा होने लगी, जिससे मुझे दौड़कर छिपना पड़ा।

से चलि गेल ताहि लए चललिहु
तेँ पथ भेल अनेआई ॥ ६ ॥
मकर वाहन ४ छेड़ि गेलाइत
मेदिनि वाहन आगे ।
जे सब अछलि सँग, से सब चललि भँग
उबरि अएलहुँ अति भाग ॥ ८ ॥
जाहि हुइ लाज करइछलि सासुन्हि
स मिलु अपना सगे ।
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
गुपुत नेह रति रंग ॥ १० ॥

मान

(१३२)

खनहि खन महँघि भइ   किछु अरुन नयन कइ
कपट धरि मान सम्मान लेही।
कनक जयँ प्रेम कसि   पुनु पलटि चाँक हसि
आधि सयँ अधर मधु पान देही ॥ २ ॥
अरेरे इन्दुमुखि अढ़ न कर   पिअ हृदय खेद हर
कुसुम सर रग ससार सारा ॥ ३ ॥
वचन वस होसि जनु   ससरि मिञ होइह तनु
सहज वह छाडि देब सयन-सीमा।
प्रथमे रस भंग भेल   लोभे मुख सोभ गेल
वाँधि भुज पास पिय धरब गीमा ॥ ५ ॥
जदि नयन-कमल वर   मुकल कल कान्ति धर
खर-नखर घात कइ सहे वेला।
परम पद लाभ सम   मोद चिर हृदय रम
नागरो सुरत-सुख अमिअ मेला ॥ ७ ॥
सरसकवि सुरस भन   चारु तर चतुरपन
नारि आराहिअइ पंचवाना।
सकल जन सुजन गति   रानि लखिमाक पति
रूप नारायन सिवसिंघ जाना ॥ ६ ॥

[मान शिक्षा] १—महँघि = महँगा। २—अढ़ = अनमहूल। कुसुम-सर = कामदेव। ५—गीमा = ग्रीवा, गरदन। ६—यदि नयन रूपी कमल कली का रूप धारण करे—आँखें झिपने लगें—तो उस समय नख का विकट प्रहार करना।

(१३३)

लोचन अरुन बुझल बड भेद ।
रयनि उजागर गरुअ निवेद ॥ २ ॥
ततहि जाह हरि न करह लाथ ।
रयनि गमओलह जन्हिके साथ ॥ ४ ॥
कुच कुंकुम माखल हिय तोर ।
जनि अनुराग रांगि कर गोर ॥ ६ ॥
आनक भूषण तोर कलङ्क ।
बड ओ भेद मन्द ओ परसङ्ग ॥ ८ ॥
चिटि-गुड,चुपडलि,राडक पोरि ।
लओले लाथ वेकत भेल चोरि ॥ १० ॥
भनइ विद्यापति,वजवइ वाद ।
बड अपराध मौन पए साध ॥ १२ ॥

१—२—उजागर = जागरण । निवेद = बताना है । लाल आँखों को देखकर मैंने सारा भेद समझ लिया, वे रात का अधिक जागरण प्रगट करती हैं । 'रजनि जनित गुरुजागर राग कषायित मलस निमेषम्—गीत गोविन्द ।' ३—ततहि जाह = वहीं जाओ । लाथ = बहाना करना । ५—६—(उसके) कुच का लगा केसर तुम्हारे हृदय में लिपटा हुआ है । मानो अनुराग के रंग में रँग कर (काले वक्ष स्थल को) गोरा बना दिया हो । ७—आनक = दूसरे का । ८—परसंग = प्रसंग संगति । ९—चिटि-गुड़ = गुड़ चींटी । राड़ = शूद्र की एक उपजाति । पोरि = घर । १०—लाथ लओले = बहाना करने पर । वेकत = व्यक्त । १०—वजवइ = बोलना । वाद = व्यर्थ ।

(१३४)

कुकुम लश्रोलह नख खत गोइ ।
अधरक काजर अपलहु धोइ ॥ २ ॥
तइश्रो न छपल कपट बुधि तोरि ।
लोचन अरुन वेकत भेल चोरि ॥ ४ ॥
चल चल कान्ह बोलह जनु आन ।
परतख चाहि अधिक अनुमान ॥ ६ ॥
जानश्रो प्रकृति बुझश्रों गुनसीला ।
जस तोर मनोरथ मनसिज लीला ॥८॥
वचन नुकावह वेकतश्रो काज ।
तोंय हँसि हेरह मोय वड लाज ॥१०॥
अपथहु सपर नुकावह राधे ।
कोन परि खेश्रोम सठ अपराधे ॥१२॥
भनइ विद्यापति विश्र अपराध ।
उद्घट न घर मनोरथ साध ॥१४॥

१—नायिका ने जो अपने नखों से खरोंचकर तुम्हारे वक्ष-स्थल पर चिह्न बना दिया था, उसे कुकुम लगाकर छिपा लाये हो। २—अधरक = ओष्ठ का। अपलहु = आये हो। ३—छपल—छिप सका। ४—अरुन = लाल। वेकत = व्यक्त, प्रकट। ५—आन = अन्य। ६—परतख = प्रत्यक्ष। ७—प्रकृति = स्वभाव। ८—जस = जैसा। मनसिज = कामदेव। ९—नुकावह = छिपाते हो। १०—तुम हँसकर (मेरी ओर) देखते हो, किन्तु मुझे लज्जा आती है। ११—अपथहु = बुरी राह जाने पर भी। १२—कोन परि = किस प्रकार। खेश्रोम = क्षमा करेगी। १४—उदघट = प्रकाश। साध = इच्छा।

(१३५)

आध आध मुदित भेल दुहु लोचन
बचन बोलत आध आधे ।
रति आलस सामर तनु झामर
हेरि, पुरल मोर साधे ॥२॥
माधव, चल चल चल तहि ठाम ।
जसु पद जावक हृदयक भूषन,
अबहु जपत तसु नाम ॥४॥
कत चंदन, कत मृगमद, कुकुम
तुअ कपोल रहु लागि ।
देखि सौति अनुरूप कएल विहि
अतए मानिए बहु भागि ॥६॥

१—मुदित=मुँदे हुए । २—रति-आलस=काम-क्रीड़ा जनित थकावट । सामर=श्यामता । झामर=मलिन । हेरि=देखकर । साधे=हौसला ३—चल=जाओ । तहि ठाम=उसी जगह । ४—जसु=जिसके । पद जावक=पैर का महावर । जिसके पैर का महावर तुम्हारे हृदय का आभूषण हुआ है, उसीका नाम तुम अब भी जप रहे हो [अकस्मात् कृष्ण के मुँह से उस नायिका का नाम निकल गया था] । ५—कत=कितना । मृगमद=कस्तूरी । कुकुम=केशर । कपोल=गाल । ६—अनुरूप=समान । ६—मैं तो इसीमें अपना सौभाग्य मानती हूँ कि ब्रह्मा ने मुझे एक योग्य सौत दी है ।

(१३६)

सुन सुन सुन्दरि कर अवधान।
बिनु अपराध कहसि काहे आन ॥२॥
पुजलौं पसुपति जामिनि जागि।
गमन बिलम्ब भेल तेहि लागि ॥४॥
लागल मृगमद कुंकुम दाग।
उचरइत मन अधर नहि राग ॥६॥
रजनि उजागर लोचन घोर।
ताहि लागि तोहे मोहे बोलसि चोर ॥८॥
नवकविसेखर कि कहब तोय।
सपथ करह तब परतीत होय ॥१०॥

१—अवधान = मनोयोग ध्यान देना। कहसि काहे आन = दूसरी बात क्यों कह रही हो। पसुपति = महादेव। जामिनि = रात। ४—गमन = आने में। तेहि लागि = उसी लिये। ५—६—उचरइत = उच्चारण करने। राग = लालिमा। कस्तूरी और केशर से शिव की पूजा की शरीर पर उन्हीं के चिह्न हैं। बार बार मन्त्र उच्चारण करने के कारण ओठ की ललाई नष्ट हो गई। ७—रजनि = रात। उजागर = जागरण। घोर = भयानक (लाल)। ८—इसी लिये तुम मुझे चोर कहती हो। ९—१०—विद्यापति कहते हैं—तुम क्या कहोगे, जब शपथ करो, तो तुम्हारी बातों पर विश्वास हो।

[अगले पद में श्रीकृष्ण की विचित्र शपथ पढ़िये और गौर कीजिये]

(१३७)

ए धनि माननि, करह सजात।
तुश्रा कुच हेम घट हार भुजगिनि
ताक उपर धर हाथ ॥ २ ॥
तोहे छाडि जदि हम परसव कोय।
तुग्र हार-नागिनि काटब मोय ॥४॥
हमर वचन यदि नहि परतीत।
बुझि करह साति, जे होय उचीत ॥ ६ ॥
भुज-पास बाँधि जघन तर तारि।
पयाधर पाथर हिय दह भारि ॥८॥
उर कारा, बाँधि राख दिन राति।
विद्यापति कह उचित इह साति ॥१०॥

१—धनि = बाला। करह सजात = सयन करो, क्रोध छोड़ो। २—हेम घट = सोने का घड़ा। भुजगिनि = सर्प। ताक = उसके। [यदि विश्वास न हो तो शपथ करा लो। सोना छूकर शपथ खाना प्रामाणिक माना जाता है, सो] तेरे कुच रूपी सोने के घड़े तथा हार रूपी सर्पिणी के ऊपर हाथ रखकर मैं शपथ खाता हूँ। ३—छाड़ि = छोड़कर। परसव = स्पर्श करूँगा। कोय = किसी को। ६—साति = शास्ति, दण्ड। ७—भुज पास = भुजा रूपी जंजीर। जघन तर = जाँघों के बीच में। तारि = ताड़ना करके, खूब ठोक पीट के। ८—स्तनरूपी भारी पत्थर हृदय पर रख दो। ९—उर कारा = हृदय रूपी जलखाने। राख = रक्खो। १०—इ = यह। साति = शास्ति, दण्ड।

(१३८)

अरुन पुरव दिसा, बितलि सगरि निसा
गगन मगन भेल चदा।
मूदि गेलि कुमुदिनि तइश्रो तोहर धनि
मूदल मुख अरविंदा ॥२॥
चाद वदन, कुवलय दुहु लोचन
अधर मधुरि बिरमान।
सगर सरीर कुसुम तोंए सिरिजल
किए दहु हृदय पखान ॥४॥
अस कति करह कंकन नहि पहिरह,
हार हृदय, भेल भार।
गिरि सम गरुअ मान नहि मुँचसि
अपरुब तुअ बेवहार ॥६॥
अवगुन परिहरि हेरह हरखि धनि
मानक अवधि विहान।
राजा सिवसिंघ रूप नरायन
कवि विद्यापति भान ॥८॥

१—अरुन=लाल। बितलि=बीत गई। सगरि=समग्र, समूची। मगन=मग्न हुब जाना। २—अरविंदा=कमल। ३—बदन=मुख। कुवलय=कमल। मधुरि=एक लाल फूल। ४—कुसुम=फूल। सिरिजल=बनाया। किए दहु=क्यों दिया। पखान=पत्थर। ५—अस=ऐसा। कति=क्यों। कंकन=कँगन। ६—गरुअ=भारी। मुँचसि=छोड़ती हो। ७—विहान=प्रात काल।

(१३६)

मदन-कुंज पर बइसल नागर
वृन्दा सखि मुख चाहि।
जोडि जुगुल कर विनति करए कत
तुरित मिलावह राहि ॥ २ ॥
हम पर रोखि विमुख भइ सुन्दरि
जयहु चललि निज गेहा।
मदन हुतासन मझु मन जारल
जीव न बाँधइ थेहा ॥ ४ ॥
तुअ अति चतुर सिरोमनि नागर
तोहे कि सिखाओव बानि।
तुहु बिनु हमर मरम कोन जानत
कइसे मिलाएब आनि ॥ ६ ॥
चन्दन चाँद पवन मेल रिपु सम
वृन्दावन वन भेल।
कोकिल मयूर झकार देत कत
मझु मन मनमथ सेल ॥८॥
छल छल नयन वयन भरि गेअत
चरन पकडि गहि जाव।
हा हा से धनि हमए न हेरब
सिंह भूपति रस गाव ॥१०॥

१—चाहि = देखना। २—राहि = राधा। ४—मदन-हुता
सन = कामदेव रूपी अग्नि। जीव न बाँधइ थेहा = जीव स्थैर्य

(१४०)

माधव, इ नहि उचित विचार।
जनिक एहन धनि काम कला सनि
से किए करु व्यभिचार ॥ २ ॥
प्रानहु ताहि अधिक कए मानब
हृदयक हार समान।
कोन परजुगति आन के ताकब
की थिक तोहर गेआन ॥ ४ ॥
कृपन पुरुष के केओ नहिं निक कह
जग भरि कर उपहास।
निज धन अछइत नहि उपभोगब
केवल परहिक आस ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति सुनु मथुरापति
इ थिक अनुचित काज।
मागि लायब वित,से, जदि हो नित
अपन करब कोन काज ॥ ८ ॥

नहीं बाँधते प्राण स्थिर नहीं होते। ८—मनमथ = कामदेव।

२—जनिक = जिसकी। एहन = ऐसी। सनि = समान। ४—परजुगति = प्रयुक्ति। आन के ताकब = दूसरे को देखना। की = क्या। थिक = है। ५—कृपन = सूम। निक = नीक अच्छा उपहास = हँसी,। ६—अछइत = रहते। परहिक = दूसरे की। ८—यदि माँगा हुआ धन नित्य रहता—यदि मँगनी की चीज से ही काम चल जाता—तो लोग अपने धन के लिये क्यों कष्ट उठाते?

(१४१)

विरह व्याकुल वकुल तरुतर
पेखल नन्दकुमार रे ।
नील नीरज नयन सयँ सखि
ढरइ नीर अपार रे ॥ २ ॥
पेखि मलयज पङ्क मृगमद
तामरस घनसार रे
निज पानि पल्लव मूदि लोचन
धरनि पड असँभार रे ॥४॥
वहइ मन्द सुगन्ध सीतल
मन्द मलय समीर रे ।
जनि प्रलय कालक प्रवल पावक
दहइ सून सरीर रे ॥ ६ ॥
अधिक वेपथ टूटि पड खिति
मसृन मुकुता-माल रे ।
अनिल-तरल तमाल तरुवर
मुच सुमनस जाल रे ॥ ८ ॥
मान-मनि तजि सुदति चलु, जहि
राए रसिक सुजान रे ।
सुखद स्रुति अति सरस दण्डक
कवि विद्यापति भान रे ॥६॥

१—वकुल = मौलिश्री, मनसरी । २—नीरज = कमल । ३—मलयज = चन्दन । मृगमद = कस्तूरी । तामसर = कमल । घन

(१४२)

रामे, कि अब बोलसि आन।
तोहर चरन सरन से हरि
अबहु मेटह मान ॥ २ ॥
गोवर्धन गिरि वाम कर धरि
कएल गोकुल पार ।
विरह से खिन करक कंकन
गरुअ मानए भार ॥ ४ ॥
दमन काली कएल जे जन
चरन जुगल वरे ।
अब भुजगम भरम भूलल
हृदय हार न धरे ॥ ६ ॥
सहज चातक छाडए न वरत
न बइसे नदि तीर ।
नविन जलधर वारि विनु
न पिबए नाहरि नीर ॥ ८ ॥

सार = कपूर । ४—पानि = हाथ । ६-पावक = अग्नि । सूत = सत्य ।
७—वेपथ=व्यथित । तिति=पृथ्वी । मसृन=चिकना ८—अनिल तरल =
वायु द्वारा आन्दोलित । मुन = गिराना । सुमनस = फूल । ९—सुदति =
सुन्दरी । १०—स्रुति = सुनने में । दण्डक = इस छंद का नाम दण्डक है ।

२—रामा = सुन्दरी । आन = अन्य । ४—करक = हाथ का ।
गरुअ = अधिक, कठिन । ६—दमन = दमित, नष्ट । वरे = श्रेष्ठ ।
भुजगम = सर्प । ७—वरत = व्रत । बइसे = बैठता । ८—जलधर = बादल ।

(१४३)

सखि हे बूझल कान्ह गोआर।
पितरक टाँड काज दहु कओन लह
ऊपर चकमक सार ॥ २ ॥
हम तो कएल मन गेलहि होएत भल
हम छलि सुपुरुख भाने।
तोहर वचन सखि कएल, आँखि देखि
अमिअ भरम विख पाने ॥ ४ ॥
पसुक संग हुन जनम गमाओल
से कि बुझथि रतिरंग।
मधु-जामिनि मोर आज विफल गेलि
गोप गमारक संग ॥ ६ ॥
तोहर वचन कूप धसि जाएब
तें हमे गेलहु अवाट।
चंदन भरम सिमर आलिंगल
सालि रहल हिय काट ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति हरि बहुवल्लभ
कएल बहुत अपमान।
राजा सिवसिंह रूपनरायन
लखिमा पति रस जान ॥१०॥

२—पितरक = पीतल का। टाँड = हाथ का एक गहना। ३—गेलहि = जाने में। छलि = थी। ६—मधु जामिनि = वसंत की रात। ७—अवाट = कुमार्ग। ९ सिमर = सेमल। १०—बहुवल्लभ = बहुत [illegible] [illegible]।

(१४४)

मधु सम वचन कुलिस सम मानस
प्रथमहि जानि न भेला।
अपन चतुरपन पिसुन हाथ देल
गरुअ गरब दुर गेला ॥ २ ॥
सखि हे, मन्द प्रेम परिनामा।
बड़ कए जीवन कएल अपराधिन
नहि उपचर एक ठामा ॥ ४ ॥
झाँपल कूप देखहि नहि पारल
आरति चललहु धाइ।
तखन लघू-गुरु किछु नहि गूनल
अब पछुतावक जाइ ॥ ६ ॥
एक दिन अछलहु आन भान हम
अब बूझिल अवगाहि।
अपन मूँड़ अपने हम चाँछल
दोष देब गए काहि ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुनु बर जौवति
चित्त गनव नहि आने।
पेमक कारन जीउ उपेखिए
जग जन के नहि जाने ॥१०॥

१-कुलिस=वज्र । २-पिसुन=दुष्ट। ४-उपचर = शान्ति। ५-आरति=शीघ्रतामें। ६-गूनल=समझा। ७-आनभान=नासमझ। अवगाहि=अन्त प्रवेश करके। ८ चाछल=छील लिया। १० उपेखिए=उपेक्षा करो।

(१४५)

माधव, दुर्जय मानिनि मानि।
विपरित चरित पेखि चकरित भेल
न पुछल आधहु बानि ॥ २ ॥
तुअ रूप साम अखर नहि सुनए
तुअ रूप रिपु सम मानि।
तुअ जन सयँ सम्भास न करई
कइसे मिलाएब आनि ॥ ४ ॥
नील वसन वर, काँचन चुरि कर
पौतिक माल उतारि।
करि रद चुरि कर मोति माल वर
पहिरल अरुनिम सारि ॥ ६ ॥
असित चित्र उर पर छुरा, मेटल
मलयज देह लगाइ।
मृगमद तिलक धोइ, दृगंचल, कच
सय मुग लए छपाइ ॥ ८ ॥

१—विपरित = उलटा । चकरित = चकित । ३—साम = श्याम (कृष्ण) । अखर = अक्षर । ४—सयँ = से । सम्भास = बातचीत । काँचन चुरि कर = हाथों की सोने की चूड़ी । पौतिक = पिरोया, नील मणि । ६—करि रद चुरि = हाथी के दाँत की चूड़ी । अरुनिम = लाल । सारि = साड़ी । ७—असित चित्र = काला गहना । छुरा = था । मलयज = चन्दन । ८—मृगमद = कस्तूरी (काली होती है) दृगंचल = आँख के कोने । कच = केश । [illegible] = छिप, छिपा ।

एक तील छल चार चिबुक पर
निन्दि मधुप सुत सामा।
तुन अमें करि, मलयज रजल
ताहि छपाओल रामा ॥१०॥
जलधर देखि चन्द्रातप झापल
सामरि सखि नहि पास।
तमाल तरु गन चूना लेपल
सिखि पिरु दूरि निवास ॥१२॥
मधुकर डर धनि चम्पक तर तल
लोचन जल भरिपूर।
सामर चिकुर हेरि मुकर पटक्ल
टूटि भए गेल सत चूर ॥१४॥
तुअ गुन गाम कह एक सुक पत्रि
सुनतहि उठल रोसाइ।
पिंजर झटकि फटिक पर पटक्ल
धाए चपल तहि जाइ ॥१६॥
मेरु सम मान सुमर [illegible] [illegible]
देखि भेल रेनु [illegible]।
विद्यापति कह [illegible] [illegible]
आपु सिराएल [illegible] ॥१८॥

चिबुक = ठुड्डी। निन्दि [illegible] = [illegible]
को भी लज्जित करता था। १४—[illegible]
सुन्दरी ने उसे निन्दित किया। ११—[illegible] = [illegible]

(१४६)

मानिनि हम कहिए तुश्र लागी।
नाह निकट पाइ जे जन वचए
तेकर वडहि श्रभागी ॥ २ ॥
दिनकर-बन्धु कमल सब जानए
जल तेहि जीवन होई।
पङ्क विहिन तनु भानु सुखावए
जल पटार वरु कोई ॥ ४ ॥
नाह समीप सुखद जत वैभव
श्रनुकुल होपत जोइ।
तेकर विरह सकल सुख सम्पद
खन खन दगधए सोइ ॥ ६ ॥
तुहु धनि गुनमति वूझि करह रति
परिजन ऐसन भास।
सुनइत राहि हृदय भेल गदगद
श्रनुमति कएल प्रगास ॥ ८ ॥

चँदोवा। १२—काले तमाल के वृक्ष को चूने से पोत दिया और (काले) मयूर और कोयल को सफेद किया। १३—चिकुर=केश। मुकुर=आइना। १४—सत चूर=सौ टुकड़े। १५—गाग=सनुद। सुग=सुग्गा। रोसाई=मलिन होकर। पष्कि=स्फटिक पत्थर। १७—रेनु=धूल।

१-तुअ लागी=तुम्हारे लिये। २—नाह=पति। ३-दिनकर=सूर्य। ४-विहिन=हीन। भानु=सूर्य। पगास=दिखलाया। ६-दगधए=जलाता है।

(१४७)

मानिनि आव उचित नहि मान।
एखनुक रंग एहन सन लगइछ
जागल पए पँचवान ॥ २ ॥
जूडि रयनि चकमक करु चाँदनि
एहन समय नहि आन।
एहि अवसर पिय मिलन जेहन सुख
जकरहि होए से जान ॥ ४ ॥
रभसि रभसि अलि विलसि विलसि करि
करए मधुर मधु पान।
अपन अपन पहु सबहु जेमाओलि
भूखल तुअ जजमान ॥ ६ ॥
त्रिवलि तरंग सितासित सगम
उरज सम्भु निरमान।
आरति पति मगइछ परतिग्रह
करु धनि सरबस दान ॥ ८ ॥
दीपक दिप सम थिर न रहए मन
दृढ करु अपन गेआन।
संचित मदन वेदन अति दारुन
विद्यापति कवि भान ॥१०॥

२—इस समय का समा (रंग) कुछ ऐसा मालूम होता है, मानों कामदेव सोते से जग पड़ा हो। ३—जूड़ि = शीतल। ४—जेहन = जैसा। जेकरहि = जिसका। ६—रभसि = उमंग में आकर।

(१४८)

अखिल लोचन तम, ताप विमोचन
उदयति आनन्द कन्दे।
एक नलिनि मुख मलिन करए जनि
इथे लागि निन्दह चन्दे ॥ २ ॥
सुन्दरि, बूझल तुअ प्रतिभाति। ⁄
गुन गन तेजि दोष एक घोषसि
अन्त अहारनि जाति ॥ ४ ॥
सकल जीव जन जीव समीरन
मन्द सुगन्ध सुसीते।
दीपक जोति परस जदि नासए
इथे लागि नीन्द मारुते ॥ ६ ॥

अलि = भौंरा। ६—पहु = प्रीतम। जेमाओलि = खिलाया। ७—त्रिवली की तरंग में गंगा यमुना (हार और रोमावलि) का संगम हुआ है, जहाँ कुच रूपी शिव की भी स्थापना है। ८—आरति = आर्त, व्याकुल। परतिग्रह = प्रतिग्रह = दान। ९—दीपक-दिप = दीपक की शिखा, लौ। १०—मदन = कामदेव।

१—अखिल = समूचा (संसार)। तम = अंधकार। ताप = गर्मी ज्वाला। विमोचन = नाश करनेवाला। उदयति = उगता है। कंद = मूल, जड़। २—नलिनि = कमलिनी। इथे = इस लिये। निन्दह = निंदा करती हो। ३—प्रतिभाति = बुद्धि। ४—घोषसि = बार बार कहना। ५—जीव जन = प्राणी। जीव = प्राण। समीरन = वायु। ६—परस = स्पर्श। नीन्द = निन्दा करना। मारुते = पवन को।

स्थावर जंगम कीट पतंगम
सुखद जे सकल सरीरे।
कागद पत्र परस जओं नासए
इथे लागि निन्दह नीरे ॥ ८ ॥
खन खन सकल कुसुम मन तोपए
निसि रहु कमलिनि सगे।
चम्पक एक जइओ नहि चुम्बए
इथे लागि निन्दह भृ गे ॥१०॥
पाँच पच गुन दस गुन चौगुन
आठ दुगुन, सखि माझे।
विधापति का हु आकुल तो बिनु
बिपाद न पावसि लाजे ॥१२॥

७—स्थावर = वृक्ष आदि अचल जीव। जगम = मनुष्य आदि चलनेवाले जीव। कीट = कीड़े। पतगम = फनगे आदि। ८—कागद पत्र = कागज के पन्ने। परस = स्पर्श। जओं = यदि। नीर = पानी। ९—खन = क्षण। कुसुम=फूल। तोपए=सन्तुष्ट करता है। निसि = रात। १०—चम्पक = चम्पा। जइओ = यदि। भृ ग = भौंरे को। ११—(५ × ५ × १० × ४ × ८ × २) = १६००० सखियों के मध्य में। १२—का हु = श्रीकृष्ण बिपाद = दुःख। पावसि = पानी ही।

"सा कविता सा वनिता यस्या श्रवणेन दर्शनेनापि।
कविहृदय विटहृदय सरल तरल च सत्वर भवति॥"

(१४६)

चानन भरम सेवलि हम सजनी
पूरल सब मन काम।
कन्तक दरस परस भेल सजनी
सीमर भेल परिनाम ॥ २ ॥
एकहि नगर बसु माधव सजनी
पर भामिनि बस भेल।
हम धनि एहनि कलावति सजनी
गुन गौरव दुर गेल ॥ ४ ॥
अभिनव एक कमल फुल सजनी
दौना नीमक डार।
सेहो फुल ओतहि सुखायल छथि सजनी
रसमय फुलल नेवार ॥ ६ ॥
विधि बस आज आएल सजनी
एत दिन ओतहि गमाय।
कोन परि करब समागम सजनी
मोर मन नहि पतिआय ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति गाओल सजनी
उचित आओत गुनसाह।
उठ बधाव कर मन भरि सजनी
आज आओत घर नाह ॥१०॥

१—चानन = चदन। भरम = भ्रम मे। सेवलि = सेवा की।
२—कन्तक = प्रियतम का। सीमर = सेमर। ३—परभामिनि =

(१५०)

सजनी अपद न मोहि परबोध ।
तोहि जोडिअ जहाँ गाँठ पडए तहाँ
तेज तम परम विरोध ॥ २ ॥
सलिल सनेह सहज थिक सीतल
ई जानए सब कोई ।
से यदि तपत कए जतने जुडाइअ
तइओ बिरत रस होई ॥ ४ ॥
गेल सहज हे कि रिति उपजाइअ
कुल—ससि नीली रंग ।
अनुभवि पुनु अनुभवए अचेतन
पडए हुतास पतंग ॥ ६ ॥

दूसरे की स्त्री । ४—एहनि = ऐसी । दुर गेल = दूर हो गया । ५—एन नये कमल के फूल को (अर्थात् मुझे) नीम की डाली पर डाल दिया, वह वहीं सूख गया और नेवार का फूल रसयुक्त होकर खिला ७—छथि = है । ओतहि = वहीं । ८—समागम = भेंट । १०—आओत = आवेगा ।

१—अपद = अस्थान, अनुचित रूप से । परबोध = समझाओ । ३—सहज सीतल थिक = स्वभावतः ही ठंढा है । ४—तपत कए = गर्म करके । जतने = यत्न पूर्वक । जुडाइअ = ठंढा कीजिये । तइओ = तो भी । बिरत रस = रसहीन । ५—कुल रूपी चन्द्रमा में नीला धब्बा पड़ जाने पर कितना भी प्रयत्न करने पर क्या उसमें स्वाभाविक रंग उत्पन्न हो सकता है । ६—अनुभवि = अनुभव करके । पुनु = पुनः । अनुभवए = अनुभव करता है । हुतास = अग्नि ।

(१५१)

कबहु रसिक सयँ दरसन होए जनु
    दरसन होए जनु नेह।
नेह बिछोह जनु काहुक उपजए
    बिछोह धरए जनु देह॥ २॥
सजनी दुर करु ओ परसङ्ग।
पहिलहि उपजइत प्रेमक अकुर
    दारुन विधि देल भङ्ग॥ ४॥
दैवक दोष प्रेम जदि उपजए
    रसिक सयँ जनु होय।
कान्ह से गुपुत नेह करि अब एक
    सबहु सिखाओल मोय॥ ६॥
एहन औषध सखि कहि नहि पाइअ
    जनि जौवन जरि जाव।
असमजस रस सहए न पारिअ
    इह कवि सेखर गाव॥ ८॥

१—सय = से। जनु = नहीं। २—बिछोह = जुदाई। काहुक = किसीको। ३—दुर करु = अलग करो, बंद करो। परसंग = विषय, बातचीत। ४—दारुन = कठोर। भंग देल = तोड़ डाला कुचल डाला। ५—दैवक दोष = विधि विडम्बना से। ६—कृष्ण से गुप्त प्रेम करके मैं यही एक शिक्षा लोगों को देती हूं। ७—ऐसी दवा मैं कहीं भी नहीं पाती, जिसके खाने से ये जवानी जल जाती। ८—असमजस = दुविधा। सहए न पारिअ = सहा नहीं जाता।

(१५२)

जनम होअए जनु, जो पुनु होई
जुवती भए जनमए जनु कोई ॥ २ ॥
होइ जुवति जनु हो रसमति ।
रसओ बुझए, जनु हो कुलमति ॥ ४ ॥
इथन माग ओ बिहि एक पए तोहि ।
थिरता दिहह अवसानहु मोहि ॥ ६ ॥
मिलि सामी नागर रसधार ।
परवस जनु होए हमर पिआर ॥ ८ ॥
होए परवस कुछ बुझए विचारि ।
पाए विचार हार कओन नारि ॥१०॥
भनइ विद्यापति अछ परकार ।
दद-समुद होअ जीव दए पार ॥ १२ ॥

१—जौं = यदि । जनु = नहीं । २— जुवती = नौजवान स्त्री । ३, ४—यदि युवती होकर जन्म मिले तो सुरसिका न हो, और यदि सुरसिका हो तो ऊँचे कुल की नहीं हो । ५—इ = यह । धन = (यहाँ) वरदान । बिहि = ब्रह्मा । एक पए = एक ही । ६—थिरता = स्थिरता । दिहह = देना । अवसानहु = अन्तिम अवस्था में भी । ७—सामी = स्वामी, पति । नागर = चतुर । रसधार = रसिक । ८—परवस = दूसरे के वश । ९–१०—यदि परवश भी हो जाय, तो कुछ समझ-बूझ रक्खे, क्योंकि समझ-बूझ होने पर (वह निश्चय कर सकेगा कि) कौन स्त्री गले का हार हो सकती है । ११—अछ = है । परकार = उपाय । दद = कलह समुद = समुद्र । प्राण देकर कलह रूपी समुद्र से पार हो जाओ ।

(१५३)

चरन-नखर मनि रंजन छाद।
धरनि लोटायल गोकुल चाद ॥ २ ॥
ढरकि ढरकि पए लोचन नोर।
कतरुप मिनति कएल पहु मोर ॥ ४ ॥
लागल कुदिन कएल हम मान।
अबहु न निकसए कठिन परान ॥ ६ ॥
रोस तिमिर अत वेरि किए जान।
रतनक भे गेल गैरिक भान ॥८॥
नारि जनम हम न कएल भागि।
मरन सरन भेल मानक लागि ॥ १० ॥
विद्यापति कह सुनु धनि राइ।
रोअसि काहे कह भल समुझाइ ॥१२॥

१-२—मेरे चरण के नख रूपी मणि को रंजित करने के बहाने वह गोकुल चन्द (श्रीकृष्ण) पृथ्वी में लोट गया। ३—नोर = आँसू। ४—कत रुप = कितने प्रकार से। मिनति = विनती। पहु = प्रीतम। ६—निकसए = निकलता है। ७-८—क्रोध रूपी अन्धकार में मैं उस समय क्या जानने गई, रत्न को मैंने गेरु मिट्टी समझा। ९—भागि = भाग्य। १०—मान के कारण मुझे मृत्यु की शरण लेनी पड़ी। ११—राइ = राधा। १२—रोअसि = रोती है। काहे = किस लिये। भल समुझाई = अच्छी तरह समझाकर।

(१५४)

धनि भेलि मानिनि सखि गन माझ।
अनुनय करइत उपजए लाज॥ २॥
विरितक आरति विरति न सहई।
इंगित भंगिए दुहु सब कहई॥ ४॥
राहि सुचेतनि कान्हु सयान।
मनहि समाधल मन अभिमान॥ ६॥
अधर मुरलि जों धएल मुरारि।
फोइ कबरि धरि बाँधि समारि॥ ८॥
जों निज पुर पथ धएल मुरारि।
सखि लखि अनतए चलु वर नारि॥१०॥
हरि जब छाया कर धनि पाय।
धनि सम्भ्रम बइसलि कर लाय॥ १२॥
कह कवि सेखर बुझय सयान।
इंगित रस पसारल पंचवान॥१४॥

१—धनि=बाला। ३—आरति = आतुरता, शीघ्रता। प्रेम की आतुरता उदासीनता नहीं सहती। ४—इंगित भंगिए = इशारे से। ५—राहि = राधा। सुचेतनि = सुचतुरा। ६—समाधल = समाधान किया। ८—फोई=खुले हुए। कबरि=वेश। धनि=बाला। समारि= सँभालकर। ९—पुर पथ = गाँव का रास्ता। १०—अनतए== अन्यत्र। सखिओं की ओर देखकर वह चतुर स्त्री दूसरी ओर चली। ११—जब श्रीकृष्ण (रास्ते में) राधा को पाकर उसपर छाया की तो राधा झटपट उनका हाथ पकड़ बैठ गईं।

(१५५)

(श्रीकृष्ण का मान)

राधा माधव रतनहि मदिर
निवसय सयनक सुख।
रस रस दारुन दंद उपजल
कान्ह चलल तव रूस ॥ २ ॥
नागर अंचल कर धरि नागरि
हसि मिनती कर आधा।
नागर हृदय पाँचसर हनलक
उरज दरसि मन बाधा ॥ ४ ॥
देख सखि भूठक मान।
कारन किछुओ बुझए न पाइए
तव काहे रोखल कान ॥ ६ ॥
रोख समापि पुन रहस पसारल
भेल मधथ पंचवान।
अवसर जानि मानवति राधा
कवि विद्यापति भान ॥ ८ ॥

१—रतनहि=रत्न का बना। निवसय=निवास करते हैं। सयनक सुख=शय्या के सुख में-मिलनानन्द में। २—रस रस=धीरे धीरे। दारुन=कठोर। दंद=कलह। रूस=रुठकर। ३—अंचल=चादर की खूँट। कर=हाथ। ४—पाँचसर=कामदेव। हनलक=मारा। उरज=कुच। दरसि=देखकर। मन-बाधा=मन में बाधा उपस्थित हुई मन चंचल हो उठा। ६—रोखल=क्रुद्ध

(१५६)

एत दिन छलि नव रीति रे।
जल मीन जेहन पिरीति रे॥ २॥
एकहि वचन बीच भेल रे।
हँसि पँहु उतरो न देल रे॥ ४॥
एक हि पलँग पर कान रे।
मोर लेख दूर देस भान रे॥ ६॥
जाहि बन केओ नहि डोल रे।
ताहि बन पिया हँसि बोल रे॥ ८॥
धरब योगिनिया के भेस रे।
करब मैं पँहुक उद्देस रे॥१०॥
भनइ विद्यापति मान रे।
सुपुरुष न कर निदान रे॥१२॥

हुआ। ७—समापि=समाप्त कर। रहम पमारल=काम क्रीड़ा में लगा। मधथ=मध्यस्थ, पंच। ८—अब समय आनकर राधा मानवती बन गई। भान=कहते हैं।

१—एत=इतन। छलि=थी। नव=नवीन। २—मीन=मछली। जेहन=जैसा। ३—बीच भेल=अंतर पड़ गया। ४—पँहु=प्रीतम। उतरो=उत्तर भी। ५—कान=कन्हैया, कृष्ण। ६—मोर लेख=मेरे लिये। भान=मालूम होता है। ७—केओ=कोई। डोल=आना-जाना है। ९—धरब=धरूँगी। योगिनिया=योगिनी। १०—पँहुक=प्रीतम का। उद्देश=तलाश। ११—निदान=अंत।

(१५७)

जतहि प्रेम रस ततहि दुरन्त ।
पुनु कर पलटि पिरित गुनमन्त ॥ २ ॥
सयतहु सुनिये अइसन वेवहार ।
पुनु टूटए पुनु गाँथए हार ॥ ४ ॥
ए कन्हु कन्हु तोहहि सयान ।
निसरिए कोप करए समधान ॥ ६ ॥
प्रेमक अंकुर तोहे जल देल ।
दिन दिन वाढि महातर भेल ॥ ८ ॥
तुअ गुन न गुनल, सउतिन आछु ।
रोपि न काटिए विषहुक गाछ ॥१०॥
जे नेह उपजल प्रानक ओल ।
से न करिअ दुर दुरजन बोल ॥१२॥
जगत विदित भेल तोह हम नेह ।
एक परान कपल दुइ देह ॥१४॥
भनइ विद्यापति न कर उदास ।
वडक वचन करिए विसवास ॥१६॥

१-२—जहाँ प्रेम रस है, वहाँ दौरात्म्य-प्रेम कलह भी है। अतः गुणवान् एक बार टूटने पर पुनः प्रीति करते हैं। ३—सयतहु=सवत ही। ६-समधान=समाधान ७—तोहे=तुम ने। ९—तुमने गुण कुछ न देखा और सौतिन घर लाये। १०—विषहुक गाछ=विष का भी वृक्ष। ११—प्रानक ओल=प्राणों की ओर अन्तस्तल में। १२—दुर=दूर, भिन्न। १३—तोह हम=तुम्हारा और मेरा।

(१५८)

को हम साँझक एकसरि तारा
भादव चौठिक ससी ।
इथि दुहु माझ कओन मोर आनन
जे पहु हेरसि न हँसी ॥ २ ॥
साए साए कहह कहह, कन्हु कपट करह जनु
कि मोरा भेल अपराधे ॥
न मोयँ कबहु तुअ अनुगति चुकलिहुँ
बचन न बोलल मंदा ।
सामि समाज प्रेम अनुरंजिए
कुमुदिन सन्निधि चंदा ॥ ५ ॥
भनइ विद्यापति सुनु वर जौवति
मेदिनि मदन समाने ।
राजा सिवसिंघ रूप नरायन
लखिमा देवि रमाने ॥ ७ ॥

१—२—क्या मैं सन्ध्याकाल की अकेली तारा हूँ (जिसे लोग देखना नहीं चाहते), या मैं भादो शुक्ल चतुर्थी का चन्द्रमा हूँ (जिसे देखने से कलंक लगता है) मेरा मुख इन दोनों में क्या है, जो हे प्रियतम, उसे तुम हँसकर नहीं देखते। (कैसा अच्छा तर्क है।) ३—साए = सखि । कहह = कहो । कन्हु = श्रीकृष्ण । ४—अनुगति = पीछे जाना—आज्ञा मानना । सामि = स्वामी पति । अनुरंजिए = अनुरंजन किया, रिझाया । सन्निधि = निकट । ६—मेदिनि मदन = पृथ्वी में कामदेव स्वरूप ।

(१५६)

करतल ,कमल नयन, ढर नीर।
न चेतए समरन कुतल चीर ॥ २ ॥
तुअ पथ हेरि हेरि चित नहि थीर।
सुमिरि पुरुब नेहा दगध सरीर ॥ ४ ॥
कत परि माधव साधव मान।
विरही जुवति माँग दरसन दान ॥ ६ ॥
जल मध कमल गगन मध सूर।
आँतर चान कुमुद कत दूर ॥ ८ ॥
गगन गरज मेघ, सिखर मयूर।
कत जन जानसि नह कत दूर ॥१०॥
भनइ विद्यापति विपरित मान।
राधा वचन लजाएल कान ॥१२॥

१—करतल = हथेली। कमल = (मुख)। नीर = आँसू। २—चेतए = सभालती है। समरन = आभरण गहने। कुतल = केश। चीर = वस्त्र। ३—तुअ पथ = तेरी राह। हेरि हेरि = देख देख कर। थीर = स्थिर। ४ = पुरुब = पहला। दगध = जलता है। ५—कत परि = कब तक। साधव मान = मान किये रहोगे। ७—मध = मध्य। सूर = सूर्य। ८—आँतर, = अतर, बीच। चान = चन्द्रमा। कुमुद = कोइ। कत = कितना। ९—गरज = गरजना है। सिखर = पहाड़ की चोटी। १०—जन = आदमी। जानसि = जानते हैं। ११ १२—यह विपरीत मान कैसा ? [मान स्त्रियाँ करती हैं, पुरुष नहीं] राधा का यह वचन सुन श्रीकृष्ण लज्जित हुए।

मान-भंग

(१६०)

वडई चतुर मोर कान।
साधन विनहि भाँगल मझु मान ॥ २ ॥
जोगी वेस धरि आओल आज।
के इह समुझव अपरुव काज ॥ ४ ॥
सास वचन हम भीख लइ गेल।
मझु मुख हेरइत गदगद भेल ॥ ६ ॥
कह तब—'मान रतन दह मोय।'
समझल तर हम सुकपट सोय ॥ ८ ॥
जे किछु कहल तब कहइत लाज।
कोई न जानल नागर-राज ॥१०॥
विद्यापति कह सुन्दरि राई।
जिए तुहु समुझवि से चतुराई ॥१२॥

२—भाँगल = तोड़ा। मझु = मेरा। ३—आओल = आया। ४—के = कौन। अपरुव = अपूर्व। ५—सास वचन = सास के कहने से। लइ गेल = ले गई। ६—हेरइत = देखते। ७—तब कहा—मुझे मान रूपी रत्न दो।' ८—सोय = वह। १०—जानल = जाना। नागर राज = चतुरों का बादशाह। ११—राई = राधा। १२—जिए = जैसे।

'सुभाषितेन गीतेन युवतीनां च लीलया।
मनो न भिद्यते यस्य स योगीह्यथवा पशु ॥'

(१६१)

जटिला सास फुकरि तहि बोलल
बहुरि बेरि काहे ठाढि।
ललिता कहल श्रमगल सूनल
सति पतिभय श्रवगाढि ॥ २ ॥
सुनि कह जटिला घटल की श्रकुसल
घर सयँ बाहर होय।
बहुरिक पानि धरि हेरह जोगी
किये श्रकुसल कह मोहि ॥ ४ ॥
जोगेस्वर फेरि बहुरिक पानि धरि
कुसल करय वनदेव।
इहे एक श्रक बंक, बिसंकश्रो
बन मधि पसुपति सेव ॥ ६ ॥

१—फुकरि = चिल्ला कर। बहुरि = बहुरिया, पतोहू। बरि = विलम्ब। २—अवगाढि = निश्चय। जटिला सास चिल्लाकर बोली बहुरिया, इतनी देर मे वहा क्यों खड़ी हो ? ललिता ने कहा—कुछ अमगल सुना जा रहा है। सती का पतिभय निश्चित है। ३ = घटल की अकुसल = कौन सा अमगल घटा है। ४—बहुरिक पानि = बहुरिया के हाथ। हेरह = देखो। ५ ६—अक = रेखा। बक = टेढ़ा। बिसकउ = शकायुक्त। मधि = में। तब योगेश्वर ने बहुरिया का हाथ धरकर कहा—वन देवता कुशल करें, यही हाथ की एक रखा कुछ टेढ़ी है जिससे अकुशल की आशका है। इसके निवारण के लिये वन में पशुपति की सेवा करनी होगी।

पुजनक तंत्र मन्त्र बहु आछए
से हम किछु नहि जान।
जटिला कह आन देव कहाँ पाओब
तुहु बीज कर इह दान ॥८॥
एत सुनि दुहु जन मंदिर पइसल
दुहु जन भेल एक ठाम।
मनमथ मन्त्र पढाओल दुहु जन
पूरल दुहु मन काम ॥१०॥
पुनु दुहु जन मंदिर सयँ निकसल
जटिला सयँ कह भाखी।
जब इह गौरि अराधन जाओब
विधवा जन घर राखी ॥१२॥
एत कहि सबहु चललि निज मंदिर
जोगी चरन प्रनाम।
विद्यापति कह नटवर सेखर
साधि चलल मन काम ॥१४॥

---

७ ८—पूजा के बहुत से मन्त्र-तन्त्र हैं, हम कुछ नहीं जानते। जटिला सास ने कहा—तुम्हारे ऐसा देवता फिर कहाँ मिलेगा-तुम इसे बीजमन्त्र दो-झाड़ फूक कर दो। ९—पइसल = प्रवेश किया। ११—सयँ = से। १२—जब यह गौरी की आराधना करने जाय, तब विधवा को घर में ही रख लेना-विधवा इसके साथ न जाय। [बिचारी सास विधवा थी, अत बहू अकेली जायगी, तो मिलने में सुविधा होगी] १४—मनकाम = मन कामना, इच्छा।

(१६२)

गोकुल देवदेयासिनि आओल
नगरहि ऐसे पुकारि।
अरुण वसन पेन्हि जटिल वेस धरि
कान्ह डार माझ डारि ॥ २ ॥
सुनि धनि जटिला तुरित चल आओल
हेरइत चमकित भेल।
हमर वधुक रीति देखि जनि आनमति
कहि मंदिर लइ गेल ॥ ४ ॥
देवदेयासिनि कान।
जटिला वचन सुधामुखि नियरहि
एक दीठि हेरइ वयान ॥ ६ ॥
कह तब अतनु देव दुधे पाओल
हृदि मधि पइसल काल।

१—देवदेयासिनि = वह स्त्री जो झाड़ फूंक करती है। आओल = आए। नगरहि = नगर में। २—अरुन = लाल। बसन = वस्त्र। पेन्हि = पहनकर। जटिला = योगिनी। माझ = में। ३—जटिला धनि = सास। चमकित = आश्चर्यित। ४—बधुक = बधू की, पतोहू की। जनि = जैसे। आनमति = कुछ दूसरी ही तरह की। लइ गेल = (श्री कृष्ण को) ले गई। ६—जटिला = सास। सुधामुखि = चन्द्रवदनी (बाला)। नियरहि = निकट ही। एकदीठि = एकटक। वयान = मुख। ८—अतनुदेव = कामदेव। दुधे = दुख। हृदि मधि = हृदय में। पइसल = प्रवेश किया।

निरजन सोइ मत्र जत्र झाडिए
तब इह होएव भाल ॥८॥
एत सुनि जटिला घर दोहे लेअल
निरजन दुहु एक ठाम।
सब जन निकसल बाहर बइसल
पूरल कान्ह मन काम ॥१०॥
बहु खन अतनु मत्र पढि झारल
भागल तब से हो देवा।
देवदेयासिनि घर सयँ निकसल
चातुरि बूझब केवा ॥१२॥
जटिला बहुत भकति करि हरखित
कतक भीख आनि देल।
बहु करि सेखर भीख लिए तब
से हो देयासिनी गेल ॥१४॥

८—निरजन = एकान्त में। झाडिय = झाड़ फूँक करू। इह = वह। भाल = अच्छी। ६—एत = ऐसा। जटिला = सास। घर दोहे लेअल = दोनों को घर में ले आई। ठाम = जगह। १०—निकसल = निकल गये। बइसल = बैठो। मनकाम = मन कामना, इच्छा। ११—भागल = भग गया। से हो = वह। १२—केवा = किसने अर्थात् किसीने नहीं। १३—भकति = भक्ति। कतक = कितना (बहुत) आनि देल = ला दिया। १४ गेल = गई।

"कलेजे की सबसे शुभ एवं मधुर रागिनी का नाम कविता है।"

(१६३)

वर नागर साजइ नागरि वेसा।
मुकुर उतारि सीमन सवाँरल
वेनी विरचित केसा ॥ २ ॥
चदन घोइ सिंदुर भाल रजल
लोचन अजन अका।
कुण्डल खोलि कर्नफूल पहिरल
भरि तनु केसर पका ॥ ४ ॥
वेसर खचित सतेसरि पहिरल
चूरि कनक, कर कजे।
चरन कमल पास जावक रजन
तापर मंजिर गजे ॥ ६ ॥
कंचुकि माभ कदम्ब कुसुम भरि
आरम्भन कुच आभा।
अरुनाम्बर वर साडी पहिरल
वस्त्र विलोकन सोभा ॥ ८ ॥

१—चतुर कृष्ण स्त्री का वेष बना रहे हैं। २—सीमत = माँग। विरचित = बनाया। ३—रन्द = अनुरजित करते हैं लगाते हैं। अका = रेखा। ४—केसर—पका = केशर का लेप। ५—चूरि कनक कर कज = कमल रूपी हाथ में सोने की चूड़ी। ६—जावक = महावर। गजे = गुंजार कर रहा है। ७—चोली में कदम्ब के फूल रखकर आभायुक्त कुच बनाये। ८—अरुनाम्बर = लाल वस्त्र।

धरि परिवादिनि स्याम मिलन हित
शुभ अनुकूल पयाने ।
पहिलहि वाम चरन तुलि मोहन
त्रियागति लच्छन भाने ॥१०॥
ऐसन चरित मिलन जहाँ सुन्दरि
दूरहि एकलि ठारि ।
कर धरि यन्त्र तन्त्र सवाँरत
कोइह लखइ न पारि ॥१२॥
राइक निकट बजाओल सुन्दरि
सुनइत भइगेल साधा ।
ए नव जौवनि नविन विदेसिनि
आओ पुकारइ राधा ॥१४॥
सुनइत स्याम हरखि चित आओल
उठि धनि आदर देल ।
बाँह पकडि निज आसन बइसाओल
कत कत हरखित भेल ॥१६॥

९—परिवादिनि = वीणा । पयान = जाना । १०—पहले बायाँ पैर बढ़ाया, क्योंकि स्त्रियों की यही रीति है । ११—एकलि = अकेली । १२—कर = हाथ । यन्त्र = वीणा । इह = यह । कोइ भी । लखइ न पारि = लख नहीं सकती । १४—निकट = राधा के । साधा = इच्छा । १५—धनि = बाला । १६—बाँह = हाथ । कत कत = कितना ।

जबहि बजाओल धीन सुमाधुरि
रीझि दहेल मनि माल।
अइसे बजावए हमर जतरिया
मोहन यन्त्र रसाल ॥२०॥
नाम गाम कह कुल अवलम्बन
ब्रज आगम किए काजा।
सुखमइ नाम, मथुरापुर, जदुकुल
गुनीजन पीडइ राजा ॥२२॥
धनि कह तुअ गुन रीझि प्रसन्न भेल
माँगह मानस जोय।
मनोरथ कर्म जाँचलि यदि सुन्दरि
मान रतन देह मोय ॥२४॥
हँसि मुख मोडि पीठि देइ बइसल
कान्ह कएल धनि कोर।
टूटल मान बढल कत कौतुक
भूपति के करु ओर ॥२६॥

१९—दहेल = दिया। २०—बजावए = बजाना है। जतरिया = वीणा बजानेवाला। यन्त्र = वीणा। २२—मेरा नाम सुखमयी है, गांव मथुरा, कुल यदुवश, वहां के राजा गुणियों को पीड़ा देते हैं, इसीलिये आई हूँ। २३—मानस = हृदय। २४—मान रतन = मान रूपी रत्न। देह = दो। २५—कोर = गोद। २६—भूपति = शिवसिंह।

विदग्ध-विलास

(१६४)

आजुक लाज तोहे कि कहब माई।
जल देइ धोइ जदि तबहु न जाई॥२॥
नहाइ उठल हम कालिंदी तीर।
अगहि लागल पातल चीर॥४॥
तें बेकत भेल सकल सरीर।
तहि उपनीत समुख जदुवीर॥६॥
विपुल नितम्ब अति बेकत भेल।
पालटि तापर कुन्तल देल॥८॥
उरज उपर जब देहल दीठ।
उर मोरि, बैसल, हरि करि पीठ॥१०॥
हँसि मुख मोड़ए डीठ कन्हाइ।
तनु तनु झापइते झापल न जाइ॥१२॥
विद्यापति कह तुहु अगेआनि।
पुनु काहे पलटि न पैसलि पानि॥१४॥

१—आजुक = आज का। माई = अरी दैया। २—जल देइ = जल से। ३—नहाइ = स्नान कर। ४—पातली साड़ी शरीर से सट गई। ५—तैं = इससे। बेकत = व्यक्त, प्रकट। ६—तहि = वहीं। उपनीत = बैठा हुआ। जदुवीर—कृष्ण। ७-८ पालटि = बदल कर। तापर = उसपर। कुन्तल = केश। ९—देहल दीठ = (श्रीकृष्ण ने) दृष्टि डाली। १०—मोरि = मुड़कर। बइसल = मैं बैठ गई। हरि पीठ करि = कृष्ण की ओर पीठ करके। १२—तनु-तनु = अंग अंग। १४—पुन लौटकर पानी में क्यों न पैठ गई?

(१६५)

हम अबला सखि किये गुन जान।
से रसमय-तनु रसिक सुजान ॥२॥
कतहु जतन मोर कोर बइसाइ।
बाधल बेनि से कबरि खसाई ॥४॥
कँचुक देल हृदय पर मोर।
परसि पयोधर भै गेल भोर ॥६॥
कंठ पहिराओल मनिमय हार।
अंग बिलेपल कुंकुम भार ॥८॥
बसन पेन्हाओल कए कत छंद।
किंकिनि जालहि, नीवि निबंध ॥१०॥
निज कर पल्लव मभु मुख माज।
नयनहि कएल सु काजर साज ॥१२॥
अलक तिलक, दए चोलि निहारि।
कह कविसेखर जाओ बलिहारि ॥१४॥

१—किये गुन जान=क्या गुण जाने गई। से=वह। २—कतहु=कितने। मार=मुझे। कोर ब माई=गोद में बिठाकर। ४—कबरि=केश। खसोई=खोलकर। ५—कंचुक=चोली। ६—परसि=स्पर्श कर छूकर। प[illegible]। भोर=बेसुध। ८—बिलेपल=लेप[illegible] [illegible]कुम=[illegible] [illegible]ल=पहनाया। कए कत छं[illegible] [illegible] करके [illegible]=करधनी। नीवी निबंध= [illegible] १२ [illegible] पोंछना। १३—अलक [illegible]

ए धनि रंगिनि कि कहब तोय ।
आजुक कौतुक कहल न होय ॥ २ ॥
एकलि सुतल छलि कुसुम सयान ।
दोसर मनमथ कर अनुमान ॥ ४ ॥
नूपुर झुनझुन आओल कान ।
कौतुक मुँदि हम रहल नयान ॥ ६ ॥
आओल कान्हु रइसल मभु पास ।
पास मोडि हम लुकाओल हास ॥ ८ ॥
कुतल कुसुम दाम, हरि लेल ।
बरिहा माल पुनहि मोहि देल ॥१०॥
नासा मोतिम गीमक हार ।
जतने उतारल कत परकार ॥१२॥
कुचुकि फुगइत पहु भेल भोर ।
जागल मनमथ बाँधल चोर ॥१४॥
कवि विद्यापति एह रस गान ।
तुहु रसिका पहु रसिक सुजान ॥१६॥

१—रंगिनि = सुरसिका । ३—छलि = थी । सुतलछलि = सोई थी । कुसुम सयान = पुष्पशय्या पर । ४—अनुमान = अनुमान । कर = हाथ । ५—आओल = आया । ७—मभु पास = मेरे पास । मभु = मेरे । ८—मुह फेरकर मैंने अपनी हँसी छिपाई । कुंतल—केश । कुसुमदाम = फूल की माला । हरि लेल = हर लिया, उतार लिया । १०—बरिहा = मयूर की पूँछ । ११—गीमक = गले

(१६७)

हरि धरि हार चऔंकि पर राधा।
आध माधव कर,गिम रहु आधा ॥ २ ॥
कपट कोप धनि दिठि धरु फेरी।
हरि हँसि रहल वदन बिधु हेरी ॥ ४ ॥
मधुरिम हास गुपुत नहि भेला।
तखने सुमुखि मुख चुम्बन देला ॥ ६ ॥
कर धर कुच, आकुल भेरि नारी।
निरखि,अधर मधु पिवए मुरारी ॥ ८ ॥
चिकुर चमर झरु कुसुमक धारा।
पिवि कहु,तम जनि,वमु निच,तारा ॥१०॥
विद्यापति कह सुन्दरि वानी।
हरि हँसि मिललि राधिका रानी ॥१२॥

का। १३—फुगइत = खोलते। पहु = प्रीतम। भोर = बेसुध। १५—भान = कहते हैं।

१-२—राधिका साई हुई थी कि कृष्ण ने चुपके निकट जाकर उसका हार पकड़ लिया। राधिका चौंक पड़ी। हार टूट गया। आधा हार कृष्ण के हाथ में रहा और आधा राधिका के गले में। ३—कपट कोप = झूठमूठ का क्रोध। दिठि धरु फेरी = आँखें फेर लीं। ४—वदन विधु = मुखचन्द्र। हेरी = देखना। ५-६—राधा की मधुर मुस्कान छिप न सकी, उसी समय कृष्ण ने उसके मुख को चूम लिया। ८—अधर = नीचे का ओष्ठ। ९—चिकुर = केश। १०—मानों अन्धकार तारे को निगलकर पुन उसे उगल रहा हो।

(१६८)

सासुसुतल छलि, कोर अगोर ।
तहि अति ढीठ पीठ रहु चोर ॥ २ ॥
कत कर आखर कहब बुझाई ।
आजुक चातुरि कहल कि जाई ॥ ४ ॥
नहि कर आरति ए अबुझ नाह ।
अब नहि होएत वचन निरवाह ॥ ६ ॥
पीठ आलिंगन कत सुख पाव ।
पानिक पिआस दूध किए जाव ॥ ८ ॥
कत मुख मोरि अधर रस लेल ।
कत निसबद कए कुच कर देल ॥१०॥
समुख न जाए सघन निसोआस ।
किए कारन भेल दसन विकास ॥१२॥
जागल सास चलल तब कान ।
न पूरल आस विद्यापति भान ॥१४॥

१—सुतल छलि = सोई थी । कोर अगार = अपनी गोद में लेकर । २—तहि = वहां भी । ३—शब्दों में इसे कहां तक समझा कर कहूँ । ४—कहल कि जाई = क्या कही जाती है ? ५—आरति = आतुरता, शीघ्रता । नाह = प्रीतम । ७—८—मेरी पीठ के आलिंगन से तुम्हें क्या सुख मिलेगा—पानी की प्यास कहां दूध से जाती है । ९—मोरि = मोड़कर । १०—निसबद कए = निःशब्द होकर, चुपचाप । ११—निसोआस = निश्वास, सांस । ऊंची सांस सम्मुख नहीं छोड़ता कि कहीं उस सांस के स्पर्श से मेरी सास न

(१६६)

कि कहय हे सखि आजुक रग।
सपन हि सूतल कुपुरुख सग ॥ २ ॥
वड सुपुरुख चलि,आओल धाई।
सूति रहल मुख आँचर झँपाई ॥ ४ ॥
काचलि खोलि आलिंगन देल।
मोहे जगाए आपु निंद गेल ॥ ६ ॥
हे विहि हे विहि वड दुख देल।
से दुख रे सखि अवहु न गेल ॥ ८ ॥
भनए विद्यापति, इह रस धद।
भेक कि जा‍ कुसुम—मकरद ॥१०॥

जग जाय। १२—न मालूम क्यों, उमी समय दाव चमक उठे। १३—का‍ = कृष्ण। १४—न पूरल आम = आशा नहीं पूरी हुई।

१—रग = रस वार्त्ता। २—आज मं स्वप्न में-भ्रम में आकर-कुपुरुप व साथ सोइ। ३—चलि—समझकर। आओ‍ धाई = दौड़कर आई। आँचर झँपाई = अचल से ढँककर। १०—काँचलि = चोली। आलिंगन देल = छाती से लगाया। ६—मुझे जगाकर पुन आप सो रहा। ७—बिहि = ब्रह्मा। ६—रस धंद = रस की विचित्रता। १०—भेक = मेढ़क, बेंग। कि = क्या। कुसुम-मकरद = फूल का पराग।

"भ्रमरहिता सा काञ्चनतीया कुचवध सारसहिता।
लसरपरपीयूषाधरवेदरहिता मदनमर्ना कीर्दार ॥"

आकुल चिकुर वेढ़लि मुख सोभ ।
राहु कपल ससि-मडल लोभ ॥ २ ॥
बड अपरुब दुइ चेतन मेलि ।
विपरित रति कामिनि कर केलि ॥ ४ ॥
कुच विपरीत, विलम्बित हार ।
कनक कलस बम दूधक धार ॥ ६ ॥
पिय मुख सुमुखि चूम तजि ओज ।
चाद अधोमुख पिवए सरोज ॥ ८ ॥
किंकिनि रटत, नितम्बिनि छाज ।
मदन महारथ बाजन बाज ॥१०॥
फूजल चिकुर, माल धरु रंग ।
जनि जमुना मिलु गग तरंग ॥१२॥
वदन सोहाओन स्रम जल विन्दु ।
मदन मोति लए पूजेल इन्दु ॥१४॥
भनइ विद्यापति रसमय बानी ।
नागरि रम, पिय अभिमत जानी ॥१६॥

१—आकुल = व्यग्र, चचल छिटके हुए । चिकुर = केश ।
= घेर लिया । ३—दुइ चेतन = दो चतुर (राधा कृष्ण) ।
बिलम्बित = लटका हुआ । ६—बम = वमन करता है,
ा है । छाज = (यहाँ) लाज । ६—रटत = बजती हुई ।
बि – स्त्री । छाज = शोभती है । ११—फूजल = ट्रा। हुए ।
—रम = रमनी है। अभिमत = इच्छा ।

(१७१)

विगलित चिकुर मिलित मुखमडल
चाँद बेढ़ल घनमाला।
मनिमय कुण्डल स्रवन दुलित भेल
घाम तिलक बहि गेला ॥ २ ॥
सुन्दरि तुअ मुख मङ्गल दाता।
रति विपरीत समर जदि राखवि
कि करय हरि हर धाता ॥ ४ ॥
किंकिनि किनि किनि कंकन कनकुन
घन घन नूपुर बाजे।
रति-रंग मदन पराभव मानल
जय जय डिमडिम बाजे ॥ ६ ॥
निल एक, जघन सघन, रव करइत
होअल सेनक भंग।
विद्यापति कवि इ रस गावए
जामुन मिलली गंग ॥ ८ ॥

१—विगलित = बिखरे हुए। घनमाला = मेघसमूह। २—स्रवन= कान। दुलित = डोलता हुआ। ४—समर = युद्ध। राखवि = रक्षा करोगी। धाता = ब्रह्मा। ६—आज रति युद्ध में कामदेव हार गए हैं, उसीकी जय भेरी बज रही है। ७—निल एक = एक क्षण के लिये। सघन जघन = पुष्ट जांघ। रव = शब्द। होअल = हो गया। ८—जामुन = यमुना।

(१७२)

सखि हे कि कहब किछु नहि फ़ुर ।
सपन कि परतेख कहए न पारिए
किए नियरे किए दूर ॥ २ ॥
तड़ित लता तल जलद समारल
आँतर सुरसरि धारा ।
तरल तिमिर ससि सूर गरासल
चौदिस खसि पड़ु तारा ॥ ४ ॥
अम्बर खसल, धराधर उलटल
धरनी डगमग डोले ।
खरतर बेग समीरन सचर
चचरिगन करु रोले ॥ ६ ॥
प्रलय पयोधि-जले तन झाँपल
इ नहि जुग अवसान ।
के विपरीत कथा पतिआयत
कवि विद्यापति भान ॥ ८ ॥

१—किछु नहि फुर = कहने की स्फूर्ति नहीं होती। २—परतेख = प्रत्यक्ष। किए = क्या। नियरे = निकट। ३—तड़ित लता = बिजुली (राधा)। तल = नीचे। जलद = मेघ (कृष्ण)। आँतर = बीच में। सुरसरि धारा = गंगा (हार)। ४—तरल तिमिर = चंचल अंधकार (केश)। ससि = चंद्रमा (मुख)। सूर = सूर्य। (सिन्दूर बिंदु)। खसि पड़ु = गिर पड़े। तारा = अंगल (माथे पर के फूल) ५—अम्बर = (१) आकाश (२) वस्त्र।

(१७३)

दुहुक सजुत चिकुर फूजल।
दुहुक दुहु बलाबल बूझल ॥ २ ॥
दुहुक अधर दसन लागल।
दुहुक मदन चौगुन जागल ॥ ४ ॥
दुअओ अधर करए पान।
दुहुक कठ आलिंगन दान ॥ ६ ॥
दुअओ केलि सयँ सयँ मेलि।
सुरत सुखे बिभावरि गेलि ॥ ८ ॥
दुअओ सअन चेत न चीर।
दुअओ पियासल पीवए नीर ॥१०॥
भन विद्यापति संसय गल।
दुहुक मदन लिखन देल ॥१२॥

धराधर = धराधर = (१) बादल (२) कुच । उलगल = उग पड़ा । धरनी = (१) पृथ्वी (२) नितम्ब । ६—खरतर = तीव्र समीरन = (१) हवा (२) निश्वास । चचरिगन = (१) भ्रम (२) किंकिणि आदि । राले = शार । ७—प्रनय-पयोधि = प्रेम का समुद्र । जुग अवसान । (विपरीत-रति का वर्णन है)

१—सजुत = साथ ही साथ । चिकुर = केश । फूजल = खुल गया । २—बलाबल = ताकत और कमजोरी । ३—अधर = नीचे का ओष्ठ । दसन = दाँत । ७—केलि = कामक्रीड़ा । सयँ सय = साथ ही साथ । ८—बिभावरि = रात । ९—दोनों ही इच्छा पर अपने अपने वस्त्र तक नहीं सँभालते । १०—पियासल = प्यासा।

वसंत

(१७४)

माघ मास सिरि पचमी गँजाइलि
नवम मास पंचम हरुआई।
अति घन पीडा दुख बड पाओल
बनसपती भेलि धाइ हे ॥ २ ॥
सुभ खन बेरा सुकुल पक्ख हे
दिनकर उदित समाइ ।
सोरह सम्पुन बतिस लखन मह
जनम लेल ऋतुराई हे ॥ ४ ॥
नाचए जुबतिजना हरखित मन
जनमल बाल मधाई हे।
मधुर महारस मङ्गल गावए
मानिनि मान उडाई हे ॥ ६ ॥

१—सिरिपचमी = माघ शुक्ल पंचमी । गँजाइलि = पूर्णगर्भा हुई । नवम मास = वैसाख में वसन्त का अंत होता है जेठ से माघ तक नौ महीने हुए। पंचम हरुआई = पाँचवाँ दिन होने पर। (वैद्यक के अनुसार नव महीने पाँच दिन पर पुष्ट बालक पैदा होता है)। २—घन = अधिक । ३—खन = क्षण । बेरा = बेला, समय। सुकुल पक्ख = शुक्लपक्ष । दिनकर = सूर्य । उदित समाई = उदय के समय। ४—सोरह सम्पुन = सोलह अंगों से सम्पूर्ण। बतिस लखन = बत्तिस लक्षण । ऋतुराई = वसन्त । ५—जनमल = जन्म लिया। मधाई = माधव, वसन्त। ६—उडाई = उड़ा ले गया, नष्ट किया।

ट

वह मलयानिल ओत उचित है
नव घन भओ उजियारा।
माधवि फल भेल मुकुना तुल
ते देल वन्दनवारा ॥ ८ ॥
पीअरि पाँडरि महुअरि गावए
काहरकार धतूरा।
नागेसर-कलि संख धूनि पूर
तकर ताल, समतूरा ॥ १० ॥
मधु लए मधुकर बालक दएहलु
कमल-पंखुरी-लाई।
पओनार तोरि सूत बाँधल कटि
केसर कएलि बघनाई ॥ १२ ॥
नव नव पल्लव सेज ओछाओल
सिर देल कदम्बक माला।
बैसलि भमरी हरउद गावए
चक्का चन्द निहारा ॥ १४ ॥

७—मलय-पवन बह रहा है, उसने ओ करना उचित है (क्योंकि शिशु को हवा लगने का भय है) अत नवीन मेघ छा गये। ८—मुकुना तुल = मुक्ता के समान। पीअरि पाँडरि महुअरि = गीत विशेष। काहरकार = तुरही। तकर = उसका। समतूरा = समान। ११ = (जन्म होने पर शिशु को पहले मधु चटाया जाता है)। दएहलु = दे दिया। १२—पओनार = पुरइन ... कटि = कमर में। (लड़के की कमर में सूत बाँधा जाता है)। बघनाई =

कनअ केसुअ सुति पत्र लिखिए हलु
रासि नछत्त कए लोला।
कोकिल गनित गुनित भल जानए
रितु वसंत नाम थोला ॥ १६ ॥

× × × × ×

बाल वसंत तरुन भए धाओल
बढए सकल संसारा ॥ १८ ॥
दखिन पवन घन अंग उगारए
किसलय कुसुम परागे।
सुललित हार मंजरि, घन कज्जल
अखिता अंजन लागे ॥ २० ॥
नव वसंत रितु अनुसर जौवनि
बिद्यापति कवि गावे।
राजा सिव सिंघ रूप नरायन
सकल कला मनभावे ॥ २१ ॥

बाघनख (लड़के की कमर मे पहनाया जाता है)। आछाआल = बिछाया। सिर = कदम्ब की माला सिरहाने (तकिया के रूप में) रखी। १४—हरउद = पत्तों का गीत। ममरी = भ्रमरी। १५—कनअ = सोना। केसुअ = पलास। सुति पत्र = कमपत्र। नछत्त = नक्षत्र। १६—कोकिल गणित की गणना खूब जानती थी उसीने वसंत नाम रक्खा। १८—बीच की एक पंक्ति गायब है। १९-२० दक्षिण पवन किसलय और पुष्पपराग लेकर उसके शरीर में अवगन लगाता है। मंजरी का सुन्दर हार गले में है मेघ ने उसकी आँखों में कजल लगा दिया।

(१६

आएल रितुपति राज बसं

धाओल अलिकुल माधवि पंथ

दिनकर किरन

केसर कुसुम ध

नृप आसन नव पीठल पा

काञ्चन कुसुम छत्र धर माथ।

मौलि रसाल मुकुल भ

समुख हि कोकिल प

सिखिकुल नाचत अलिकुल यंत्र।

द्विजकुल आन पढ़ आसिख मंत्र॥ १०॥

कुदवल्ली तर, धएल निसान।
पाटलतून असोक-दलवान ॥ १४ ॥
किंसुक, लवंग-लता, एक संग।
हेरि सिसिर रितु आगे दल भंग ॥ १६ ॥
सैन साजल मधुमखिका कूल।
सिसिरक सबहु कएल निरमूल ॥ १८ ॥
उधारल सरसिज पाओल प्रान।
निज नव दल, करु आसन दान ॥ २० ॥
नव वृन्दावन राज विहार।
विद्यापति कह समयक सार ॥ २२ ॥

पद्मों के रूप में।) आन=आकर। आमित मन्त्र=आशीर्वादात्मक श्लोक। ११—चन्द्रातप=चँदोवा। फूलों के पराग का चँदोवा से तन रहे हैं। १२—मलय पवन=मलयाचल से आनेवाली हवा दक्षिण पवन। सह=मार। कुदवल्ली=वृक्ष विशेष। निसान=पताका। पाटल तून=पाटल के पत्ते ही तूण (निषंग) है। असोक दलवान=असोक के पत्ते बाण है। १५—किंसुक=पलास। (धनुष के समान) लवँगलता=(तान के समान)। १६—आग दल भग=पहले ही सैन्यभंग हो गया। १७—कूल=कुल। १९—उधारल=उद्धार किया। पाओल=पाया। २०—दल=पत्ता।

अर्थो गिरामविहित विहितश्च कश्चित्।
सौभाग्यमेति मरहट्टवधूकुचाभः ॥
नान्ध्रीपयोधर इवातितरां प्रकाशो।
नो गुर्जरीस्तन इवातितरां निगूढः ॥

(१७५)

आएल रितुपति राज वसंत ।
धाओल अलिकुल माधवि पंथ ॥ २ ॥
दिनकर किरन भेल पौगण्ड ।
केसर कुसुम धएल हेमदंड ॥ ४ ॥
नृप आसन नव पीठल पात ।
काञ्चन कुसुम छत्र धर माथ ॥ ६ ॥
मौलि, रसाल-मुकुल, भेल ताय ।
समुख हि कोकिल पञ्चम गाय ॥ ८ ॥
सिखिकुल नाचत, अलिकुल यन्त्र ।
द्विजकुल आन पढ आसिख मन्त्र ॥ १० ॥
चन्द्रातप उडे कुसुम पराग ।
मलय पवन सह भेल अनुराग ॥ १२ ॥

१—आएल=आया । २—धाओल=दौड़ा । अलिकुल=भ्रमर समूह । माधवि पथ=माधवी की ओर । ३—दिनकर=सूर्य । भेल=हुआ । पौगण्ड=किशोरावस्था, कुछ कुछ तीव्र । हेमदंड=सोने का डंडा, आभा । 'मदन महीपति कनक दंड रुचि केसर कुसुम विकासे—गीत गोविन्द ।' ५—पीठल=वृक्ष विशेष, पीठा । पात=पत्ता । कांचन कुसुम=चम्पा । ७—मौलि=किरीट । रसाल मुकुल=आम की मंजरी । ताय=उसके । ९—सिखि=मोर । अलिकुल यन्त्र=भौंरे बाजा बजा रहे हैं । १०—द्विजकुल=(१) पक्षी (२) ब्राह्मण (पक्षी को द्विज इस लिये कहा जाता है कि उसका जन्म भी दो बार होता है एक बार अंडे में फिर पुन

कुदवल्ली तरु, धएल निसान।
पाटलतून असोक दलवान ॥ १४ ॥
किसुक, लवँग-लता, एक संग।
हेरि सिसिर रितु आगे दल भंग ॥ १६ ॥
सैन साजल मधु मखिका कूल।
सिसिरक सबहु कएल निरमूल ॥ १८ ॥
उधारल सरसिज पाओल प्रान।
निज नव दल, कर आसन दान ॥ २० ॥
नव वृन्दावन राज विहार।
विद्यापति कह समयक सार ॥ २२ ॥

पत्ती के रूप में।) आन=आकर। आमित मध=गशोत्रा'ामक श्लाक। ११—चद्रातप=चँदोवा। फूलों के पराग हो चँदावा से उड़ रहे हैं। १२—मलय पवन=मलयाचल से आनेवाली हवा दक्षिण पवन। सद=सार। कुदवल्ली=वृक्ष विशेष। निसान=पताका। पाटल तून=पाटल के पत्ते ही तूण (निषग) हैं। असोक दलवान=अशोक के पत्त बाण हैं। १५—किसुक=पलास। (धनुष के समान) लवँगलता=(तांत के समान)। १६—आगे दल भग=पहले ही सैन्यभग हो गया। १७—कून=कुल। १९—उधारल=उद्धार किया। पाओल=पाया। २०—दल=पत्ता।

गथा गिरामविहित विहितश्च कश्चित्।
सौभाग्यमेति मरहट्टवधूकुचाभ ॥
ना'ध्रीपयोधर इवनितरा प्रकाशो।
नो गुर्जरीस्तन इवातितरा निगूढ ॥

(१७६)

नव वृन्दावन नव नव तरुगन
नव नव विकसित फूल।
नवल वसंत नवल मलयानिल
मातल नव अलि कुल ॥ २ ॥
विहरइ नवल किसोर।
कालिंदि-पुलिन कुंज वन सोभन
नव नव प्रेम विभोर ॥ ४ ॥
नवल रसाल-मुकुल मधु मातल
नव कोकिल कुल गाय।
नवजुवती गत चित उमताअई
नव रस कानन धाय ॥ ६ ॥
नव जुवराज नवल वर नागरि
मिलए नव नव भाँति।
निति निति ऐसन नव नव खेलन
विद्यापति मति माति ॥ ८ ॥

१—नव = नवीन । विकसित = खिले हुए । २—मलयानिल = मलय पवन । मातल = पागल बना । अलिकुल = भौंरे । ३—विहरइ = विहार करता है । नवल किसोर = सुन्दर कृष्ण । ४—कालिंदि = यमुना । पुलिन = किनारे । सोभन = सुशोभित । प्रेम विभोर = प्रेम में बेसुध । ५—नई आम की मंजरी के मधु में मस्त बनी नई कोयल गा रही है । ६—उमताअई = उन्मत्त हो जाता है । ८—खेलन = खेल प्रकार का । मिलए = मिलता । माति = मस्त बनी ।

(१७७)

लता तरुअर मडप जीति।
निरमल ससधर धवलिए भीति ॥ २ ॥
पउँअ नाल अइपन भल भेल।
रात परीहन पल्लव देल ॥ ४ ॥
देखह माइ हे मन चित लाय।
वसन्त विवाह कानन थलि आय ॥ ६ ॥
मधुकरि रमनी मगल गाव।
दुजवर कोकिल मन्त्र पढाव ॥ ८ ॥
करु मकरंद हथोदक नीर।
विधु वरिआती धीर समीर ॥ १० ॥
कनअ किसुक सुति तोरन तूल।
लावा विथरल बेलिक फूल ॥ १२ ॥
केसर कुसुम करु सिंदुर दान।
जऔतुक पाओल मानिनि-मान ॥ १४ ॥
खेलए कौतुक नव पँचवान।
विद्यापति कवि दृढ कए भान ॥ १६ ॥

१—लता और वृक्ष ने मानो मडप को जीत लिया लता और वृक्ष ही मडप है। २—निरमल = स्वच्छ। ससधर = चद्रमा। धवलिए = उज्ज्वल कर दिया (चूना पोत दिया)। भीति = दीवाल। ३—पउँअ नाल = पद्मनाल, कमल का नाल। अइपन - अरिपन (जमीन पर का मागलिक चित्र)। ४—रात - लाल। परीहन=परिधान=वस्त्र ५—माइ हे=अरी मैया। ६—कानन-थलि=वनस्थली। ७—मधुकरि रमनी =

(१७८)

नाचहु रे तरुनी तजहु लाज।
आएल वसन्त रितु बनिक-राज ॥ २ ॥
हस्तिनि, चित्रिनि, पदुमिनि नारि।
गोरी सामरि एक बूढ़ि बारि ॥ ४ ॥
विविध भाँति कएलन्हि सिंगार।
पहिरल पटोर गृम भूल हार ॥ ६ ॥
केओ अगर चंदन घसि भर कटोर।
ककरहु खोइँछा करपुर तमोर ॥ ८ ॥
केओ कुमकुम मरदाव आँग।
ककरहु मोतिअ भल छाज माँग ॥ १० ॥

गौरी रूपी स्त्री। ७—दुजवर = द्विज श्रेष्ठ। ६—हथोदक = हस्तोदक जो पानी हाथ में लेकर विवाह का सकल्प पढ़ा जाता है। बिधु = चन्द्रमा। समीर = पवन। ११ = कनक - सोना। तोरन तूल = तोरण के समान। लावा = शादी के समय धान का लावा छिरिआया जाता है। नओतुक दहेज।

२—बनिक राज = व्यापारी श्रेष्ठ। ४—बारि = बाला, नवयुवती। ६—पटोर = रेशमी वस्त्र। गृम = गले में। ७—घसि = घिसकर। ८—ककरहु = किसीके। करपुर = कपूर। तमोर = पान। ६—कुमकुम = केशर। मरदाव = मदन कराती है, मलवाती है। १०—मोतिअ = मोती। छाज = शोभता है।

Poets are long lived race than heroes they breathe more of the air of immortality —Hazlitt

अभिनव पल्लव बइसक देल।
धवल कमल फुल पुरहर भल ॥२॥
करु मकरंद मंदाकिनि पानि।
अरुन असोग दीप दहु आनि ॥४॥
माइ हे आज दिवस पुनमत।
करिए चुमाओन राय वसंत ॥६॥
सपुन सुधानिधि दधि भल भेल।
भमि भमि भमरि हँकारइ देल ॥८॥
केसु कुसुम सिदुर सम भास।
केतकि धूलि बिथरहु पट वास ॥१०॥
भनइ विद्यापति कवि कठ हार।
रस बुझ सिव सिंघ सिव अवतार॥१२॥

१—अभिनव = नवीन । बइसक = बैठने के लिये । २—धवल = स्वच्छ । पुरहर = थाह की डाली । ३—मकरंद = पुष्प रस । मंदाकिनि पानि = गंगा का पानी । ४—अरुण = लाल । असोग = अशोक । दीप = दीपक । दहु आनि = ला दिया । ५—पुनमत = पुण्यमय शुभ । ६—बसन्त रूपी दुलहे का चुमाओन करो चूमो । ७—सपुन = सम्पूर्ण, पूण । सुधानिधि चंद्र । दधि भेल = दुद्दी बना । ८—भमि = भ्रमण कर । भमरि = भ्रमरी भौंरी । हँकारइ देल = बुलावा दे आई । ९—केसु = पलास । कुसुम = फूल । भास = मालूम होता है । १०—धूल = पराग । बिथरहु = बिखेर दिया है । पट बास = रेशमी वस्त्र ।

(१८०)

दखिन पवन वह दस दिस रोल।
से जनि वादी भासए बोल ॥२॥
मनमथ काँ साधन नहि आन।
निरसाएल से मानिनि मान ॥४॥
माइ हे सीत वसंत विवाद।
कओन विचारब जय अवसाद ॥६॥
दुहु दिसि मथथ दिवाकर भेल।
दुजवर कोकिल साखी देल ॥८॥
नव पल्लव जयपत्रक भाँति।
मधुकर माला आखर पाँति ॥१०॥
वादी तह प्रतिवादी भीत।
सिसिर बिन्दु हो अन्तर सीत ॥१२॥
कुंद कुसुम अनुपम विकसत।
सतत जीत वेकताओ वसंत ॥१४॥
विद्यापति कवि एहो रस भान।
राजा सिव सिंघ एहो रस जान ॥१६॥

१—रोल = शोर करता हुआ। ४—निरसाएल = नीरस कर दिया। ६—जय-अवसाद = जीत और हार। ७—मथथ = मध्यस्थ। ८—दुजवर = (१) द्विज श्रेष्ठ (२) पक्षी श्रेष्ठ। ९-१०—नव पल्लव जय पत्र (जिसपर फैसला लिखा जाय) है और भौंरों के समूह अक्षरों की पंक्तियाँ हैं। ११-१२ मुद्दई (वसन्त) से मुद्दालह (जाड़ा) हार गया और शिशिर की आम बूँद में जा रहा। १४—वेकताओ = प्रकट किया।

(१८१)

अभिनव कोमल सुन्दर पात।
सबारे बने, जनि पहिरल रात ॥ २ ॥
मलय पवन डोलए बहु भाँति।
अपन कुसुम रस, अपने माति ॥ ४ ॥
देखि देखि माधव मन हुलसंत।
विरिदावन भेल बेकत, बसंत ॥ ६ ॥
कोकिल बोलए साहर भार।
मदन पाओल जग नव अधिकार ॥ ८ ॥
पाइक मधुकर कर मधु पान।
भमि भमि जोहए मानिनि मान ॥ १० ॥
दिसि दिसि से भमि विपिन निहारि।
रास बुझावए मुदित मुरारि ॥ १२ ॥
भनइ विद्यापति इ रस गाव।
राधा माधव अभिनव भाव ॥ १४ ॥

१—अभिनव = नवीन। पात = पत्ते। २—सबारे = सम्पूर्ण। रात = लाल (वस्त्र)। मानों समूचे वन ने लाल वस्त्र पहन लिया था। ३—डोलए—बह रहा है। ४—माति = मत्त होकर। फूल अपने रस में आप ही पागल है। ५—हुलसन्त = हुलसित हुआ। ६—बेकत भेल = प्रगट हुआ। ७—साहर = आम्रमंजरी। ८—मदन = कामदेव। ९—पाइक = पायक, दूत। मधुकर = भौंरा। १०—भमि भमि = भ्रमण कर। जोहए = देखता है। ११—विपिन = वन। निहारि = देख कर। १२—रसप्रविष्ट कृष्ण रासक्रीड़ा कर रहे हैं।

(१८२)

चल देखए जाऊ रितु बसंत।
जहाँ कुंद-कुसुम केतकि हसंत ॥ २ ॥
जहाँ चंदा निरमल भमर कार।
जहाँ रयनि उजागर दिन अँधार ॥ ४ ॥
जहाँ मुगुधलि मानिनि करए मान।
परिपथिहि पेखए पंचबान ॥ ६ ॥
भनइ सरस कवि कंठहार।
मधुसूदन राधा बन विहार ॥८॥

(१८३)

मधुरितु मधुकर पाँति। मधुर कुसुम मधुमाति॥
मधुर बृंदावन माझ। मधुर मधुर रसराज॥
मधुर जुवति जन संग। मधुर मधुर रसरंग॥
मधुर मृदंग रसाल। मधुर मधुर करताल॥
मधुर नटन गति भंग। मधुर नटिनी नट संग॥
मधुर मधुर रस गान। मधुर विद्यापति भान॥

२—निरमल = स्वच्छ। भमर=भ्रमर, भौंरा। कार = काला। ४—जहाँ रात उजली प्रकाशमय (चाँदनी के कारण) और दिन अंधकार पूर्ण (पराग और मेघ के कारण)। ६—परिपथिहि = पथिकों को। पेखए = देखता है। पंचबान = कामदेव।

मधुरितु = वसंत। मधुकर = भौंरा। मधुमाति मधु से मस्त। माझ = में। रसराज=शृंगार। मधुर नृत्य या गति भंग (भावभंगी) और मधुर गान वाणी के साथ (मधुर) रस का (मधुर) गान।

(१८४)

बाजत द्रिगि द्रिगि धौद्रिम द्रिमिया।
नटति, कलावति माति श्याम संग
कर करताल, प्रबन्धक ध्वनिया ॥२॥
डम डम डंफ डिमिक डिम मादल
रनु झुनु मंजीर बोल।
किंकिनि रनरनि, वलआ कनकनि
निधुवन रास, तुमुल उतरोल ॥४॥
बीन, रबाब, मुरज, स्वरमण्डल
सा रि ग म प ध नि सा, बहु विधि भाव।
घटिता घटिता धुनि, मृदंग गरजनि
चँचल स्वरमंडल करु राव ॥६॥
स्रम भर गलित, लुलित कबरीयुत
मालति माल बिथारल मोति।
समय वसंत रास रस वर्णन
विद्यापति मति छोभित होति ॥८॥

२—नटति = नाच रही है। माति = मत्त होकर। ध्वनिया = आवाज। ३—मादल = एक बाजा। ४—वलआ = कँगना। निधुवन = निधुवन में रासलीला। जोश के साथ हो रही है। ५—रबाब = सारंगी के ढंग का एक बाजा। स्वरमंडल = वीणा का एक भेद। ६—राव = स्वर। ७—परिश्रम के कारण पसीने चल रहे हैं, केश चंचल हो इधर उधर छिटके हैं और मालती की माला मोती-बखेर रही है। ८—छोभित = चंचल।

(१८५)

रितुपति-राति रसिक रसराज।
रसमय रास रभस रस ' माझ ॥२॥
रसमति रमनि रतन धनि राहि।
रास रसिक सह रस अवगाहि ॥४॥
रँगिनि गन सब रँगहि नटई।
रनरनि कंकन किंकिनि रटई ॥६॥
रहि रहि राग रचय रसवंत।
रतिरत रागिनि रमन बसंत ॥८॥
रटति रबाब महुअरि पिनास।
राधारमन कर मुरलि बिलास ॥१०॥
रसमय विद्यापति कवि भान।
रूप नारायन भूपति जान ॥१२॥

(१८६)

मलय पवन बह। बसंत विजय कह ॥
भमर करइ रोर। परिमल नहि ओर ॥
रितुपति रँग देला। हृदय रभस भला ॥
अनंग मंगल मेलि। कामिनि करथु केलि ॥
तरुन तरुनि संगे। रयनि खेपबि रंग ॥
विरहि विपद लागि। केसु उपजल आगि ॥
कवि विद्यापति भान। मानिनी जीवन जान ॥
नृप रुद्रसिंह वरु। मेदिनि कलप तरु ॥

रंगिनि = बड़ी [illegible]। [illegible] । [illegible]

विरह

(१८७)

सखि हे बालुम जितब विदेस ।
हम कुलकामिनि कहइत अनुचित
तोहहुँ दे हुनि उपदेस ॥ २ ॥
इ न विदेसक बेलि ।
दुरजन हमर दुख न अनुमापब
तें तोंहे पिया लग मेलि ।४॥
किछु दिन करथु निवास ।
हम पूजल जे, से हे पए भुजत
राखथु पर-उपहास ॥६॥
होयताह किए बध-भागी ।
जेहि घन, हुन मन, जाएब चितब
हमहु मरब धनि आगी ॥८॥
विद्यापति कवि भान ।
राजा सिवसिंघ रूप नरायन
लखिमा देइ रमान ॥१०॥

१—जीतब = जीतेंगे (अपशकुन समझ कर 'जायेंगे' ऐसा नहीं कहती)। २—ताहहु = तुम्हीं। हुनि = उनको।। ३—बेलि—बेला, समय। ४—अनुमापब — समझेंगे। तें ताहे पिया लग मेलि = इसीलिये तुम्हें प्रीतम के निकट भेज रही हुँ। ५—करथु करें। ६—जैसी पूजा की होगी वैसा फल मैं भोगूंगी—वे मुझे केवल दूसरे की निन्दा से बचा लें। ७—होएताह = होवेंगे। किए — क्यों। बध भागी = हत्या का भागी। ८—जाएत चितब = जाने को सोचेंगे।

(१८६)

कालि कहल, पिआ ए साझहि रे
जाएत मोयँ मारुअ देस।
मोयँ अभागलि नहि जानलि रे,
सँग जइतओं जोगिन वेस ॥२॥
हृदय मोर यह दारुन रे
पिया विनु विहरि न जाए ॥३॥
एक सयन सखि सूतल रे
आछल वालमु निसि भोर।
न जानल कति खन तेजि गेल रे
विछुरल चकेवा जोर ॥५॥
सून सेज हिय सालए रे
पिया विनु घर मोयँ आजि।
विनति करओं सहलोलिनि रे
मोहि देह अगिहर साजि ॥७॥
विद्यापति कवि गाओल रे
आवि मिलत पिय तोर।
लखिमा दइ वर नागर रे
राय सिवसिंघ नहि भोर ॥६॥

१—मारुअ = मथुरा। २—जइतओं = जाती। ३—दारुन =
कठोर। विहरि = फट जाना। ४—आछल = था। जोर = जोड़ा।
६—सालए = पीड़ा होती है। ७—सहलोलिनि = सहेली। मोहि
शुष्क अग्निहोत्र साज दो, जिसमें जल जाऊँ।

(१८८)

माधव, तोँहे जनु जाह विदेस।
हमरा रंग-रभस लए जएवह,
लएवह कौन सँदेस ॥२॥
वनहि गमन करु होएति दोसर मति
विसरि जाएव पति मोरा।
हीरा मनि मानिक एको नहि माँगव
फेरि माँगव पहु तोरा ॥४॥
जखन गमन करु नयन नीर भरु
देखहु न भेल पहु ओरा।
एकहि नगर वसि पहु भेल परवस
कइसे पुरत मन मोरा ॥६॥
पहु सँग कामिनि वहुत सोहागिनि
चन्द्र निकट जइसे तारा।
भनइ विद्यापति सुनु वर जौवति
अपन हृदय धरु सारा ॥८॥

१—जनु जाह = मत जाओ । २—रंग-रभस = आमोद प्रमोद । ३—मोरा विसरि जाएव = मुझे भूल जाओगे । ५—नीर = आसू । पहु ओरा = प्रीतम की ओर । ६—पुरत = पूर्ण होगा । । ८—सारा = (यहां) धैर्य ।

'सत्सूत्रसंविधानं सदलंकारं सुवृत्तमच्छिद्रम् ।
को धारयति न कण्ठे सत्काव्यं माल्यमाध्यं च ॥'

(१८६)

कालि कहल, पिआ ए साझहि रे
जाएब मोयँ मारुअ देस।
मोयँ अभागलि नहि जानलि रे,
संग जइतओं जोगिन बेस ॥२॥
हृदय मोर वड दारुन रे
पिया विनु विहरि न जाए ॥३॥
एक सयन सखि सूतल र
आछल वालमु निसि भोर।
न जानल कति खन तेजि गेल रे
विछुरल चकेवा जोर ॥५॥
सून सेज हिय सालए रे
पिया विनु घर मोयँ आजि।
विनति करओं सहलोलिनि रे
मोहि देह अगिहर साजि ॥७॥
विद्यापति कवि गाओल रे
आवि मिलत पिय तोर।
लखिमा देइ वर नागर रे
राय सिवसिंघ नहि भोर ॥६॥

१—मारुअ = मथुरा। २—जइतओं = जाती। ३—दारुन = कठोर। विहरि = फट जाना। ४—आछल = था। जोर = ६—सालए = पीड़ा देती है। ७—सहलोलिनि—सहेली। २ = मुझे अग्निचिता साज दो, जिसमें जल जाऊँ।

मधुपुर माहन गेल रे
मोरा बिहरत छाती।
गोपी सकल बिसरलनि रे
जत छल अहिवाती ॥२॥
सुतल छलहुँ अपन गृह रे
निन्दइ गेलउँ सपनाइ।
करसों छुटल परसमनि रे
कोन गेल अपनाइ ॥४॥
कत कहबो कत सुमिरब रे
हम भरिए गरानि।
आनक धन सौं धनवती रे
कुबजा भेल रानि ॥६॥

१—मधुपुर = मथुरा। गेल = गया। मोरा = मेरा। बिहरत फटती है! २—बिसरलनि = विस्मरण हो गये भूल गये। जत जितनी। छल = थी। अहिवाती = सौभाग्यवती। ३—सुतलि सोई। छलहुँ = (मैं) थी। अपन = अपने। निन्दइ गेल सपनाइ नींद में स्वप्न देखने लगी। ४—कर = हाथ। छुटल = छूट गया परसमनि = स्पर्श मणि, पारस। कोन—कौन। गेल अपनाइ अपना गया। ५—कत = कितना। कहबो = कहूंगी। सुमिरब स्मरण करूँगा। भरिए गरानि = ग्लानि से भर गई हूँ। ६—आनक दूसरे का। सौं = से। भेल = हुई।

गोकुल चान, चकोरल रे
चोरी गेल चन्दा।
बिछुड़ि चललि दुहु जोड़ी रे
जीव दइ गेल धंदा ॥८॥
काक भाख निज भाखह रे
पहु आओत मोरा।
खीर खाँड भोजन देब रे
भरि कनक कटोरा ॥१०॥
भनहि विद्यापति गाओल रे
धैरज धर नारी।
गोकुल होयत सोहाओन रे
फेरि मिलत मुरारि ॥१२॥

७—गोकुल का चन्द्रमा चकोर बन गया—जो वहाँ चन्द्रमा के समान था—जिसे हजार हजार गोपियाँ चकोरी की तरह देखती थीं—वही आज स्वयं चकोर बन कर दूसरे को—कुब्जा को देख रहा है। हाय! मेरा चन्द्र चोरी चला गया। ८—बिछुड़ि = बिछुड़ कर। चललि = चली। दुहु जोड़ी = दोनों (राधा कृष्ण) की जोड़ी। जीव दइ गेल धंदा = प्राणों में सन्देह दे गया। ९—काक = काग, कौवा। भाख = बोली। भाखह = बोलो। पहु = प्रीतम। आओत = आयेगा। १०—खीर = दूध। देब = दूँगी। कनक = सोना। १२—सोहाओन = शोभायमान।

"सुभाषित रसास्वादबद्धरोमाञ्च कञ्चुकाः।
विनापि कामिनी सङ्ग कवयः सुखमासते॥"

(१६१)

सरसिज विनु सर, सर विनु सरसिज
को सरसिज विनु सूरे।
जौवन विनु तन, तन विनु जौवन
की जौवन पिय दूरे ॥२॥
सखि हे मोर वड दैव विरोधी।
मदन वेदन वड, पिया मोर वोलछड,
अवहु देहे परवोधी ॥ ४ ॥
चौदिस भमर मम कुसुम कुसुम रम
नीरसि माँजरि पीवइ।
मद पवन चल पिक कुहु कुहु कह
सुनि विरहिनि कइसे जीवइ ॥६॥
सिनह अछल जत, हम भेय न टूटत
वड वोल जत सव थीर।
अइसन के वोल दहु निज सिम तेजि कहु
उछल पयोनिध नीर ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति अरेरे कमलमुखि
गुन गाहक पिया तोरा।
राजा सिव सिंघ रूप नरायन
सहजे एको नहि भोरा ॥ १० ॥

१—की = क्या। सूरे = सूर्य। ४—वोलछड = प्रतिज्ञाभंग करा जाना। दहे = देते हो। ६—भमर भम = भौंरे भ्रमण कर रहे हैं। ७—अछल = था। भेद = [illegible]। [illegible]

(१६२)

सखि हे कतहु न देखि मधाई।
काप सरीर थोर नहि मानस,
अवधि निअर भेल आइ ॥ २ ॥
माधव मास, तीथि, भओ माधव
अवधि कइए पिआ गेला।
कुच-जुग संभु परसि कर बोललहि
तें परतिति मोहि भेला ॥ ४ ॥
मृगमद चानन परिमल कुकुम
के बोल सीतल चदा।
पिआ बिसलेख अनल जों बरिसए
बिपति चिन्हिए भल मदा। ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति सुन बर जौवति
चित जनु झँखह आजे।
पिअ बिस्लेष कलेस मेटाएत
बालम विलसि समाजे ॥ ८ ॥

—थोर = बड़ लाग जा कुछ करते हैं मन निश्चित होता है। ८—के = कौन। सिम – सीमा।

१—मधाई = माधव, कृष्ण। २—मानस = मन। अवधि = मिलने का दिन। निअर = निकट। ३—माधव मास = बैशाख। माधव तीथि = एकादशी। गेला = गये। ४—कर – हाथ। तें = उससे। ५—के = कौन। ६ - बिसलेख – विश्लेष विच्छेद। अनल = आग। ७—झँखह = झीखना, पश्चात्ताप करना।

(१६३)

लोचन धाए फेधाएल
हरि नहि आयल रे।
सिव सिव जिअओ न जाए
आस अरुझायल रे ॥ २ ॥
मन करे तहाँ उड़ि जाइअ
जहाँ हरि पाइअ रे।
पेम परसमनि जानि
आनि उर लाइअ रे।
सपनहु संगम पाओल
रंग बढ़ाओल रे।
से मोरा बिहि विघटाओल
निन्दओ हेराएल रे ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति गाओल
धनि धइरज धर रे।
अचिरे मिलत तोहि बालमु
पुरत मनोरथ रे ॥ ८ ॥

१—धाए = दौड़ कर। फेधाएल = पूरा सहित हो गये, पूरा गये। २—जिअओ = प्राण भी। अरुझाएल = उलझ पड़े हैं। ३—मन करे = इच्छा होती है। ४—उर लाइअ = छाती में लगा लूँ। ५—संगम = मिलन, भेंट। पाओल = पाया। ६—बिहि = ब्रह्मा। विघटाओल = नष्ट किया। निन्दिओ हेराएल = नींद भी खो गई, जाती रही। ८—अचिरे = शीघ्र ही। पूरा होगा।

(११४)

सखि मोर पिया।
अबहु न आओल कुलिस हिया ॥ २ ॥
नखर खोआओलु दिवस लिखि लिखि।
नयन अँधाओलु पिआपथ देखि ॥ ४ ॥
जब हम बाला परिहरि गेला।
किए दोस, किए गुन बुझइ न भेला ॥ ६ ॥
अब हम तरुनि बुझय रस भास।
हेन जन नहि मोर काहे पिआ पास ॥ ८ ॥
आएब हेन करि पिया मोर गेला।
पुरबक जत गुन बिसरित भेला ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुन अब राइ।
कानु समुझाइत अब चलि जाइ ॥१२॥

२—आओल = आया। कुलिस हिया = वज्र जैसा कठोर हृदय। ३—नखर = नहँ। खोआओल = नष्ट कर दिया। प्रीतम के आने का दिन लिखते लिखते मेरे नख घिस गये। ४—अँधा आलु = अँधा बना लिया। पिआ-पथ = प्रीतम की राह। ५—बाला = भोली भली किशोरी। परिहरि गेला—छोड़ कर चले गये। ६—किये = क्या। बुझइ न भेला = बुझ न सके। ७—तरुनि = युवती। रस भास = रस की बातें। हेन = इस समय। १०—पुरबक = पूर्व का। बिसरित = बिसरया। ११—राइ = राधा। १२—कानु = कृष्ण।

(१६५)

आसक लता लगाओल सजनी
नयनक नीर पटाय।
से फल अब तरुनत भेल सजनी
आँचर तर न समाय ॥ २ ॥
काच साच पहु देखि गेल सजनी
तसु मन भेल कुह भान।
दिन दिन फल तरुनत भेल सजनी
अहु खन न कर गेआन ॥ ४ ॥
सब कर पहु परदेश बसि सजनी
आयल सुमिरि सिनेह।
हमर एहन पति निरदय सजनी
नहि मन बाढय नेह ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति गाओल सजना
उचित आओत गुनसाइ।
उठि बधाव करु मन भरि सजनी
अब आओत घर नाह ॥ ८ ॥

१–२—सखि, आँसों के पानी से सींच कर आशा की लता मैंने लगाई। अब उस लता का फल (कुच) बढ़ाना में आगया, बढ़ गया, वह आँचल में भी नहीं समाता नहीं। ३—साँच=सच मुच में। पहु=प्रीतम। तसु=उसके। कुह=कुहेसा (निराशा)। अहुखन=इस समय भी। ६—एहन=ऐसा। ७—आओत=आवेगा। गुनसाइ=गुनराग। ८—बधाव=बधैया। नाह=पति।

(१६६)

कोन गुन पहु परबस भेल सजनी
बुझलि तनिक भल मद।
मनमथ मन मथ तनि बिनु सजनी
देह दहए निसि चद ॥ २ ॥
कहओ पिसुन सत अवगुन सजनी
तनि सम मोहि नहि आन।
कतेक जतन सौं मेटिए सजनी
मेटए न रेख पखान ॥ ४ ॥
जे दुरजन कटु भासए सजनी
मोर मन न होए बिराम।
अनुभव राहु पराभव सजनी
हरिन न तज हिमधाम ॥ ६ ॥
जतओ तरनि जल सोखए सजनी
कमल न तेजए पाक।
जे जन रतल जाहि सों सजनी
कि करत बिहि भए बाक ॥ ८ ॥
विद्यापति कवि गाओल सजनी
रस बूझए रसमत।
राजा सिवसिंघ मन दए सजनी
मोदवती देइ कत ॥१०॥

१—तनिक=उनका। २-मनमथ मन मथ=कामदेव मन का मथन कर रहा है। तनि=उनके। ३—दुष्ट लोग भले ही उनके

(१६७)

माधव हमर रटल दुर देस।
केओ न कहइ सखि कुसल सनेस ॥ २ ॥
जुग जुग जीवथु वसथु लाख कोस।
हमर अभाग हुनक नहि दोस ॥ ४ ॥
हमर करम भेल विहि विपरीति।
तेजलनि माधव पुरुबिल परीति ॥ ६ ॥
हृदयक वेदन वान समान।
आनक दुख आन नहिं जान ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति कवि जयराम।
देव लिखल परिनत फल वाम ॥१०॥

सैकड़ों अवगुण मुझसे कहें, किन्तु मेरेलिये उनके समान दूसरा कोई नहीं है। ४—पखान = पत्थर। ५-विराम = उदासीनता (कृष्ण के प्रति)। राहु पराभव = राहु द्वारा हराये जाने पर, ग्रस लिये जाने पर। हिमधाम = चन्द्रमा। ७—तरनि = सूर्य। ८—रतल = अनुरक्त। कि करत = ब्रह्मा विमुख होकर क्या करेगा ?

१—रटल = चला गया। २—केओ = कोई। सनेस = सन्देश। ३—जीवथु = जीयें। बसथु = बसें। ४—हुनक = उनका। ५—विहि = ब्रह्मा। ६—तेजलनि = छोड़ दिया। पुरुबिल = पूर्व की। ७—वेदन = वेदना, दुख। ८—आनक = दूसरे का। १०—वाम = विपरीत।

"कुनम दपन्यासा विकचनीश्वारराम्भगवती।
करय न कम्पयने व जरेव जीर्णस्य सत्कवेर्वाणी ॥"

(१६८)

जौवन रूप अछल दिन चारि।
से देखि आदर कएल मुरारि ॥ २ ॥
अब भेल झाल कुसुम रस छूछ।
बारि विहुन सर केओ नहि पूछ ॥ ४ ॥
हमरि ए विनती कहब सखि रोय।
सुपुरुष वचन अफल नहि होय ॥ ६ ॥
जावे रहइ धन अपना हाथ।
तावे से आदर कर संग साथ ॥ ८ ॥
धनिकक आदर सब तहँ होय।
निरधन वापुर पुछए न कोय ॥ १० ॥
भनइ विद्यापति राखब सील।
जो जग जीविए नवओ निधि मील ॥ १२ ॥

१—अछल = थे। २—से = वह। कएल – किया। ३—झाल = कटु गंधहीन। रस छूछ = रस से हीन। ४—बारि विहुन = पानी से रहित। सर = तालाब। केओ = कोई। ५—रोय = रोकर। ६—अफल = व्यर्थ। ७—जावे = जबतक। ८—सग-साथ = सगी-साथी, मित्र-कुटुम्ब। ९—धनिकक = धनियों का। सब-तहँ = सर्वत्र। १०—बापुर = बेचारा। ११—सील = मर्यादा। १२—यदि जग में जीवित रहा, तभी नौ निधियाँ प्राप्त हों।

Poetry is at bottom a criticism of life The greatness of a poet lies in his powerful and beautiful application of ideas to life —Mathew Arnold

(१६६)

सखि हे हमर दुखक नहि ओर।
इ भर बादर माह भादर
सून मंदिर मोर ॥ २ ॥
झपि घन गरजति सतति
भुवन भरि बरसंतिया।
कन्त पाहुन काम दारुन
सघन खर सर हतिया ॥ ४ ॥
कुलिस कत सत पात मुदित
मयूर नाचत मातिया।
मत्त दादुर डाकं डाहुक
फाटि जायत छातिया ॥ ६ ॥
तिमिर दिग भरि घोर जामिनि
अथिर बिजुरिक पाँतिया।
विद्यापति कह कइसे गमाओब
हरि बिना दिन रातिया ॥ ८ ॥

२—(इस पद का यह चरण अत्यंत प्रसिद्ध है। स्वयं रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कई बार इसे उद्धृत किया है)। भर = भरा हुआ। बादर = मेघ। ३—सतति = सदा। ४—पाहुन = प्रवासी। खर सर = तेज बाण। हतिया = मारता है। ५—कत सत = कई सौ। पात = गिरना है। मातिया = मत्त होकर। ६—डाक = पुकारना है। दादुर = एक बरसाती पक्षी। ७—दिग = दिशा। अथिर = चंचल। ८—कइसे = किस प्रकार। गमाओब = बिताऊंगी।

(१६६)

मोर घन वन सोर सुनइत
    बढ़त मनमथ पीर।
प्रथम छार असाढ़ आओल
    अबहु गगन गँभीर ॥ २ ॥
दिवस रयना अरे सखी
    कइसे मोहन बिनु जाए ॥ ३ ॥
आएप साओन बरिस भाओन
    घन सोहाओन बारि।
पंचसर-सर छुटत रे, कइसे
    जीअए बिरहिन नारि ॥ ५ ॥
आवए भादो, बेगर माधो
    काँसों, फहि, एहि दूख।
निडर, डर डर, डाक, डाहुक
    छुटत मदन बनूक ॥ ७ ॥
अछूह, आसिन, गगन भासि, न
    घान घन घन रोल।
सिह भूपति ननइ पेम्मन
    चतुर मास त्रि बोल ॥ ६ ॥

२—भाओन — जो मन को भावे। ४ पंचसर = कामदेव। ६—बेगर = बिना। काँसो = किससे। ७—निडर डाहुक (पक्षी विशेष) डर डर शब्द में पुकार रहा है— मानों कामदेव की बंदूक छूट रही हो। ८—अछूह = (अछ = अस्ति) आया। भासि = मालूम पड़ता है।

(२००)

फुटल कुसुम नव कुज कुटिर वन
कोकिल पचम गावे रे।
मलयानिल हिम सिखर सिधारल
पिया निज देश न आवे रे॥ २॥
चनन् चान तन अधिक उतापए
उपबन अलि उतरोले रे।
समय वसंत, कंत रहु दुर देस
जानल बिधि प्रतिकूले रे॥ ४॥
अनमिख नयन नाह मुख निरखइत
तिरपित न भेल नयाने रे।
इ सुख समय सहए एत सकट
अबला कठिन पराने रे॥ ६॥
दिन दिन खिन तनु, हिम कमलिनि जनि,
न जानि कि जिउ परजंत रे।
विद्यापति कह धिक धिक जीवन
माधव निकरुन कत रे॥ ८॥

१—फुल्ल = प्रस्फुटित हुआ, खिल उठा। २—मलयानिल हिम सिखर सिधारल = मलय पवन हिमालय की ओर चला—दक्षिण पवन बहने लगा। ३—चान = चन्दन। चान = चन्द्रमा। उतापए = उत्तप्त कर देता है जलाता है। अलि उतरोले रे—भौंरे गुंजार कर रहे हैं। ५—अनमिख = बिना पलक गिरे हुए। हिम = बर्फ। परजन्त = शेष। ८—निकरुन = करुणा रहित, कठोर।

(२०१)

सजनी कानुक कहवि बुझाई।
रोपि पेमक विज, अकुर मूड़लि
बाँचब कोन उपाई ॥ २ ॥
तेल बिन्दु जेसे पानि पसारिए
एसन मोर अनुराग ।
सिकता जल जेसे छनहि सुखए
तैसन मोर सुहाग ॥ ४ ॥
कुल कामिनि छलौं, कुलटा भए गेलौं
तिनकर वचन लोभाई ।
अपने कर हम मूँड मुड़ाएल
कानु से प्रेम बढ़ाई ॥ ६ ॥
चोर रमनि जनि, मन मन, रोअइ
अम्बर बदन छिपाई।
दीपक लोभ सलभ जनि धाएल
से फल भुजइत चाई ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति इह कलजुग रित
चिन्ता करह न कोई।
अपन करम दोप आपहि भुंजइ
जे जन पर रस होई ॥ १० ॥

१—कानुक = कृष्ण को । २—मूड़लि = ताड़ दिया । सारिए = फैलता है । ४ – सिकता = बालू । तैसन = वैसा । सुहाग = सौभाग्य । ५—छलौं = थी । कुलटा = व्यभिचारिणी । तिन-

(२०२)

के पतिआ लए जाएत रे
मोरा पियतम पास।
हिय नहि सहए असह दुख रे
भेल साओन मास ॥ २ ॥
एकसरि भवन पिया विनु रे
मोरा रहलो न जाय।
सखि अनकर दुख दारुन रे
जग के पतिआय ॥ ४ ॥
मोर मन हरि हरि लय गेल रे
अपनो मन गेल।
गोकुल तजि मधुपुर बस रे
कत अपजस लेल ॥ ६ ॥
विद्यापति कवि गाओल रे
धनि धरु पिय आस।
आओत तोर मनभावन रे
एहि कातिक मास ॥ ८ ॥

कर = उनके। ६—मूड़ मुड़ाएल = बदनाम हुई। ७—चोर रमनि = चोर की स्त्री। अम्बर = वस्त्र। ८—सलभ = पतग। जनि = ऐसा। भुजइत चाही = भोगना ही चाहिये। १०—भुजए = भोगना है।

१—के = कौन। २—भेल = हुआ, आया। ३—एकसरि = अकेली। ४—अनकर = दूसरे का। पतिआय = विश्वास करता है। ५—हरिलय गेल — हरकर ले गये। अपनो = स्वयं भी। ८—आओत = आवेगा।

(२०३)

सजनी, के कह आओब मधाई ।
विरह पयोधि पार किए पाओब
मझु मन नहि पतिआई ॥२॥
एखन तखन करि दिवस गमाओल
दिवस दिवस करि मासा ।
मास मास करि बरस गमाओल
छोडलूं जीवन आसा ॥४॥
बरस बरस करि समय गमाओल
खोयलू कानुक आसे ।
हिमकर किरन नलिनि जदि जारब
कि करब माधव मासे ॥६॥
अंकुर तपन ताप जदि जारब
कि करब बारिद मेहे ।
इह नव जौवन विरह गमाओब
कि करब से पिया गेहे ॥८॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
अब नहि होइ निरासे ।
से ब्रजनन्दन हृदय आनन्दन
झटित मिलब तुअ पास ॥१०॥

१—आओब = आवेंगे । २—पयोधि=समुद्र । ३—एखन तखन = यह छण वह छण । ५—खोयलू = गुजा दिया । कानुक = कृष्ण का । ६—हिमकर=चन्द्रमा । नलिनि = कमलिनी । जारब = जलायगा

(२०४)

अकुर तपन ताप जदि जारब
कि करब बारिद मेह।
ई नव जौवन विरह गमाओब
कि करब से पिआ गेह ॥ २ ॥
हरि हरि के इह दैव दुरासा।
सिन्धु निकट जदि कंठ सुखाएब
के दुर करब पियासा ॥ ४ ॥
चंदन तरु जब सौरभ छोडब
ससधर बरिखब आगि।
चिन्तामनि जब निज गुन छोडब
की मोर करम अभागि ॥ ६ ॥
साओन माह घन बिन्दु न बरिखब
सुरतरु बाँझ कि छादे।
गिरिधर सेवि ठाम नहि पाएब
विद्यापति रहु धाँदे ॥ ८ ॥

कि = क्या। माधव मास = वैशाख (वसंत)। ७—तपन-ताप = सूर्य की ज्वाला। ९—होइ = होओ। भटिन = शीघ्र।

३—के = कौन। ४—दुर करब = दूर करेगा। ५—सौरभ = सुगंध। ससधर = चन्द्रमा। बरिखब = वर्षा करेगा। ६—चिंतामनि = वह मणि, जिससे जो कुछ माँगे, दे दे। ७—घन बिन्दु = मेघ की बूँद। सुरतरु = कल्पवृक्ष। बाँझ = वन्ध्या। कि छादे = किस प्रकार। ८—सेवि = सेवा कर। ठाम = जगह। धाँदे = संदेह।

(२०५)

चानन भेल विषम, सर, रे
भूषन भेल भारी।
सपनहुँ हरि नहि आएल रे
गोकुल गिरधारी ॥ २ ॥
एकसरि ठाढि कदम-तर रे
पथ हेरथि मुरारी।
हरि बिनु हृदय दगध भेल रे
झामर भेल सारी ॥ ४ ॥
जाह जाह तोहेँ ऊधव हे
तोहेँ मधुपुर जाहे।
चन्द्रवदनि नहि जीवति रे
बध लागत काहे ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति तन मन र
सुनु गुनमति नारी।
आजु आओत हरि गोकुल रे
पथ चलु झट झारी ॥ ८ ॥

१—चानन=चंदन। विषम=कठोर। सर=बाण। भारी=भार-स्वरूप। ३-एकसरि=अकेले। पथ हेरथि=राह देख रही है। ४-दगध=दग्ध, जला हुआ। झामर=मलिन। ८—जाह=जाओ। मधुपुर=मथुरा। ६—जीवति=जीयेगी। बध=हत्या। काहे=किसे। ८—झट झारी=झटक कर, शीघ्र-शीघ्र।

(२०६)

विपत, अपत, तरु, पाओल रे
पुन नव नव पात।
विरहिन-नयन बिहल विहि रे
अविरल वरिसात॥ २॥
सखि अतर विरहानल रे
नित वाढल जाय।
विनु हरि लख उपचारहु रे
हिय दुख न मेटाय॥ ४॥
पिय पिय रटए पपिहरा रे
हिय दुख उपजाय।
कुदिना, हित जन, अनहित रे
थिक जगत सोभाव॥ ६॥
कवि विद्यापति गाओल रे
दुख मेटत तोर।
हरखित चित तोहि भेटत रे
पिय नन्दकिसोर॥ ८॥

१—विपत्ति रूपी पत्रहीन वृक्ष ने पुन [वर्षा आने पर] नये नये पत्ते प्राप्त किये। २—बिहल = विधान किया, बनाया। विहि = ब्रह्म। अविरल = लगातार, निरंतर। ३—अतर = भीतर, हृदय में। विरहानल = विरह रूपी अग्नि। ४—लख = लाख। उपचार = उपाय। ६—कुदिना = दुर्दिन आने पर। अनहित = शत्रु। सोभाव = स्वभाव। थिक = है। ७—मेटत = मिटेगा।

(२०७)

मोर पिया सखि गेल दुर देस।
जौवन दए गेल साल सँनेस ॥ १ ॥
मास असाढ उनत नव मेघ।
पिआ विसलेख रहओं निरथेघ ॥
कोन पुरुप, सखि कोन से देस।
करव मोयँ तहाँ जोगिनि भेस ॥ २ ॥
साओन मास बरिस घन वारि।
पंथ न सूझै निशि अँधियारि ॥
चौदिस देखिए बिजुरी रेह।
से सखि कामिनि जीवन सँदेह ॥ ३ ॥
भादव मास वरिस घन घोर।
सभदिसि कुहकए दादुल मोर ॥
चेहुँकि चेहुँकि पिया कोर समाय।
गुनमति सूतलि अक लगाय ॥ ४ ॥
आसिन मास आस धर चीत।
नाह निकारन न भेलाह हीत ॥
सरवर खेलए चकवा हास।
बिरहिनि वेरि भेल आसिन मास ॥ ५ ॥

१—साल = काँग। सनेस = भेंट। २—उनत = उन्नत चढ़ता हुआ। विसलेख = विश्लेष, विछोह। रहओं = रहती हूँ। निरथेघ = निरवलम्ब। से = वह। ४—दादुल = मेंढक। कोर = गोद। सूतलि = सोई। अक = हृदय। ५—निकारन = निष्करुण। भेलाह = हुआ।

कातिक कत दिगन्तर वास।
पिय पथ हेरि-हेरि भेलहुँ निरास॥
सुख सुखराति सबहु का भेल।
हमे दुख साल सोआमि दयगेल॥ ६॥
अगहन मास जीव के अत।
अबहु न आएल निरदय कत॥
एकसरि हम धनि सुतओं जागि।
नाह का आओत खाएल मोहि आगि॥ ७॥
पूस खीन दिन दीघरि राति।
पिआ परदेस मलिन भेल काँति॥
हेरओं चौदिस, भँखओं रोय।
नाह विछोह काहु जन होय॥ ८॥
माघ मास घन पडए तुसार।
झिलमिल केचुओं उनत थन हार॥
पुनमति सूतलि पिअतम कोर।
विधि वस दैव बाम भेल मोर॥ ६॥

६—दिगन्तर=दूरदेश। वास=रहना। सुखराति=दी की रात। सोआमि=स्वामी। ७—सूतओं जागि=जगती सोती हूँ। जब मुझे आग खा जायगी, जब मैं विरह ज्वाला में जाऊंगी तब प्रीतम व्यर्थ आयँगे। ८—दीघरि=दीर्घ, बड़ी। भँखओं=भँखती हूँ। तुसार=बर्फ। झिलमिल=बारीक में उभड़े हुए कुच हैं, जिनके ऊपर हार है। बाम भेल=विमुख हु

फागुन मास धनि जीव उचाट।
बिरह-बिखिन भेल हेरओं बाट॥
आयल मत्त पिक पंचम गाव।
से सुनि कामिनि जीवहु सताव ॥१०॥

चैत चतुरपन, पिय परवास।
माली जाने कुसुम बिकास॥
भमि भमि भमरा कर मधुपान।
नागरि भइ पहु भेल असयान ॥११॥

बेसाख तवे खर भरन समान।
कामिनि कंत हनए पँचबान॥
नहि जुड़ि छाहरि न बरिस बारि।
हम जे अभागिनि पापिनि नारि ॥१२॥

जेठ मास ऊजर नव रंग।
कत चहुए खलु कामिनि संग॥
रूपनरायन पूरथु आस।
भनइ विद्यापति बारह मास ॥१३॥

१०—धनि जीव उचाट—बाला का जी उचट गया। बिखिन=बिक्षीण, अत्यंत कृश। पिक—कोयल। से=वह। सताव=सताता है। ११—प्रवास=विदेश में। कुसुम-बिकास=फूल का खिलना। भमि=भ्रमण कर। भमरा=भौंरा। नागर=चतुर। पहु=प्रीतम। १२—तवे=तवे जाता है, गरम हो उठता है। खर=तीक्ष्ण। जुड़ि=ठंढाना। छाहरि=छाया। बरिस=बरसता है। बारि=पानी। ऊजर नवरंग=नये रंग उजड़ गये। खलु=निश्चय। पूरथु=पूरा करें।

(२०८)

माधव देखलि वियोगिनि वामे ।
अधर न हास विलास सखी सँग
अहनिस जप तुअ नामे ॥ २ ॥
आनन सरद सुधाकर सम तसु
बोलइ मधुर धुनि बानी ।
कोमल अरुन कमल कुँम्हिलायल
देखि मन अइलहुँ जानी ॥ ४ ॥
हृदयक हार भार भेल सुवदनी
नयन न होए निरोधे ।
सखि सब आए खेलाओल रँग करि
तसु मन किछुओ न बोधे ॥ ६ ॥
रगडल चानन मृगमद कुकुम
सभ तेजलि तुअ लागी ।
जनि जल हीन मीन जक फिरइछ
अहोनिस रहइछ जागी ॥ ८ ॥
दूति उपदेस सुनि गुनि सुमिरल
तइखन चलला धाई ।
मोदवती पति राघवसिंह गति
कवि विद्यापति गाई ॥१०॥

२—तसु=उसका । ४—कुम्हिलायल=मुरझा गया । अइलहुँ=मैं आई । ६—निरोधे=बंद । ७—रगड़ल=घिसा । चानन=चन्दन । मृगमद=कस्तूरी । कुकुम=केशर । ८—जक=समान । फिरइछ=

(२०६)

लोचन नीर तटिनि निरमान ।
करए कलामुखि तथिहि सनाने ॥ २ ॥
सरस मृनाल करइ जपमाली ।
अहनिस जप हरि नाम तोहारी ॥ ४ ॥
वृन्दावन कान्हु धनि तप करइ ।
हृदय वेदि मदनानल वरइ ॥ ६ ॥
जिय कर समिध समर कर आगी ।
करति होम बध होएबह भागी ॥ ८ ॥
चिकुर बरहि रे समरि कर लेअइ ।
फल उपहार पयोधर देअइ ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुनह मुरारी ।
तुअ पथ हेरइत अछि बर नारी ॥१२॥

= फिरती है । ६ तहसन = उसी प्रेम ।

१ २ आखों के आंसुओं से नदी का निर्माण कर वह चन्द्र-वदनी उसीमें स्नान करती है। ३—मृणाल=कमल नाल। करई= बनाती है। जपमाली = जपमाला सुमरनी। ६ – हृदय रूपी वेदी पर काम की अग्नि धधक रही है। ७ ८-अपने प्राणों को समिध (अग्निहोत्र की लकड़ी) बनाकर और स्मरण को अरणी (आगी = जिससे आग निकले, अरणी) करके वह होम कर रही है, तुम इसकी हत्या के भागी बनोगे। ९—चिकुर = बाल। बरहि = बही, कुश। समरि = सम्हलकर। १०—पयोधर = कुच। १२— अछि = है।

(२१०)

अकामिक मन्दिर भेलि बहार।
चहुँदिस सुनलक भमर झकार॥ २॥
मुरुछि खसल महि न रहलि थीर।
न चेतए चिकुर न चेतए चीर॥ ४॥
केओ सखि वेनि धुन,केओ धुरि झार।
केओ चानन अरगजओ सँभार॥ ६॥
केओ थोल मंत्र कान तर जोलि।
केओ कोकिल खेद,डाकिनि बोलि॥ ८॥
अरे अरे अरे कान्हु की रभसि बोरि।
मदन भुजँग डसु बालहि तोरि॥१०॥
भनइ विद्यापति एहो रस भान।
एहि विष गारड एक पए कान॥१२॥

१—अकामिक = अकस्मात्। भेलि बहार = बाहर हुई। २—भमर = भौंरा। ३—खसल = गिर पड़ी। थीर = स्थिरता। ४—चेतए = सँभालती है। चिकुर = केश। चीर = साड़ी। ५—केओ = कोइ। बनि धुन = वेणी गूथती है वेणी सँभालती है। धुरि झार = धूल झाड़ती है। ६—अरगजओं = कस्तूरी आदि का लेप से। सँभार=सँभालती है। ७—कान तर = कान के निकट। जोलि = जोर से। ८—खेद = खदेड़ती है। ९—कि रभसि बारि = क्या रभस कर बाल रहे हो। १०—तुम्हारी प्रेमिका को (बालहि) कामदेव रूपी सर्प ने काट लिया है। १२—एक कृष्ण ही इस विष के लिये गरुड़ है।

(२११)

माधव, कठिन हृदय परबासी।
तुम पेअसि मोयँ देखल वियोगिनि
अबहु पलटि घर जासी ॥२॥
हिमकर हेरि अवनत कर आनन
कर करुना पथ हेरी।
नयन काजर लए लिखए विधुन्तुद
भय रह ताहेरि सेरी ॥४॥
दखिन पवन वह से कइसे जुबति सह
कर कवलित तनु अंगे।
गेल परान आस दए राखए
दस नख लिखए भुजंगे ॥६॥
मीनकेतन भय सिव सिव सिव कय
धरनि लोटावए देहा।
करे रे कमल लए कुच सिरिफल दए
सिव पूजए निज गेहा ॥८॥
परभृत के डर पाअस लए कर
वायस निकट पुकारे।
राजा सिवसिंघ रूप नरायन
करथु विरह उपचारे ॥१०॥

१—परबासी=प्रगासी विटेश में रहनेवाला। २—पेअसि= प्रयसी, प्रमिका। जासी=जाश्रो। ३—हिमकर=चन्द्रमा। अवनत =नीच। विधुन्तुद—राहु। ताहेरि सेरी=उसीकी शरण में।

(२१२)

कुसुमित कानन हेरि कमलमुखि
मूदि रहए दु नयान।
कोकिल कलरव मधुकर धुनि सुनि
कर देइ, झाँपइ कान ॥२॥
माधव, सुन सुन वचन हमारा।
तुम्र गुनसुन्दरि अति भेल दूबरि
गुनि गुनि प्रेम तोहारा ॥४॥
धरनी धरि धनि कत बेरि बइसइ
पुन तहि उठइ न पारा।
कातर दिठि करि चौदिस हेरि हेरि
नयन गरए जलधारा ॥६॥
तोहर विरह दिन छन छन तनु छिन
चौदसि चाँद समान।
भनइ विद्यापति सिवसिंह नरपति
लखिमा देइ रमान ॥८॥

५—कवलित = ग्रसित, खा जाना। ६—गेल = गया हुआ। भुजग= सर्प। (सर्प वायु को खा जायगा, यह समझकर) ७—मीनकेतन= कामदेव। ८—करे रे कमल लए = हाथरूपी कमल लेकर। सिरिफल = नारियल। ९—परभृत - कोयल। पायस = पायस, खीर। वायस = कौवा। १०—करथु = करें। उपचार = उपाय।

२—कुसुमित कानन = खिला हुआ वन। २—मधुकर = भौंरा। ५—पृथ्वी पकड़कर वह बाला कई बार बैठ जाती है और पुन (चेष्टा करने पर)

(२१३)

सरद्क ससधर मुखरुचि सोंपलक
हरिन के लोचन लीला।
केसपास लए चमरि के सोंपलक
पाए मनोभव पीला ॥ २ ॥
माधव, जानल न जिवति राही।
जतवा जकर ले ले छलि सुन्दरि
से सब सोंपलक ताही ॥ ४ ॥
दसन दसा दालिम के सोंपलक
बन्धु अधर रुचि देली।
देह दसा सौदामिनि सोंपलक
काजर मनि सखि भेली ॥ ६ ॥
भौंहक भंग अनंग चाप दिहु
कोकिल के दिहु बानी।
केवल देह नेह अछ लओले
एतवा अएलहुँ जानी ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
चित्त झँखह जनु आने।
राजा सिवसिंघ रूप नरायन
लखिमा देइ रमाने ॥ १० ॥

उठ नहीं सकती। ७—दिन = गरीब, असहाय। चौदसि = चतुर्दशी।

१—ससधर = चन्द्रमा। मुखरुचि = मुख की शोभा। सोंपलक — समर्पण किया। २—चमरि = जिस गाय की दुम का चँवर होता है।

(२१४)

आयल उनमद समय वसंत।
दारुन मदन निदारुन कत ॥टेक॥
ऋतु राज आज विराज हे सखि
नागरी जन वंदिते।
नव रंग, नव दल देखि उपवन
सहज सोभित कुसुमिते।
आरे,कुसुमित कानन कोकिल साद।
मुनिहुक मानस उपजु विसाद ॥ १ ॥
अति मत्त मधुकर मधुर रव कर
मालती मधु संचिते।
समय कत उदृत नहि किछु
हमहि विधि वस वंचिते॥
वचित नागर नेह ससार।
एहि रितुपतिसा न करए विहार ॥ २ ॥

मनोभव = कामदेव। पीना = पड़ा। ४ — जनबा = जितना। जकर = जिसका। ले ले दलि = लिये हुए था। ५ — दाडिम = डिम = अनार। बन्धु = बाधुक फूल। ६ सौदामिनि = बिजली। सनि = समान। ७ — अनग चाप दिहु = कामदेव के धनुष का दिया। ८ — जद = है। एतना = इतना। ९ — सँपइ = भावना।

१ — उनमद = उन्मत्त, पागल। दारुन कठिन। निदारुन = करुणाहीन। नागरी जन वन्दिते = नागरी स्त्रियों द्वारा पूजित। नव = नवीन। दल = पत्ता। कुसुमित = फूले हुए। कानन = वन।

अति हार भार मनोज मारए
चंद रवि सनि भानए।
पुण्य पाप सताप जत हो
मन मनाभव जानए॥
जारए मनसिज मार सर साधि।
चानन देह चोगुन हो धाधि॥ ३॥
सब धाधि आधि वेआधि जाइति
करिए धैरज कामिनी।
सुपहु मन्दिर तुरित आओत
सुफल जाइति जामिनि॥
जामिनि सुफल जाइति अवसान।
धैरज धर विद्यापति भान॥ ४॥

साद = ध्वनि। बिसाद = विषाद, दुःख। २—मधुकर = भौंरा। रव = आवाज। उदत = वार्ता। सेह = वही। सुनुपतिसा = वसन में। ३—मनोज = कामदेव। चंद, रवि सनि भानए—चन्द्रमा सूर्य के समान मालूम होता है। जत = जितना। मनसिज = कामदेव। मार = मारना है। चानन = चन्दन। धाधि = ज्वाला। ४—आधि वेआधि—शोक और पीड़ा। कामिनि = कामिनी। सुपहु = सुप्रभु, प्यारे प्रीतम। आओत = आवेगा। जामिनि = रात। अवसान = अन्त। भान = कहते हैं।

'स्मृतिमपि न ते यान्ति क्ष्मापा विनायदनुग्रह।
प्रकृति महते कुसुमस्येव नाम कनिष्मण॥

(२१५)

माधव, कत परवोधव राधा।
हा हरि हा हरि कहतहि वेरि वेरि
अव जिउ करव समाधा ॥२॥
धरनि धरिये धनि जतनहि वइसइ
पुनहि ।उठए नहि पारा।
सहजहि विरहिन जग महँ तापिनि
वोरि मदन-सर-धारा ॥४॥
अरुन नयन नोर तीतल कलेवर
विलुलित दीगल केसा।
मन्दिर वाहिर करइत ससय
सहचरि गनतहि सेपा ॥६॥
आनि नलिनि केओ रमनि सुताओलि
केओ देइ मुख पर नीरे।
निसवद पेखि केओ सास निहारए
केओ देइ मद समीरे ॥ ८ ॥
कि कहव खेद, भेद जनि अतर
घन घन उतपत साँस।
भनइ विद्यापति सेहो कलावति
जीव वँधल आस-पास ॥१०॥

२—समाधा=समाप्त । ३—वइसइ=बैठती है। ५—नोर=आँसू। तीतल=भींगा हुआ। सेपा=अंत, मृत्यु। ७—सुताओलि=सुलाई। उतपत=उत्तप्त, गर्म। आस पास=आशा के बंधन में।

(२१६)

अनुखन माधव माधव सुमरइत
सुन्दरि भेलि मधाई।
ओ निज भाव सुभावहि बिसरल
अपने गुन लुबुधाइ ॥२॥
माधव, अपरुब तोहर सिनेह।
अपन विरह अपन तनु जरजर
जिवइत भेलि संदेह ॥४॥
भोरहि सहचरि कातर दिठि हेरि
छलछल लोचन पानि।
अनुखन राधा राधा रटइत
आधा आधा बानि ॥ ६॥
राधा सयँ जब पुनतहि माधव
माधव सयँ जब राधा।
दारुन प्रेम तबहि नहि टूटत
बाढ़त विरहक बाधा ॥ ८ ॥
दुहुदिसि दारु दहन जैसे दगधइ
आकुल कीट परान।
ऐसन वल्लभ हेरि सुधामुखि
कवि विद्यापति भान ॥ १०॥

इस पद्य में प्रेम की पराकाष्ठा हो गई है। राधा विरहवश, प्रेम में तल्लीन हो, अपने को ही कृष्ण समझ लेती हैं और राधा-राधा चिल्लाने लगती है। पुन जब होश में आती हैं, तो कृष्ण के लिये

(कृष्ण का विरह)

(२१७)

रामा हे, से किए विसरल जाई।
कर धरि माथुर अनुमति मगइत
ततहि पडल मुरछाई ॥ २ ॥
किछु गदगद सरे लहु लहु आखरे
जे किछु कहल वर रामा।
कठिन कलेवर तेइ चलि आओल
चित्त रहलि सोइ ठामा ॥ ४ ॥
से विनु रात दिवस नहि भावए
ताहि रहल मन लागि।
आन रमनि सयँ, राज सम्पद मोयँ
आछिए जइसे विरागी ॥ ६ ॥
दुइ एक दिवस निचय हम जाओव
तुहु परवोधवि राइ।
विद्यापति कह चित्त रहल तहि
प्रेम मिलाएव जाई ॥ ८ ॥

यादुनाथ हो रठनी है। मैं रानी अवस्थाओं में मन यथा सहती है।

१—रामा = सुन्दरी (सखि)। से = वह किए = क्यों। विसरल = भूलना। ३—सरे = स्वर में। लहु लहु आखरे = मधुर शब्दों में। ? किछु = आ कुछ। ४ तेई - उसीसे। ५—से = वह (राधा)। —आन - ?। । आछिए = है। ७—निचय = निश्चय। ८—तहि = वहीं।

(२१८)

तिल एक सयन ओत जिउ न सहए
  न रहए दुहु तनु भीन।
माझे पुलक गिरि अतर मानिए
  अइसन रहु निसि दीन ॥२॥
सजनी कोन परि जीवए कान।
राहि रहल दुर हम मथुरापुर
  एतहु सहए परान ॥४॥
अइसन नगर अइसन नव नागरि
  अइसन सम्पद मोर।
राधा बिनु सब बाधा मानिए
  नयनन तेजिए नोर ॥६॥
सोइ जमुना जल सोइ रमनीगन
  सुनइत चमकित चीत।
कह कविसरार अनुभवि जनला
  बड़क बड़इ पिरीत ॥८॥

१—तिल एक = एक क्षण के लिए भी। ओत = ओट। भीन = भिन्न। माझे = मध्य में। —मिलन के समय रोमांच हो जाने से मिलने में किंचित्-मात्र व्याघात हो जाती थी, अतएव, रोमांच हमलोगों को पहाड़ के समान मालूम पड़ता था, इस प्रकार हम दिन रात मिले हुए थे। ३—कोन परि = किस प्रकार। ५—अइसन = ऐसा। ६—नोर = आँसू। ८—अनुभवि = अनुभव कर के। जनला = जान गया।

भावोल्लास

(२१६)

सरस वसंत समय भल पाओलि
दछिन पवन वहु धीरे।
सपनहुँ रूप वचन एक भाखिए
मुख सों दूरि कर चीरे ॥ २ ॥
तोहर वदन सम चान होअथि नहि
जइओ जतन विहि देला।
कए बेरि काटि बनाओल नव कय
तइओ तुलित नहि भेला ॥ ४ ॥
लोचन तूल कमल नहि भए सक
से जग के नहि जाने।
से फेरि जाए लुकाएल जल भए
पंकज निज अपमाने ॥ ६ ॥
भनहि विद्यापति सुनु वर जौवति
ई सभ लछमी समाने।
राजा सिवसिंघ रुपनरायन
लखिमा देइ पति भाने ॥ ८ ॥

१—पाओलि = पाया। २—स्वप्न में एक आदमी ने आकर कहा—अरी, मुख से अंचल हटाओ। ३—वदन = मुख। चान = चन्द्रमा। जइओ = यद्यपि। विहि=विधाता। ४—कए = कितने। कय=काया शरीर। तइओ=तौ भी। तुलित – तुल्य, समान। ५—तूल=तुल्य। भए सक=हो सकता। लुकाएल = छिप गया। जल भय= जल में। पंकज = कमल। ई सभ=यह सब।

(२२०)

सुतलि छलहुँ हम घरवा रे
गरवा मोति हार
राति जखनि भिनुसरवा रे
पिया आएल हमार ॥ २ ॥
कर कोसल, कर कपइत रे
हरवा उर टार।
कर पकज उर थपइत रे
मुख चंद निहार ॥ ४ ॥
केहनि अभागलि वैरिनि रे
भागलि मोर निन्द।
भल कए नहि देख पाओल रे
गुनमय गोविन्द ॥ ६ ॥
विद्यापति कवि गाओल रे
धनि मन धर धीर।
समय पाए तरुवर फर रे
कतबो सिचु नीर ॥ ८ ॥

१—सुतलि छलहुँ = सोई थी। गरवा = गले में। २—जखनि = जिस समय। भिनुसरवा = भोर उष काल। आएल = आया। ३—चतुराई करते हुए काँपते हाथ से हृदय का हार हटवा। ४—कर पकज = कमल रूपी हाथ। थपइत = स्थापित करते, धरते। छाती पर हाथ देकर मुख देखने लगे। ५—केहनि = कैसी। अभागनि = अभागिनी। ६—भलकए = अच्छी तरह। ८—पार =

(२२१)

मोरा रे अँगनवाँ चनन केरि गछिआ
ताहि चढ़ि कुररय काग रे।
सोने चोंच बाँधि देव तोयँ बायस
जओं पिया आओत आज रे॥ २ ॥
गावह सखि सब झूमर लोरी
मयन अराधन जाऊँ रे ॥ ३ ॥
चओदिस चम्पा मओली फुललि
चान उजोरिया राति रे।
कइसे कए मोयँ मयन अराधव
होइति बड़ि रति-साति रे॥ ५ ॥
विद्यापति कवि गावए तोहर
पहु अछ गुनक निधान रे।
राओ भोगीसर सब गुन आगर
पदमा देइ रमान रे ॥ ७ ॥

फलना है। करबो सिचु नीर=कितना भी पानी पटाओ।

१—अँगनवाँ = आँगन में। चनन करि = चन्दन का। गछिया = वृक्ष। कुररए = बोल रहा है। २—सोने = स्वर्ण से। तोयँ = तुझे। बायस = काग। ३—गावह गाओ। मयन अराधन= कामदेव की आराधना करने। ४—मओली = मल्लिका। चान = चन्द्रमा। उजोरिया = चाँदनी। ५—कइसे कए = किस प्रकार। होइति = होयगी। रति साति = रति जनित पीड़ा। ६—पहु = प्रीतम। अछ = है। ७—रमान = पति।

(२२२)

श्रँगने आओब जब रसिया।
पलटि चलब हम इषत हँसिया ॥ २ ॥
रस-नागरि रमनी।
कत कत जुगति मनहि अनुमानी ॥ ४ ॥
आवेसे आँचर पिया धरवे।
जाएब हम न जतन बहु करवे ॥ ६ ॥
कँचुआ धरब जब हठिया।
करे कर बाँधब कुटिल आध दिठिया ॥ ८ ॥
रभस माँगब पिआ जब ही।
मुख मोडि बिहसि बोलब नहि नहि ॥१०॥
सहजहि सुपुरुख भमरा।
मुख कमलक मधु पीअब हमरा ॥१२॥
तखन हरब मोर गेआने।
विद्यापति कह धनि तुअ धेयाने ॥१४॥

१—अँगने = आगन में। आओब = आयँगे २—इषत = थोड़ा थोड़ा। ३—रसनागरि = रस में चतुरा, सुरसिका। ४—कत = कितनी। जुगति = युक्ति। ५—आवेसे = आवेश में, उत्तेजित होकर। ६—वे बहुत यत्न करेंगे, किंतु मैं न जाऊँगी। ७—कँचुआ = कञ्चुकी, चोली। हठिया = हठकर। ८—(अपने) हाथ से (उनके) हाथ को बाँधा दूँगी और तिरछी एवं आधी चितवन से देखूगी। १०—रभस = रति क्रीड़ा। बिहसि = हँसकर। ११—भमरा = भौंरा। १२—पीअब पीयेगा।

(१८४)

पिया जब आओब इ मझु गेहे।
मंगल जतहु करब निज देहे ॥ २ ॥
कनअ कुम्भ करि कुच जुग राखि।
दरपन धरब काजर देइ आखि ॥ ४ ॥
बेदि बनाओब हम अपन अंक मे
झाड करब ताहे, चिकुर बिछौने ॥ ६ ॥
कदलि रोपब हम गरुअ नितम्ब।
आम पल्लव ताहे किंकिनि सुझम्प ॥ ८ ॥
दिसि दिसि आनब कामिनि ठाट।
चौदिसि पसारब चाँदक हाट ॥१०॥
विद्यापति कह पूरब आस।
दुइ एक पलक मिलब तुम पास ॥१२॥

१३—तखन= उस समय। (काम क्रीडा के समय) मेरा ज्ञान हर लेंगे।

१—आओब=आवेंगे। इ = यह। मझु=मेरे। गेहे- घर में। २—जितना मंगल करना होगा, अपने शरीर में ही करूँगी। ३—कनअ-कुम्भ = सोने के घड़े। कुच जुग = दोनों कुच। ४—आँखों में काजर लगाकर उसे दर्पण रूप में धरूँगी=मेरी आँखों में प्रीतम अपना रूप देखेंगे। ५—बेदि = चौका। अँकमे = गोदी। ६—केश को विच्छिन्न कर, खोलकर उसमे झाड़ करूँगी। ७—कदलि = केला। गरुअ = विशाल। सुझम्प = आन्दोलित, शब्दित। ९—आनब = लाऊँगी। ठाट = समूह। हाट = बाजार (स्त्रियों के मुख चन्द्रमा की चन्द्रमा से दीख पड़ेंगे।)

(२२४)

दुहुक दुलह दुहु दरसन भेल।
बिरह जनित दुख सब दुर गेल ॥ २ ॥
कर धरि बइसाओल बिचित्र आसन।
रमन-रतन-स्याम रमनी रतन ॥ ४ ॥
बहु विधि विलसए बहु बिधि रंग।
कमल मधुप जनि पाओल सग ॥ ६ ॥
नयन नयन दुहु वयन वयान।
दुहु गुन, दुहु गुन दुहुजन गान ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति नागरि भोर।
त्रिभुवन विजयी नागर चोर ॥१०॥

(२२५)

चिर दिन से बिहि भेल अनुकुल रे।
दुहु मुख हेरइत दुहु से आकुल रे ॥ २ ॥
बाहु पसारिए दुहु दुहु धर रे।
दुहु अधरामृत दुहु मुख भरु रे ॥ ४ ॥
दुहु तनु काँपइ मदन उछल रे।
किन किन किन करि किंकिनि रुचल रे ॥६॥
जाइतेहि स्मित नव वदन मिलल रे।
दुहु पुलकावलि तें लहु लहु रे ॥ ८ ॥
रस-मातल दुहु वसन खसल रे।
विद्यापति रस सिन्धु उछलल रे ॥१०॥

दुलह = दुर्लभ। बइसाओल = बिठलाया। भोर = बेसुध। चिर =

(३२६)

सुनु रसिआ,
अब न बजाऊ बिपिन बँसिआ ॥ २ ॥
बार बार चरनारबिंद गहि
सदा रहब बनि दसिआ ।
कि छलहुँ कि होएब से के जाने
बृथा होएत कुल हँसिआ ॥ ४ ॥
अनुभव ऐसन मदन—भुजंगम
हृदय मोर गेल डसिआ ।
नंद नंदन तुअ सरन न त्यागब
बरु जग होए दुरजसिआ ॥ ६ ॥
बिद्यापति कह सुनु बनितामनि
तोर मुख जीतल ससिआ ।
धन्य धन्य तोर भाग गोआरिनि
हरि भजु हृदय हुलसिआ ॥ ८ ॥

हँसते हुए । पुलकावलि = रोमांच । मातल=मस्त बना । खसल = गिर पड़ा ।

१—रसिआ = रसिक । २—बँसिआ = बंशी । ३—दसिआ = दासी । ४—कि = क्या । छलहुँ = थी । होएब = होऊँगी, बनूँगी । से = यह बात । के = कौन । कुल हँसिआ = कुल की निंदा । ५—ऐसन = इस प्रकार । मदन भुजंगम = काम रूपी सर्प । गेल डसिआ = डँस गया, काट गया । ६—बरु = भले हो, बल्कि । दुरजसिआ = अपयश कलंक । ७—बनितामनि = स्त्रियों में रत्न समान । जीतल = जीत लिया । ससिआ = चन्द्रमा ।

(२२७)

सखि, कि पुछसि अनुभव मोय।
से हो पिरित अनुराग बखानिए
तिल तिल नूतन होय ॥ २ ॥
जनम अवधि हम रूप निहारल
नयन न तिरपित भेल।
सेहो मधु बोल स्रवनहि सूनल
स्रुति पथ परस न भेल ॥ ४ ॥
कत मधु-जामिनि रभस गमाओल
न बूझल, कइसन केल।
लाख लाख जुग हिय हिय राखल
तइयो हिय जुड़ल न गेल ॥ ६ ॥
कत विदगध जन रस अनुमोदइ
अनुभव काहु न पेख।
विद्यापति कह प्राण जुड़ाएत
लाखे न मिलल एक ॥ ८ ॥

१—कि पुछसि = क्या पूछती हो। मोय = मुझसे। २—से हो = वही। तिल तिल = क्षण क्षण। ३—निहारल = देखा। ४—स्रवनहि = कानों से। परस = स्पर्श। ६—मधु जामिनि — मिलन की रात। रभस = काम-क्रीड़ा। गमाओल = बिताई। केल = केलि। ६—तइओ = तो भी। जुड़ल न गेल = न जुड़ाया, ठंढा न हुआ। ७—विदगध = विदग्ध, रसिक। रस अनुमोदइ = रस का उपभोग करते हैं। पेख = देखना। ८—लाख में एक न मिला।

प्रार्थना और नचारी

(२२८)

विदिता देवी विदिता हो
अविरल केस सोहन्ती।
ऐकानेक सहस को धारिनि
जरि रंगा पुरनन्ती ॥ २ ॥
कजल रूप तुअ काली कहिए
उजल रूप तुअ बानी।
रवि-मंडल परचंडा कहिए
गंगा कहिए पानी ॥ ४ ॥
ब्रह्मा घर ब्रह्मानी कहिए
हर-घर कहिए गौरी।
नारायन-घर कमला कहिए
के जान उतपत तोरी ॥ ६ ॥
विद्यापति कबिबर एहो गाओल
जाचक जन के गती।
हासिनि देइ पति गरुड़नरायन
देवसिंघ नरपति ॥ ८ ॥

(२२६)

कनक-भूधर-सिखर वासिनि
चन्द्रिका चय चारु हासिनि
दसन कोटि बिकास, वंकिम-
तुलित चन्द्र कले।

कुद्ध सुररिपु बलनिपातिनि
महिष शुम्भ निशुम्भ घातिनि
भीत भक्त भयापनोदन—
पाटल प्रबले ॥ २ ॥

जय देवि दुर्गे दुरित तारिणि
दुर्गमारि विमर्द हारिणि
भक्ति नम्र सुरासुराधिप—
मंगलायतरे ।

गगन मंडल गर्भगाहिनि
समर भूमिषु सिंह वाहिनि
परसु पाश कृपाण सायक—
शंख चक्र धरे ॥ ४ ॥

अष्ट भैरवि संग शालिनि
सुकर कृत्त कपाल कदम्ब मालिनि
दनुज शोणित पिशित वर्द्धित—
पारणा रभसे ।

संसार बंध निदानमोचिनि
चन्द भानु कृशानु लोचिनि
योगिनि गण गीत शोभित
नृत्यभूमि रस ॥ ६ ॥

जगतिपालन जनन मारए
रूप कार्य सहस्र कारए
हरि विरंचि महेश शेखर-
चुम्ब्यमान पदे ।
सकल पापकला परिच्युति
सुकवि विद्यापति कृतस्तुति
तोषिते सिवसिंह भूपति
कामना फल दे ॥ ८ ॥

(१३०)

जय जय संकर जय त्रिपुरारि ।
जय अध पुरुष जयति अध नारि ॥ २ ॥
आध धवल तनु आधा गोरा ।
आध सहज कुच आध कटोरा ॥ ४ ॥
आध हडमाल आध गज मोती ।
आध चानन सोहे आध विभूती ॥ ६ ॥
आध चेतन मति आधा भोरा ।
आध पटोर आध मुँज डोरा ॥ ८ ॥
आध जोग आध भोग विलासा ।
आध पिधान आध नग वासा ॥ १० ॥
आध चान आध सिंदुर सोभा ।
आध विरूप आध जग लोभा ॥ १२ ॥
भने कविरतन विधाता जाने ।
दुइ कए बाँटल एक पराने ॥ १४ ॥

(२३१)

भल हर भल हरि भल तुअ कला।
खन पित बसन खनहि बघछला ॥ २ ॥
खन पंचानन खन भुजचारि।
खन सकर खन देव मुरारि ॥ ४ ॥
खन गोकुल भए चराइअ गाय।
खन भिखि माँगिए डमरु बजाय ॥ ६ ॥
खन गोविंद भए लिअ महादान।
खनहि भसम भरु काख बोकान ॥८॥
एक सरीर लेल दुइ बास।
खन बैकुंठ खनहि कैलास ॥१०॥
भनइ विद्यापति विपरित बानि।
ओ नारायन ओ सूलपानि ॥१२॥

(२३२)

आगे माई एहन उमत बर लैल हिमगिरि
देखि देखि लगइछ रंग।
एहन उमत बर घोड़बो न चढ़इक
जो घोड़ रँग रँग जंग ॥ २ ॥
बाघक छाल जे बसहा पलानल
साँपक भीरल तंग॥
डिमिक डिमिक जे डमरु बजाइन
खटर खटर करु अंग ॥ ४ ॥

भकर भकर जे भाँग भकोसथि
छटर पटर कर गाल।
चानन सौं अनुराग न थिकइन
भसम चढाबथि भाल ॥ ६ ॥
भूत पिसाच अनेक दल-साजल
सिर सौं बहि गेल गंग।
भनइ विद्यापति सुन ए मनाइनि
थिकाह दिगम्बर अंग ॥ ८ ॥

(२३३)

बेरि बेरि अरे सिव मों तोय बोलो
फिरसि करिअ मन माए।
विन सक रहह भीख माँगिए पए
गुन गौरव दुर जाय ॥ २ ॥
निरधन जन बोलि सब उपहासए
नहि आदर अनुकम्पा।
तोह सिव आक धतुर फुल पाओल
हरि पाओल फुल चम्पा ॥४॥
खटँग काटि हर हर जे बनाबिअ
त्रिसुल तोडिअ करु फार।
बसहा धुरन्धर हर लए जोतिअ
पाटए सुरसरि धार ॥ ६ ॥

भन विद्यापति सुनह महेसर
इ लागि कपलि तुअ सेवा।
एतए जे वर से वर होअल
ओतए जाएब जनि देवा ॥८॥

(२३४)

हम नहि आज रहब यहि आगन
जो बुढ होएत जमाई, गे माई।
एक त बइरि भेला बीध विधाता
दोसरे धिया कर बाप।
तीसरे बइरि भेला नारद बाभन
जे बूढ आनल जमाइ, गे माई ॥
पहिलुक बाजन डामरु तोरब
दोसरे तोरब रुँडमाला।
बरद हाकि बरिआत बेलाइब
धिआले जाएब पराई, गे माइ ॥
धोती लोटा पतरा पोथी
एहो सभ लेबन्हि छिनाए।
जौं किछु बजता नारद बाभन
दाढी धए घिसिआएब, गे माइ ॥
भन विद्यापति सुनु हे मनाइन
दृढ करु अपन गेआन।
सुभ सुभ कए सिरी गौरी बिआह
गौरी हर एक समान, गे माइ ॥

(२३५)

नाहि करब वर हर निरमोहिया।
चित्ता भरि तन वसन न तिन्हका
बघछल काख तर रहिया ॥ २ ॥
वन वन फिरथि मसान जगावथि
घर आँगन ऊ उनौलन्हि कहिया।
सासु ससुर नहि ननद जेठौनी
जाए वैठति धिया केकरा ठहिया ॥४॥
बूढ बडद ढकढोल गोल एक
सम्पति भाँगक झोरिया।
भनइ विद्यापति सुनु हे मनाइन
सिव सन दानि जगत के कहिया ॥६॥

(२३६)

कतए गेला मोर बुढवा जती।
पीसल भाँग रहल सेइ गती ॥ २ ॥
आन दिन निकहि रहथि मोर पती।
आज लगाइ देल कौन उदगती ॥ ४ ॥
एकसर जोहए जाएब कौन गती।
डेसि खसब मोरि होत दुरगती ॥ ६ ॥
नदनवन विच मिलल महेस।
गौरि हरखित भेल छुटल कलेस ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुनु हे सती।
इहो जोगिया थिक त्रिभुवन पती ॥१०॥

(२३७)

जोगिया एक हम देखलों गे माई।
अनहद रूप कहलो नहि जाई॥ २॥
पंच बदन तिन नयन विसाला।
बसन विहुन ओढन बघछाला॥ ४।
सिर बहे गंग तिलक सोहे चँदा।
देखि सरूप मेटल दुखदंदा॥ ६॥
जाहि जोगिया लैं रहलि भवानी।
मन आनलि वर कौन गुन जानी॥ ८॥
कुल नहि सिल नहि तात महतारी।
एहन दिवस थिक लहु जुग चारी॥१०॥
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि।
एहो जोगिया थिक त्रिभुवन दानि॥१२॥

(२३८)

सिव हो, उतरब पार कओन विधि।
लोढब कुसुम तोरब बेल पात।
पुजब सदासिव गौरिक सात॥
बसहा चढल सिव फिरहु मसान।
भँगिया जठर दरदो नहि जान॥
जप तप नहि कैलहु नित दान।
वित गेला तिन पन करइत आन॥
भन विद्यापति सुनु हे महेस।
निरधन जानि के हरहु कलेस॥

(२३६)

जखन देखल हर हो गुननिधी।
पुरल सकल मनोरथ सब विधी ॥ २ ॥
बसहा चढल हर हो बुढ जती।
काने कुंडल सोभे गले गजमोती ॥ ४ ॥
बइसल महादेव चौका चढी।
जटा छिरिआओल माओल भरी ॥ ६ ॥
विधिकरु निधिकर बिधिकर करू।
विधि न करइ से हर हो हठ धरू ॥८॥
बिधिए करइत हर हो घुमि घँसु।
सँसरि खसल फनि सिरि गोरी हँसु ॥१०॥
केओ नहि किछु कहइन्हि छिनकहुँ।
पुरबिल लिखल छला मोर पहुँ ॥१२॥
कबि विद्यापति गाओल।
गौरी उचित बर पाओल ॥१४॥

(२४०)

हर जनि बिसरब मो ममिता,
हम नर अधम परम पतिता।
तुअ सन अधम उधार न दोसर
हम सन जग नहि पतिता ॥२॥
जम के द्वार जवाब कओन देब
जखन बुझत निज गुन करबतिया।

जब जम किंकर कोपि पठाएत
तखन के होत धरहरिया ॥४॥
भन विद्यापति सुकवि पुनित मति
सङ्कर विपरित बानी।
असरन सरन चरन सिर नाओल
दया करु दिअ सुलपानी ॥६॥

(२४१)

एत जब तप हम किअ लागि केलहु
कयिला कएलि नित दान।
हमरि धिया के एहो वर होएता
अब नहि रहत पराग ॥२॥
हर के माग बाप नहि थिकइन
नहि छइन सोदर भाय।
मोर धिया जों सासुर जेती
बइसति ककर लग जाय ॥४॥
घास काट लौती बसहा चरौती
कुटतो भाँग धतूर।
एको पल गौरा बैसहु न पौती
रहती ठाढ़ि हजूर ॥६॥
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि
दृढ़ करु अपन गेआन।
तीन लोक के एहो छथि ठाकुर
गौरा देवी जान ॥८॥

(२४२)

कखन हरब दुख मोर
हे भोला नाथ।
दुखहि जनम भेल दुखहिं गमायब
सुख सपनहु नहि भेल, हे भोलानाथ।
आछत चानन अवर गँगाजल
बेल पात तोहि देब, हे भोलानाथ।
यहि भव सागर थाह कतहु नहि
भैरव धरु कर आए, हे भोलानाथ।
भन विद्यापति मोर भोलानाथ गति
देहु अभय वर मोहि, हे भोला नाथ।

(२४३)

यहि विधि ब्याहन आयो
पहन बाउर जोगी।
टपर टपर कए बसहा आयल खटर खटर रुँडमाल॥
भकर भकर सिब भाँग भकोसथि डमरू लेल कर लाय।
ऐपन मेटल पुरहर फोरल बर किमि चौमुख दीप॥
धिआ ले मनाइनि मडप बइसलि गाबिए जनु सखि गीत॥
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि ई थिका त्रिभुवन ईस॥

(२४४)

आजु नाथ एक व्रत माहि सुख लागत हे।
तोहें सिव धरि नट बेष कि डमरू बजाएब हे॥

भल न कहल गउरा रउरा आजु सु नाचब हे।
सदा सोच मोहि होत कवन विधि बाँचब हे॥
जे जे सोच मोहि होत कहा समुझाएब हे।
रउरा जगत के नाथ कवन सोच लागए हे।
नाग ससरि भुमि खसत पुहुमि लोटायत हे।
गनपत पोसल मजूर सेहो धरि खायत हे॥
अमिअ चूइ भुमि खसत वघम्बर जागत हे।
होत वघम्बर बाघ बसह धरि खायत हे॥
टूटि खसत रुदराछ मसान जगायत हे।
गौरी कँह दुख होत विद्यापति गायत हे॥

(२२५)

आगे माई, जोगिया मोर जगत सुख दायक
दुख ककरो नहि देल।
दुख ककरो नहि दल महादेव
दुख ककरो नहि देल।
यहि जोगिया के भाग भुलैलक
धतुर खोआइ धन लेल॥
आगे माइ, कातिक गनपति दुइजन बालक
जग भरि के नहि जान।
तिनका अभरन किछुओ न थिकइन
रति यक सोन नहि कान॥
आगे माइ, सोना रुपा अनका सुत अभरन
आपन रुद्रक माल।

अपना सुत ला किछुओ न जुरइनि
अनका ला जजाल।
आगे माइ, छन में हेरथि कोटि धन वकसथि
ताहि देवा नहि थोर।
भन विद्यापति सुनहू मनाइनि
थिका दिगम्बर भोर।

(२४६)

जोगि भँगवा खाइत भेला रँगिया
भोला बौडलवा॥
सबके ओढावे भोला साल दुसलवा
आप ओढय मृगछलवा॥
सबके खिआवे भोला पाँच पकवनमा
आप खाए भाँग धतुरवा॥
कोई चढावे भोला अच्छत चानन
कोई चढावे बेलपतवा॥
जोगिन भूतिन सिव के सँघतिया
भेरो बजावे मिरदंगिया।
भन विद्यापति जै जे सकर
पारवती गौरि सँगिया॥

(२४७)

जौं हम जनितहुँ भोला भेला ठकना
होइतहुँ राम गुलाम गे माई।

भाइ विभीखन घड तप कैलन्हि
जपलन्हि रामक नाम, गे माई।
पुरुब पछिम एको नहि गेला
अचल भेला यहि ठाम, गे माई।
बीस भुजा दस माथ चढ़ाओलि
भाँग दिहल भर गाल, गे माई।
नीच-ऊँच सिव किछु नहि गुनलन्हि
हरपि देलन्हि रँडमाल, गेमाई॥
एक लाख पूत सवा लाख नाती
कोटि सोयरलक दान, गे माई।
गुन अवगुन सिव एको नहि बुझलन्हि
रखलन्हि रावनक नाम, गे माइ।
भन विद्यापति सुकवि पुनित मति
कर जोरि विनओं महेस, गे माई।
गुन अवगुन हर मन नहि आनथि
सेवकक हरथि कलेस, गे माई।

(२४८)

जानकी-वन्दना

रे नरनाह सतत भजु ताही।
ताहि, नहि जननि जनक नहि जाही॥२॥
घसु नइहरा सुसुरा के नाम।
जननिक सिर चढ़ि गेल घहि गाम॥४

सासुक कोर में सुतल जमाय।
समधि बिलह तो बिलहल जाय॥ ६॥
जाहि ओदर से बाहर भेलि।
से पुनि पलटि ततय चलि गेलि॥ ८॥
भन विद्यापति सुकवी भान।
कबि के कवि कँह कवि पहचान॥१०॥

गंगा-स्तुति

(२४६)

बड सुख सार पाओल तुअ तारे।
छोड़इत निकट नयन बह नीर॥ २॥
करजोरि विनमओं विमल तरंगे।
पुन दरसन होए पुनमति गंगे॥ ४॥
एक अपराध छेमब मोर जानी।
परसल माए पाए तुअ पानी॥ ६॥
कि करब जप तप जोग धेआने।
जनम कृतारथ एकहि सनाने॥ ८॥
भनइ विद्यापति समदओं तोही।
अन्त काल जनु बिसरह मोही॥ १०॥

(२५०)

ब्रह्मकमण्डलु बास सुवासिनि
सागर नागर गृहवाले।

पातक महिष विदारण कारण
धृतकरवाल वीचि माले ॥
जय गंगे जय गंगे ।
शरणागत भय भंगे ॥
सुर मुनि मनुज रचित पूजोचित
कुसुम विचित्रित तीरे ।
त्रिनयन मौलि जटाचय चुम्बित
भूति भूषित सित नीरे ॥
हरिपद कमल गलित मधुसोदर
पुण्य पुनित सुरलोके ।
प्रविलसदमरपुरी पद दान-
विधान विनाशित शोके ॥
सहज दयालुतया पातकि जन
नरक विनाशन निपुणे ।
रुद्रसिंह नरपति वरदायक
विद्यापति कवि भणित गुणे ॥

कृष्ण-कीर्त्तन

(२५१)

माधव, कत तोर करब बड़ाई ।
उपमा तोहर कहब ककरा हम
कहितहुँ अधिक लजाई ॥

जौं श्रीखडक सौरभ अति दुरलभ
तौं पुनि काठ कठोर।
जा जगदीस, निसाकर तौ पुन
एकहि पच्छ उजोर॥
मनि समान औरो नहि दोसर
तनिकर पाथर नामे।
कनक कदलि छोट लज्जित भए रह
की कहु ठामहि ठामे॥
तोहर सरिस एक तोहँ माधव
मन होइछ अनुमान।
सज्जन जन सौं नेह कठिन थिक
कवि विद्यापति भान॥

(२५२)

माधव, बहुत मिनति करतोय।
दए तुलसी तिल देह समर्पिनु
दय जनि छाडवि मोय।
गनइत दोसर गुन लेस न पाओवि
जब तुहुँ करबि विचार।
तुह जगत जगनाथ कहाओसि
जग बाहिर न इ छार॥
किए मानुस पसु पखि भए जनमिए
अथवा कीट पतंग।

करम विपाक गतागत पुनु पुनु
मति रह तुअ परसंग ॥
भनइ विद्यापति अतिसय कातर
तरइत इह भव-सिंधु।
तुअ पद पल्लव करि अवलम्बन
तिल एक देह दिनबंधु ॥

(२५३)

तातल सैकत वारि-बिन्दु सम
सुत मित रमनि समाज।
तोहे बिसारि मन ताहे समरपिनु
अब मझु हब कोन काज ॥
माधव, हम परिनाम निरासा।
तुहुँ जगतारन दीन दयामय
अतए तोहरे बिसवासा।
आध जनम हम नींद गमायनु
जरा सिसु कत दिन गेला।
निधुवन रमनि रभस रंग मातनु
तोहे भजब कोन बेला ॥
कत चतुरानन मरि मरि जाओत
न तुअ आदि अवसाना।
तोहे जनमि पुन तोहे समाओत
सागर लहरि समाना ॥

भनइ विद्यावति सेप समन भय
तुय विनु गति नहि आरा।
आदि अनादि नाथ कहाओसि अब
तारन भार तोहारा॥

(२५४)

जतन जतेक धन पापे बटोरल
मिलि मिलि परिजन खाय।
मरनक बेरि हरि कोई न पूछए
करम सग चलि जाय॥
ए हरि, वन्दों तुअ पद नाय।
तुअ पद परिहरि पाप पयोनिधि
पारक कओन उपाय॥
जावत जनम नहि तुअ पद सेविनु
जुवती मति मयँ मेलि।
अमृत तजि हलाहल किए पीअल
सम्पद अपदहि भेलि॥
भनइ विद्यापति नेह मने गनि
कहल कि बाढ़व काजे।
साँझक बेरि सेवकाई मँगइत
हेरइत तुअ पद लाजे॥

विविध



(२५५)

व्यथा

माधव, कि कहब तोहर गेआन।
सुपहु कहलि जब रोष कयल तब
कर मूनल दुहु कान ॥ २ ॥
आयल गमनक बेरि न नीन टर
तइ किछु पुछिओ न भेला।
एहन करमहीनी हम सनि के धनि
कर से परसमनि गेला ॥ ४ ॥
जओं हम जनितहुँ एहन निठुर पहु
कुच-कञ्चन-गिरि-साँधि।
कौसल करतल बाहु-लता लय
दृढ करि रखितहु बाँधि ॥६॥
ह सुमिरिए जब जाओं मरिए तब
बुझि पड हृदय पषान।
हिमगिरि-कुमरी चरन हृदय धरि
कवि विद्यापति भान ॥ ८ ॥

(२५६)

प्रेम

फूल एक फुलवारि लाओल मुरारि।
जतने पटाओल सुवचन वारि ॥२॥
चौदिस बान्हल सीलक आरि।
जिय अवलम्बन करु अवधारि ॥४॥

ततहु फुलल फुल अभिनव पेम।
जसु मूल लहए न लाखहु हेम॥६॥
अति अपरुब फुल परिनत भेल।
दुइ जिव अछल एक भए गेल॥८॥
पिसुन-कीट नहीं लागल ताहि।
साहस फल देल विहि निरवाहि॥१०॥
विद्यापति कह सुन्दर सेहु।
करिए जतन फलमृत होए जेहु॥१२॥

(२५७)

शिवसिंह का युद्ध

दूर दुग्गम दमसि भंजेओ
गाढ गढ गूढिय गंजेओ
पातसाह समीम सीमा
समर दरसओ रे॥ १॥
ढोल तरल निसान सद्दहि
भेरि काहल सख नद्दहि
तीनि भुवन निकेत
केतकि सान भरिओ रे॥ २॥
कोह नीर पयान चलिओ
वायु मध्ये राय गरुओ
तरनि तेअ तुलाधरा
परताप गहिओ रे॥ ३॥

मेरु कनक सुमेरु कम्पिअ
धरनि पूरिय गगन झम्पिअ
हानि तुरए पदाति पयभर
कमन सहिओ रे ॥ ४ ॥
तरल तर तरवारि रंगे
विज्जुदाम छटा तरंगे
घोर घन संघात वारिस
काज दरसेओ रे ॥ ५ ॥
तुरए कोटिअ चाप चूरिअ
चारि दिसि सं विदिस पूरिअ
विषम सार असाढ धारा
धरनी भरिओ रे ॥ ६ ॥
अन्ध कूअ कबन्ध लाइअ
फेरवी फफ्फरिस गाइअ
रुहिर मत्त परेत भूत
वेताल विछलिओ रे ॥ ७ ॥
वार भइ परिपंथि गंजिअ
भूमि मंडल मुड मंडिअ
चार चन्द्र कलेय कीत्ति
सुकेत की तुलिओ ॥ ८ ॥
राम रूप स्वधम्म सिक्खिअ
दान दप्प दधीचि रक्खिअ

सुकवि नव जयदेव
भनिस्रो रे ॥ ६ ॥
देवसिंह नरेन्द नन्दन
सत्रु नरवइ कुल निकन्दन
सिंह सम सिवसिंह राया
सकुल गुनक निधान गनिस्रो रे ॥१०॥

(दृष्टकूट)

२५८

हरि सम आनन हरि सम लोचन
हरि तहाँ हरि वर आगी।
हरिहि चाहि हरि हरि न सोहावए
हरि हरि कए उठि जागी ॥
माधव हरि रहु जलधर छाई।
हरि नयनी धनि हरि घरिनी जनि
हरि हेरइत दिन जाई ॥
हरि भेल भार हार भेल हरि सम
हरिक वचन न सोहावे।
हरिहि पइसि जे हरि जे नुकाएल
हरि चढि मोर बुझावे ॥
हरिहि वचन पुनु हरि सयँ दरसन
सुकवि विद्यापति भान।
राजा सिवसिंह रूप नरायन
लखिमा देवि रमाने ॥

(२५६)

माधव आव वुझल तुअ साजे।
पच दून दह दह गुन सए गुन
से दलह कोन काजे॥
चालिस चारि काटि चौठाइ
स हम सेविआ मोरा।
स निरखत मुख पेखत चौदिस
करत जनम के ओरा॥
साठिहु मह दह विन्दु विवरजित
के स सहत उपहासे।
हम अबला अब पहुँक दोससँ
दुइ विन्दु करब गरासे॥
नव घुदा दए नवए वाम कए
से उर हमर परान।
कपटी बालमु हेरि न हेरए
कारन के नहि जान॥
भनइ विद्यावति सुनु वर जौवति
ताहि करथि के बाधा।
अपन जीव दए परक वुझाइअ
नाल कमल दुइ आधा॥

(२६०)

कुसुमित कानन कुंजे बसी।
नयनक काजर घोरि मसी॥

नौमि दसाह एक मिलु कामिनि
सुकवि विद्यापति भाने ॥

(बाल विवाह)

२६२

पिया मोर बालक हम तरुनी ।
कोन तप चुकलाह भेलौंह जननी ॥
पहिर लेल सखि एक दछिनक चीर ।
पिया के देखैत मोर दगध शरीर ॥
पिया लेली गोद कै चललि बजार ।
हटियाक लोग पूछे के लागु तोहार ॥
नहि मोर देवर कि नहि छोट भाई ।
पुरुब लिखल छल बालमु हमार ॥
बाटरे बटोहिया कि तुहु मोरा भाई ।
हमरो समाद नैहर लेन जाऊ ॥
कहिहुन बबा के किनए धेनु गाई ।
दुधवा पियाइके पोसता जमाइ ॥
नहि मोर टका अछि नहि धेनु गाई ।
कौनइ विधि सें पोसब जमाई ॥
भनइ विद्यापति सुनु ब्रजनारी ।
धीरज धरह त मिलत मुरारी ॥

मासु दोसरि किछुओ नहि जान ।
आँख रतौंधी सुनए नहिं कान ॥
जागह पथिक जाह जनु भोर ।
राति अँधार गाम बड चोर ॥
मरमहु भोरि न देअ कोतवार ।
काहु न केओ नहि करए विचार ॥
अधिप न कर अपराधहु साति ।
पुरुष महत सब हमर सजाति ॥
विद्यापति कवि यह रस गाव ।
उकुतिहु अबला भाव जनाव ॥

(विद्यापति की मृत्यु)

(२६५)

दुलहि तोहरि कतए छथि माय ।
कहु न ओ आबथु एखन नहाय ॥
वृथा बुझथु संसार विलास ।
पल पल नाना तरहक त्रास ॥
माय बाप जौं सद्गति पाब ।
संतति कौं अनुपम सुख आब ॥
विद्यापतिक आयु अवसान ।
कातिक धवल त्रयोदसि जान ॥

॥ इति ॥